जनता पार्टी का जन्म

सन् 1967 में कांग्रेस पार्टी से अलग होते ही चौधरी चरण सिंह ने कांग्रेस की एक विकल्प पार्टी बनाने पर गम्भीरता से सोचना शुरू कर दिया था। 23 अप्रैल सन् 1967 को अपने एक पत्र में उन्होंने लिखा था कि "कांग्रेस की नेता-मंडली में अब कोई ऐसा आदमी नहीं रह गया है, जो गलत काम करने वाले आदमियों पर लगाम लगा सके।" इसी मानसिकता के साथ उन्होंने संयुक्त विधायक दल का नेतृत्व स्वीकार कर पहली बार उत्तर प्रदेश में मुख्य मंत्री का पद सम्भाला। उनकी निश्चित राय थी कि कांग्रेस देश के विकास में बुरी तरह असफल ही नहीं हो रही थी, वह पूंजीपरक नीतियों का अनुसरण कर भारत की आबादी के अस्सी प्रतिशत ग्रामवासियों का धड़ल्ले से अनादर कर रही थी। सन् 1967 के आंकड़ों के अनुसार देश में गरीबी, बेरोजगारी और आर्थिक असमानता आजादी के समय से कहीं अधिक बढ़ गयी थी। इसका मुख्य कारण देश के कर्णधारों द्वारा जो गांव के निवासी नहीं थे, कृषि के उत्पादन तथा श्रम-पूरक घरेलू कुटीर उद्योगों पर अपेक्षित ध्यान नहीं देना था। उस समय के सुप्रसिद्ध राजनैतिक विचारक डा० राममनोहर लोहिया ने भी उन्हीं दिनों यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया था कि कांग्रेस चालीस प्रतिशत से कम मतों के बल पर शासन-व्यवस्था सम्भाल लेती है। शेष साठ प्रतिशत वोट विभिन्न विरोधी दलों में बंट जाते है। डा० लोहिया के सिद्धान्तों के अनुरूप सन् 1967 के आम चुनाव में विरोधी दलों ने मोर्चा बनाने की कुछ कोशिश की, जिसके फलस्वरूप देश के आठ राज्यों में विरोधी दलों की संयुक्त विधायक दल के रूप में सरकारें बनीं। उत्तर प्रदेश में भी चौधरी चरण सिंह ने संयुक्त विधायक दल का कालक्रम से नेतृत्व किया। वह सरकार विभिन्न घटकों की अनुभवहीनता के कारण अल्पकाल तक ही चल पायी। लेकिन तब तक की वह सर्वश्रेष्ठ, कल्याणकारी और प्रशासन में समर्थ सरकार साबित हुई। सच तो यह है कि विभिन्न दलों की आपसी स्पर्धा के साथ-साथ कांग्रेस के दुरभि-संन्धि के कारण वह जल्दी ही भंग हो गयी। तब चौधरी चरण सिंह को और सोचना पड़ा। उन्होंने कांग्रेस के राष्ट्रीय विकल्प के बारे में तेजी से काम करना शुरू किया। उनके प्रयत्न के फलस्वरूप 11 नवम्बर 1967 को इन्दौर में विभिन्न राज्यों के कई प्रमुख भूतपूर्व कांग्रेसी नेता मिले और वहां भारतीय क्रान्ति दल का जन्म हुआ। इसके पहले ये लोग जन कांग्रेस नाम के तत्त्वावधान में काम कर रहे थे। जन कांग्रेस शब्द में

सड़ान्ध "कांग्रेस" की बू थी। इसलिए उसको त्याग कर क्रान्ति दल नाम रखा गया—वह दल जो देश में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सके। सभी चाहते थे कि दूरदर्शी और शक्तिशाली नेता चौधरी चरण सिंह भारतीय क्रान्ति दल के अध्यक्ष बनें, लेकिन चौधरी साहब ने बिहार के सुप्रसिद्ध समाजवादी कांग्रेसी श्री महामाया प्रसाद सिंह को सर्वसम्मति से अध्यक्ष निर्वाचित कराया। बाद में महामाया बाबू ने त्यागपत्र दे दिया, तब चौधरी चरण सिंह ने 23 मार्च 1969 को अध्यक्ष का स्थान स्वीकार किया।

सन् 69 के आम चुनावों में भारतीय क्रान्ति दल को बिल्कुल नया संगठन होते हुए भी उत्तर प्रदेश में 98 सीटें मिलीं। कांग्रेस को पूर्ण बहुमत नहीं मिला था। बहुत तोड़-फोड़ करने के बाद कांग्रेस की सरकार बन पायी, जो टिकाऊ नहीं साबित हुई। तब तक राष्ट्रपति के चुनावों को लेकर कांग्रेस पार्टी ही भंग हो गयी। बुनियादी कांग्रेस संगठन कांग्रेस बन गयी और श्रीमती इन्दिरा गांधी ने बाबू जगजीवन राम को अध्यक्ष बना कर अपने नाम की नयी कांग्रेस बनाई। सन् 1971 में स्थिति यह आई कि दोनों कांग्रेस के नेता चौधरी चरण सिंह को नेता मान कर उत्तर प्रदेश में सरकार बनाने की पहल करने लगे। अन्ततः इन्दिरा कांग्रेस के सहयोग से उन्होंने सरकार बनायी। इन्दिरा कांग्रेस की यह चाल थी। इन्दिरा कांग्रेस ने शीघ्र ही क्रान्ति दल के इन्दिरा कांग्रेस में विलय का प्रस्ताव किया। उसे चौधरी साहब ने इन्कार कर दिया। उन्होंने विकल्प दल के अपने प्रयत्न में ढील नहीं दी थी। 29 अगस्त 1974 को उनके प्रयत्न के बाद नतीजा सामने आया, जब भारतीय क्रान्ति दल, स्वतंत्र पार्टी, संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी (राजनारायण), उत्कल कांग्रेस (बीजू पटनायक), राष्ट्रीय लोकतान्त्रिक संघ (बलराज मधोक), किसान मजदूर पार्टी तथा पंजाबी खेती बारी यूनियन ने अपने-अपने अस्तित्व को विलय कर भारतीय लोक दल को स्थापित किया। चौधरी चरण सिंह नयी पार्टी के सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुन गये। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में यह कहा कि "27 वर्ष की स्वतंत्रता और देश में अपना शासन होने के बावजूद भी देश ऐसी अव्यवस्था में पहुंच गया है कि उसकी प्रतिष्ठा सबसे नीचे स्तर पर पहुंच गयी है। आज बाहर के देश हमारे अन्दरूनी मामलों में दखल दे रहे हैं और अनुशासनहीनता प्रत्येक कार्यालय और संस्था पर अड्डा जमाये हुए हैं।...लगभग प्रत्येक वर्ग राष्ट्रीय हित को भुलाकर अपने व्यक्तिगत स्वार्थ को आगे बढ़ाने में लगा हुआ है। अमीर और गरीब के बीच की खाई और बढ़ने के साथ बेरोजगारी तेजी से बढ़ती चली जा रही है। आज भारत विश्व की आर्थिक सीढ़ी पर सबसे नीचे है। हमारे देश में करोड़ों लोगों को दो समय का खाना भी मिलना, भले ही वह रूखा-सूखा क्यों न हो, एक विलासिता की चीज बन गया है। किसी प्रकार आदमी जी रहा है।"

उपर्युक्त क्रान्तिकारी दृष्टिकोण के लक्ष्य पर भारतीय लोक दल की स्थापना

कांग्रेस के राष्ट्रीय विकल्प की शुरूआत साबित हुई। लेकिन प्रमुख राजनैतिक दल अभी भारतीय लोक दल से बाहर थे। उन्हें लोक दल में विलय कराने के लिए चौधरी साहब प्रयत्नशील हुए। आपातकाल की घोषणा तक वे पूरे मनोयोग से इस काम में लगे रहे।

आपातकाल की घोषणा के कुछ समय पहले कांग्रेसी भ्रष्टाचार के खिलाफ गुजरात की विधान सभा को भंग करने की मांग ने एक आन्दोलन का रूप ग्रहण कर लिया। उसको नेतृत्व दिया भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने। उन्होंने इसके लिए दिल्ली में आमरण भूख हड़ताल भी की। दिल्ली का सिंहासन डोल गया। विधान सभा भंग हुई और वहां नया चुनाव हुआ। चुनाव में कांग्रेस के खिलाफ एक संयुक्त मोर्चा बनाया गया। उसमें सफलता मिली पर, उतनी नहीं, जितनी आशा थी। मोर्चे की अनुपयोगिता देखकर एक दल बनाने का चौधरी साहब ने फिर आह्वान किया। विपक्ष के कई प्रधान दल जैसे पुरानी कांग्रेस, जनसंघ, समाजवादी पार्टी आदि एक विरोधी दल बनाने पर सहमत नहीं हुए थे। पुरानी कांग्रेस के नेता मोरारजी भाई का यह तर्क था कि पुरानी कांग्रेस ही राष्ट्रीय कांग्रेस की सही उत्तराधिकारी है। उसके अन्तर्गत कितने ट्रस्ट तथा संस्थाएं हैं, जिनका अपना विधि-विधान है। इसलिए उसका विलय किसी नई पार्टी में कानून सम्भव नहीं। शायद उनके मन का यह चोर था कि सभी पुरानी कांग्रेस में ही विलय करें। दूसरी प्रमुख संस्था जनसंघ थी। वह सुसंगठित थी तथा सुनिश्चित आदर्श को लेकर काम करती थी। उसके हर स्तर पर कार्यकर्त्ताओं का संगठन शक्तिशाली था। अधिकांश कार्यकर्त्ता राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से प्रशिक्षित थे। वे विशद्ध भारतीयता के हामी थे। कांग्रेस की समझौतावादी और दिखावे की राजनीति से उनका तालमेल बैठना कठिन था। समाजवादी दल का राज-नारायण गुट पहले से ही लोकदल में शामिल हो चुका था। शेष अपने को डाक्टर लोहिया का कट्टर अनुयायी बताकर किसी भी ऐसे दल में, जिसे वह दक्षिणपंथी समझते थे, विलय के सर्वथा विरोध में थे। कम्युनिस्ट पार्टी के बाहर यही प्रधान दल थे। चौधरी चरण सिंह कम्युनिस्टों के अतिरिक्त दूसरे सभी दलों को, दायें-बायें वालों को मिलाकर, एक दल बनाने को बहुत उत्सुक थे। उन्होंने लोकनायक जयप्रकाश नारायण से अनुरोध किया कि संगठन कांग्रेस, जनसंघ तथा पूरी सोशलिस्ट पार्टी को वह भारतीय लोक दल में शामिल करा कर उसका नेतृत्व ग्रहण करें। जे० पी० भी तब तक विरोधी दलों के एक संघीय दल के गठन के पक्ष में ही थे। यह मोर्चे वाली बात ही थी, जो गुजरात में बहुत सफल नहीं हुई थी। फिर भी दलगत राजनीति से सर्वथा अलग की अपनी "सम्पूर्ण क्रान्ति" की विचारधारा में जे० पी० ने एक दल बनाने पर उस समय बहुत जोर नहीं दिया। वे बिहार छात्र आन्दोलन द्वारा "सम्पूर्ण क्रान्ति" को ही जीवन्त रूप देने में व्यस्त रहे। उनका स्वास्थ्य भी क्षीण था। ऊपर से

पटना में छात्र आन्दोलन के एक जलूस का नेतृत्व करते समय पुलिस ने उन पर बर्बर लाठी चार्ज किया था। इससे उनका स्वास्थ्य और अधिक खराब हो चला था। लेकिन तब तक घटना क्रम तेजी से एक नये मोड़ पर पहुंचा, जिसका जिक्र पिछले परिच्छेद में विस्तार से किया जा चुका है। अपनी कुर्सी को न छोड़ने के लिए श्रीमती गांधी ने 25 जून 1975 को आपातकाल की घोषणा कर दी और देश के सभी शीर्षस्थ नेताओं को रातोंरात गिरफ्तार कर जेल में ठूंस दिया। इससे विकल्प दल बनाने का चौधरी चरण सिंह का प्रयत्न उस समय रुक गया।

7 मार्च 1976 को 'एम्नेस्टी इन्टरनेशनल' की रिपोर्ट पर अशोक मेहता आदि नेताओं के साथ चौधरी चरण सिंह भी तिहाड़ जेल से अचानक रिहा कर दिए गये। जेल में उन्होंने विरोधी दल के गिरफ्तार कांग्रेसी नेताओं के साथ, जिनमें अकाली दल के श्री प्रकाश सिंह बादल और जनसंघ के श्री नानाजी देशमुख थे, दिनांक 8 फरवरी 76 को विकल्प दल की एक योजना की बैठक की ही थी। पिछले परिच्छेद में उसे अंकित किया गया है। बाहर आकर वे विकल्प दल की स्थापना में जी-जान से जुट गये। उनका निश्चय था कि कांग्रेस का विकल्प अगर अब नहीं बना तो देश इंका की कुनीतियों से रसातल को पहुंच जायेगा। आपात काल की यातनायें तो वह भुगत ही रहा था। चौधरी साहब हैरान थे कि विभिन्न राजनीतिज्ञों को राष्ट्रीय संकट की घड़ी में भी देश से अधिक अपने संकीर्ण स्वार्थों की चिन्ता थी।

लोकनायक जयप्रकाश नारायण मरणासन्न अवस्था में दिनांक 12 नवम्बर 1975 को जेल से पैरोल पर छोड़ दिए गये थे। कहा जाता है कि उनकी अन्त्येष्टि की तैयारी पटना में सरकारी तौर पर कर दी गई थी। जे० पी० जेल से निकल कर सीधे अस्पताल पहुंचे। चौधरी चरण सिंह ने जेल से छूटने के बाद एक बैठक बुलायी, जिसमें विकल्प दल बनाने के लिए एक समिति का गठन किया गया। श्री एन० जी० गोरे उस समिति के संयोजक मनोनीत किए गये। श्री शान्ति भूषण, श्री ओ० पी० त्यागी सदस्य थे। श्री एच० एम० पटेल भी सदस्य थे। उस समिति ने लोकनायक जे० पी० से सम्पर्क स्थापित कर एक दल बनाने के लिए उनका आशीर्वाद भी प्राप्त किया। जे० पी० ने आशीर्वाद दिया, यद्यपि तब भी उनकी मानसिकता संघीय दल के पक्ष में ही थी। दिनांक 4-5 अप्रैल को चौधरी चरण सिंह ने भारतीय लोक दल की एक बैठक बुलायी। उसमें दल ने निश्चय किया कि वह विकल्प का एक दल बनाने के लिए अपना सर्वस्व त्यागने को तैयार है। 22-23 मई को बम्बई में इस संबंध में प्रमुख नेताओं की दूसरी बैठक हुई। उसमें भी एक दल बनाने पर सबकी सहमति नहीं हो सकी। चौधरी चरण सिंह ने तब लोकनायक से वस्तु-स्थिति का दिग्दर्शन कराते हुए एक दल बनाने का जोरदार अनुनय किया। जे० पी० ने 26 मई को प्रमुख दलों के विलय की प्रस्तावना तैयार की और जून के अन्त में उनका एक सम्मेलन

बुलाया। 30-31 मई को भारतीय लोक दल की कार्यकारिणी ने जे० पी० से दुबारा अनुरोध किया कि शेष दलों से विलय के लिए और जोर दें। उधर संगठन कांग्रेस की गुजरात शाखा तथा पश्चिम बंगाल शाखा ने श्री बाबू भाई पटेल और श्री प्रताप चन्द्र चन्दर के निर्देशन में विलय के विरोध में प्रस्ताव पारित कर दिया। यही स्थिति बिहार, उड़ीसा और आसाम में आई। तब 8 जुलाई 1976 को चौधरी चरण सिंह ने दिल्ली में एक बैठक बुलायी, जिसमें एन० जी० गोरे, ओ० पी० त्यागी, अशोक मेहता, भानु प्रताप सिंह आदि ने भाग लिया। उस बैठक में भी कोई निर्णय नहीं लिया जा सका। यह कहा गया कि बहुत से नेता अभी जेलों में बन्द हैं और उनके बिना विलय पर कोई निर्णय सम्भव नहीं है। चौधरी चरण सिंह का यह सुझाव कि जेलों से उनकी राय लिखित रूप में मंगा ली जाय, स्वीकार नहीं किया किया गया। 8 जुलाई की शाम को चौधरी चरण सिंह ने दिशा-निर्देशन समिति के अध्यक्ष श्री एन० जी० गोरे को यह लिखा :

"मैं यह बात दुहराना चाहता हूं कि समय का बहुत महत्त्व है, यद्यपि कुछ दलों के लोग इस दबाव को मेरा व्यक्तिगत स्वार्थ समझते होंगे, आप उन्हें विश्वास दिलायें कि नये दल का मैं नेतृत्व किसी तरह स्वीकार नही करूंगा। जैसे ही नये दल का गठन हो जायेगा, यदि मैं स्वयं को राजनीतिक नेता होने के अयोग्य पाऊंगा, तो सदा के लिए राजनीति से संन्यास ले लूंगा। लेकिन प्रजातंत्र की सफलता के लिए कांग्रेस का प्रजातान्त्रिक विकल्प बनाना अत्यावश्यक है।"

घटनाक्रम से बिल्कुल साफ था कि जहां दूसरे दल विकल्प पार्टी के लिए अनिश्चितता की स्थिति से गुजर रहे थे ? वहां दूरदर्शी चौधरी चरण सिंह विकल्प के लिए व्याकुल थे। उन्होंने अब भी अपना प्रयास ढीला नहीं किया। 16-17 दिसम्बर को नई दिल्ली में एक महत्त्वपूर्ण बैठक हुई। उसमें संगठन कांग्रेस ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि अपने ट्रस्ट सम्पत्ति आदि के बारे में वह जनरल बॉडी की बैठक बुलाकर कोई निश्चित राय ले सकते हैं। संगठन कांग्रेस ने यह भी सुझाव दिया कि नये दल का, अगर वह बनता है, नाम जनता कांग्रेस रखा जाय। समाजवादी दल और जनसंघ अब तक विलय के लिए सहमत हो चुके थे। उन्होंने प्रस्तावित नाम पर सहमति भी प्रकट की। चौधरी चरण सिंह को "कांग्रेस" शब्द पर घोर आपत्ति थी। "कांग्रेस" उनकी राय में भ्रष्टाचार का पर्याय बन चुका था। इस नाम के सुझाव से यह भी ध्वनि व्यक्त हुई कि मोरार जी भाई देसाई दल का अध्यक्ष बनना चाहते हैं। चन्द्रशेखर अभी तक जेल में थे। वे मोरार जी के नेतृत्व पर किसी तरह सहमत नहीं हो रहे थे। चौधरी चरण सिंह ने 16 जनवरी 1977 को जे० पी० को एक पत्र में पुनः आग्रहपूर्वक लिखा :

"नये दल का गठन हो सकेगा, यह विश्वास जनता को हम नहीं दे पा रहे हैं।

संगठन कांग्रेस वाले रोड़ा अटका रहे हैं। यदि वह सहमत भी हो जाय, तो फरवरी गुजर जायेगी, जबकि आम चुनाव सम्भावित है। अतः दल का गठन चुनाव से पूर्व हो जाना आवश्यक है, क्योंकि चुनाव घोषणा के बाद का वह प्रभाव नहीं बन पायेगा, जो पहले बनने से होगा।"

अचानक श्रीमती इन्दिरा गांधी ने 18 जनवरी 1977 को चुनाव कराने की घोषणा कर दी। विरोधी पक्ष इससे बड़े असमंजस में पड़ा। 19 जनवरी को मोरार जी भाई देसाई जेल से छोड़ दिए गए। श्री पीलू मोदी जो विकल्प दल बनाने में चौधरी चरण सिंह की बड़ी मदद कर रहे थे, मोरार जी से मिलने उनके निवास पर गये। मोरार जी भाई ने मोदी से तपाक से कहा कि "अच्छा हुआ चुनाव घोषित हो गया, विलय के पाप से बच गये। अब मोर्चा बनाकर लड़ लिया जायेगा"। इसे सुन कर चौधरी साहब ने कहा, "विलय हमारा एक सूत्री कार्यक्रम है, कोई मोर्चाबन्दी नहीं होगी।" उसी रात मोरार जी के नयी दिल्ली वाले निवास 5 डूप्ले रोड पर सभी प्रमुख दलों के नेताओं की बैठक हुई। उसमें चौधरी चरण सिंह, अटल बिहारी वाजपेयी, सुरेन्द्र मोहन, पीलू मोदी, नानाजी देशमुख, एन० जी० गोरे और अशोक मेहता शामिल हुए। श्री मोरार जी देसाई ने स्वयंमेव उस बैठक की अध्यक्षता कर ली। बैठक में मोरार जी भाई ने मोर्चा बनाने पर ही जोर दिया। चौधरी चरण सिंह तथा एन० जी गोरे ने उत्तेजित होकर विलय की मांग की। तब मोरार जी देसाई नयी पार्टी के अध्यक्ष पद के लिये अड़ गये।

भारतीय लोक दल ने विकल्प का दल बनाने के लिये अथक प्रयास किया था। वह चौधरी चरण सिंह को अध्यक्ष बनाने के पक्ष में था। क्योंकि चौधरी चरण सिंह का व्यक्तित्व भारतीय जनमानस पर अक्षुण्ण प्रभावकारी था। लोक दल चौधरी चरण सिंह के अनुरोध को भी कि मोरार जी भाई अध्यक्ष मान लिये जायें, तब सुनने को तैयार नहीं था।

चौधरी चरण सिंह ने ऐसे मोड़ों पर हमेशा महान देशभक्ति का परिचय दिया है। महज अध्यक्ष पद के कारण एक दल न बन सके यह हास्यास्पद था। उन्होंने अस्वस्थ जे० पी० से दिल्ली आने का आग्रह किया। दिल्ली आकर जे० पी० ने स्थिति को समझ कर ऐलान किया कि "एक दल नहीं बनाया जाता तो मैं चुनाव प्रचार नहीं करूंगा।" मोरार जी भाई अध्यक्ष पद के अतिरिक्त कुछ भी स्वीकार करने तैयार नहीं थे। वे उम्र में जे० पी० से बड़े थे। जे० पी० ने निर्णय दिया, "मोरार जी नये दल के अध्यक्ष, चौधरी चरण सिंह उपाध्यक्ष होंगे। क्योंकि चौधरी चरण सिंह का उत्तर भारत पर सर्वाधिक प्रभाव है। अतः वहां के चुनाव प्रचार, प्रत्याशियों का चयन और समस्त रणनीति वही तय करेंगे।"

चौधरी चरण सिंह ने अपनी विकल्प की दल बनाने की आशा को फलीभूत होते

देख लोक दल को जे० पी० के निर्णय के पक्ष में राजी कर लिया। इस तरह उनका तीन साल लम्बा प्रयत्न अपने लक्ष्य में सफल हुआ। 23 जनवरी सन् 1977 को मोरार जी भाई के निवास पर जनता पार्टी के गठन की घोषणा विधिवत कर दी गयी।

आपातकाल के नादिरशाही अत्याचारों तथा श्रीमती इन्दिरा गांधी के स्वांग से पीड़ित कई दल चुनावों का बहिष्कार करने का भी सोच रहे थे। चौधरी साहब ने उन्हें समझा कर अनिश्चितता के इस वातावरण को समाप्त कर दिया। सभी दल नवगठित जनता पार्टी के तत्त्वावधान में चुनाव लड़ने को तैयार हो गये। चुनाव आयोग ने नवगठित पार्टी को मान्यता नहीं दी। अतः चुनाव भारतीय लोक दल के नामांकन पत्र व सदस्यता तथा झंडे पर ही लड़ा गया। उत्तर भारत में चौधरी चरण सिंह ने चुनावों का नेतृत्व किया। उत्तर भारत में इन्दिरा कांग्रेस चारों खाने चित्त हुई। दक्षिण-पश्चिम भारत में भी जनता का पक्ष प्रबल रहा। वहां के चुनावों का नेतृत्व अध्यक्ष श्री मोरार जी देसाई कर रहे थे। जनता पार्टी के पास धन की कमी थी, जबकि इन्दिरा कांग्रेस को पूंजीपतियों ने धन बटोरने में हर सम्भव मदद की, जिससे उन्होंने चुनाव में धन पानी की तरह बहाया। फिर भी जनता पार्टी को मुख्यतया चौधरी चरण सिंह के कारण अभूतपूर्व सफलता मिली। इस कारण 26 मार्च 1977 को जनता पार्टी के शासन की स्थापना हुई। कांग्रेस की कुनीतियों के केन्द्र की नींव स्वदेश की आजादी के बाद पहली बार डगमगायी।

जनता पार्टी और सरकार का विघटन

जनता पार्टी के विघटन की कहानी बड़ी मार्मिक और दुःखभरी है। पार्टी के संसद सदस्यों और प्रमुख नेताओं ने केन्द्र सरकार बनाने के पहले दिनांक 26 मार्च 1977 को महात्मा गांधी की समाधि पर समवेत रूप में शपथ ली थी कि वे किसी भी हालत में पार्टी को टूटने नहीं देंगे। चौधरी चरण सिंह उन दिनों अस्पताल में बीमार थे। शपथ समारोह में उपस्थित नहीं हो सके थे, वे फिर भी अपने को उस शपथ से प्रतिभूत मानते हैं।

उसी दिन संसदीय दल के नेता का निर्वाचन भी होने वाला था। विभिन्न दलों से आये संसद सदस्यों और नेताओं ने पुराने घटकों की आपसी प्रतिस्पर्धा से बचने के लिए लोकनायक जयप्रकाश और आचार्य जे० बी० कृपालनी पर नेता का मनोनयन सौंप दिया था। उत्तर भारत में लोकनायक के व्यापक निर्देशन में चौधरी चरण सिंह ने चुनावों में तानाशाही को चारों खाने चित्त कर दिया था। यहां तक कि श्रीमती इन्दिरा गांधी भी रायबरेली से चुनाव बुरी तरह हार गयी थीं। चौधरी चरण सिंह से कहीं अधिक भूतपूर्व लोक दल के लोगों की तीव्र आकांक्षा थी कि किसानों का यह मसीहा जनता सरकार का नेतृत्व करे, जिससे सर्वाधिक शोषित देश की आबादी के अस्सी प्रतिशत ग्रामवासियों को सुखी और समृद्ध बना कर भारत को शक्तिशाली बनाने की नयी क्रांतिकारी नीति का उद्‌भव हो। संसद सदस्यों में गुप्त मतदान से नेता का निर्वाचन होता तो यही हुआ होता। लेकिन बहुमत पार्टी के अध्यक्ष श्री मोरार जी भाई देसाई उम्र में चौधरी चरण सिंह से बड़े थे, भारत सरकार में पहले प्रधान मंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू के समय से ही, एक अल्प अवधि को छोड़कर, उप-प्रधान मंत्री रहे थे। जवाहरलाल जी के बाद उनको प्रधान मंत्री का पद न देकर उनसे कनिष्ठ श्री लाल बहादुर शास्त्री और बाद में श्रीमती इन्दिरा गांधी को उस पर आसीन किया गया। इस बारे में उनके क्षोभ को सभी जानते थे। दक्षिण-पश्चिम भारत में वे चुनावों के इन्चार्ज थे। जनता पार्टी के अध्यक्ष वे थे ही। दक्षिण भारत में आपात काल के अत्याचार उतने पाशविक नहीं हुए थे, जितने उत्तर भारत में। शायद इसी-लिए श्रीमती इन्दिरा गांधी कांग्रेस को दक्षिण भारत में वह विकट हार नहीं मिलीं, जैसी उत्तर भारत में हुई। पश्चिम में गुजरात और महाराष्ट्र में जनता को बहुमत जरूर मिला। आपात काल में कैद किए जाने पर मोरार जी भाई ने जेल के एकांतवास में अभिनव आत्मविश्वास और आत्मबल का परिचय दिया था। जेल से बाहर आते

समय उनकी प्रतिष्ठा बहुत ऊंचाई पर थी। वे सोच ही नहीं सकते थे कि उनके नेतृत्व को कोई चुनौती दे सकेगा।

जनता पार्टी के तीसरे दिग्गज नेता बाबू जगजीवन राम थे। वे हरिजन कुल के थे और आजादी के साल से ही देश के हरिजनों के बड़े नेता माने जाते थे। आजादी के बाद से वह केन्द्रीय सरकार में लगातार वरिष्ठ मंत्री रहे थे। उनकी कुशाग्र बुद्धि और राजनैतिक सूझ-बूझ उच्चकोटि की मानी जाती थी। बांग्ला देश को भारतीय सेना ने वहां की मुक्ति वाहिनी की मदद कर जब स्वतंत्र कराया, तब वह हिन्दुस्तान के रक्षा मंत्री थे। उनके विरुद्ध एक महत्वपूर्ण तर्क यह था कि श्रीमती इन्दिरा गांधी के आपात स्थिति लागू करने के विधेयक को संसद में उन्होंने ही पेश किया था। लेकिन जे० पी० जैसे महान स्वतंत्रता सेनानी, अन्य शीर्षस्थ नेताओं तथा दूसरे निरपराध नागरिकों पर आपात काल में इतना जघन्य अपराध होगा, इसकी उन्होंने कल्पना भी नहीं की थी। वृद्ध जे० पी० को गिरफ्तार कर जेल में एकांतवास की यातना देना अनहोनी बात हो गयी। फ्रांस में जनरल डि-गॉल ने भी आपात स्थिति लागू की थी। वहां भी आपात स्थिति के खिलाफ सोचने भर पर ही नागरिकों को जेलों में ठूंस दिया जाता था। फ्रांस के सुप्रसिद्ध दार्शनिक और साहित्यशिल्पी ज्याँ पॉल सार्त्र आपात स्थिति लागू करने के लिए डी-गॉल के विरुद्ध धुंआधार कड़े भाषण और वक्तव्य दे रहे थे। उन्हें घोर पातकी बताते थे। प्रशासन ने जनरल डी-गॉल से सार्त्र को गिरफ्तार करने की अनुमति मांगी। जनरल डी-गॉल ने कहा, "नहीं, सार्त्र फ्रांस के रोमां रोलां हैं।" वह गिरफ्तार नहीं किए गये। यहां यह विश्वास पूर्वक कहा जा सकता है कि कुर्सी को बचाने के लिए महात्मा गांधी को भी कैद में लिया गया होता। उदार शिक्षा की कमी के कारण ऐसा करने में श्रीमती इंदिरा गांधी को किंचित् हिचक नहीं होती। इन सब कारणों से बाबू जगजीवन राम ने अपना नया दल सी० एफ० डी० (लोकतांत्रिक कांग्रेस) श्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा के सहयोग से बनाया था। आपात स्थिति के खिलाफ जनता का जोश देखकर चुनावों के घोषित होते ही श्री जगवीवन राम अपने दल-बल समेत जनता पार्टी में आ मिले। कुछ लोग आज तक इसे शुद्ध अवसरवादिता मानते हैं। जो हो, उपरोक्त तीनों विशिष्ट नेता जनता सरकार और देश को गौरवपूर्ण नेतृत्व देने में समर्थ थे। इन तीनों में किसी एक को चुनना भी सरल काम नहीं था।

गुप्त मतदान से अगर नेता का चुनाव किया गया होता, तो बहुमत की प्रतिष्ठा में हर एक के मन की गांठ कुछ दिनों में जरूर मिट जाती। प्रजातांत्रिक प्रणाली भी यही थी। लेकिन आजादी के समय राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने बहुमत समर्थित सरदार पटेल की जगह श्री जवाहरलाल नेहरू को जो प्रधान मंत्री पद के लिए मनोनीत किया था, उसी परम्परा को पकड़ा गया। जवाहरलाल स्वप्नद्रष्टा थे, सरदार ठोस

धरती के यथार्थवादी। स्वप्नद्रष्टा के आदर्श से देश में जो समस्याएं उभरीं, जैसे पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर, चीन अधिकृत उत्तरी हिमालय और पूर्वी हिमालय के भारतीय भू-भाग, उसे सभी जानते हैं। घरेलू और कुटीर उद्योगों का भारी उद्योगों के सामने विकास एकदम रुक गया, जिससे बेरोजगारी बढ़ी और कृषि उत्पादन बढ़ाने पर वह ध्यान नहीं दिया गया, जो कृषि प्रधान देश में अपेक्षित था। सरदार पटेल ने देश के लिए ऐतिहासिक काम किए। प्रधान पद से वे जाने कितना अधिक करते। शायद जनता के विभिन्न परस्पर विरोधी घटकों के तनावपूर्ण वातावरण में लोकनायक और आचार्य कृपलानी को मनोनयन वाली परिपाटी अपनानी पड़ी। इसे दुःसंयोग ही माना जायेगा कि वे श्री मोरार जी भाई और बाबू जगजीवन राम के नामों पर विचार करते रहे। चौधरी चरण सिंह ने जनता पार्टी को बनाया था, उत्तर भारत में उसे शत प्रतिशत विजय दिलायी थी, उनकी आर्थिक और प्रशासनिक प्रतिभा का लोहा भी सभी मानते थे। फिर भी प्रधान मंत्री पद के लिए उनके नाम को वह वरीयता नहीं मिली, जो प्रजातांत्रिक प्रणाली में होनी चाहिए थी।

महात्मा गांधी की समाधि पर हुए शपथ समारोह के बाद ही भूतपूर्व समाजवादी नेता श्री राजनारायण ने अस्पताल में चौधरी चरण सिंह को वस्तु-स्थिति से अवगत कराया। चौधरी साहब ने श्री राजनारायण के हाथ एक नोट लिखकर भेज दिया कि वे मोरार जी देसाई के सहयोगी के रूप में ही काम कर सकेंगे। कतिपय तत्कालीन राजनैतिक पर्यवेक्षकों का मत है कि जे० पी० और आचार्य कृपलानी बाबू जगजीवन राम की ओर अधिक झुके थे। ऐसा इसलिए था कि वे एक हरिजन को प्रधान मंत्री बना कर नयी क्रांति का सूत्रपात करना चाहते थे। चौधरी साहब के नोट ने दुविधा मिटा दी। उन्होंने मोरार जी को प्रधान मंत्री पद के लिए मनोनीत कर दिया। चौधरी चरण सिंह के विरोधियों का कहना है कि केवल आपातकाल का विधेयक संसद में पेश करने के कारण चौधरी साहब ने बाबू जगजीवन राम का विरोध नहीं किया। उनके विरोध का कारण यह एहसास भी था कि वे बाबू जगजीवन राम से उम्र में बड़े थे और उत्तर भारत में उन्हें अभूतपूर्व सफलता मिली थी। उधर जे० पी० और आचार्य कृपलानी ने मोरार जी को नेता मनोनीत करते समय पत्रकारों से यह कह दिया कि अगर दो प्रधान मंत्री हो सकते थे, तो वे दोनों को नामजद करते। यह गम्भीरता से नहीं प्रत्युत औपचारिक रूप से कहा गया था, लेकिन मनों में गांठ डालने के लिए यह काफी था, विशेषकर जब भारतीय लोकदल के भूतपूर्व सदस्य क्षुब्ध थे।

उपर्युक्त मानसिकता के साथ जनता पार्टी की सरकार ने केन्द्र में 26 मार्च 1977 को शपथ ग्रहण की और कार्यभार सम्भाला। अपने प्रति किए गये अप्रत्याशित सौहार्द्र से मोरार जी ने चौधरी चरण सिंह को दूसरे नम्बर की वरिष्ठता तथा गृह मंत्री का शक्तिशाली पद प्रदान किया। कांग्रेस की कुनीति और आपात काल के जघन्य

अपराधों एवं अत्याचारों के बाद इतनी सक्षम और स्वच्छ सरकार पाकर देश में एक कोने से दूसरे कोने तक प्रसन्नता की अभिनव लहर बहने लगी। चौधरी चरण सिंह को दूसरे नम्बर पर गृहमंत्री देखकर उत्तर भारत में खुशी के आंसू बहने लगे। सबने यह सोचा कि आपातकाल की ज्यादतियों का प्रतिकार होगा और ज्यादती करने वालों को बख्शा नहीं जाएगा। यह विश्वास भी बढ़ा कि किसानों और खेतिहर मजदूरों की दशा में अब सचमुच सुधार सम्भव हो सकेगा तथा प्रशासन लोक कल्याण की भावनाओं से तत्परता से जनता की सेवा करेगा। शासन के विभिन्न विभागों ने बड़े उत्साह से प्रशासनिक कामों का शुभारम्भ भी किया। लेकिन जनता पार्टी में विलय करके भी कोई घटक अपना पिछला रूप नहीं भूल सका। इतनी जल्दी वह भूलता भी नहीं। हर ग्रुप अपना प्रभाव बढ़ाने में लगा। हर में एक प्रधान मंत्री पद का छिपा प्रत्याशी था। वे सोचते थे कि जब श्रीमती इंदिरा गांधी बिना किसी त्याग, तपस्या या विशिष्ट गुण के इतने दिनों तक प्रधान मंत्री रहीं, तो वे क्यों नहीं हो सकते, सब प्रकट-अप्रकट अपनी गोट बिछाने लगे।

प्रधान मंत्री श्री देसाई ने अपने सार्वजनिक जीवन में ऐसा वातावरण कम देखा था। उन्होंने अपने लम्बे प्रशासनिक तथा सार्वजनिक जीवन के विविध अनुभवों से अपने लिए एक विशिष्ट कार्य-पद्धति और सोच की लीक बनायी थी, जिस पर दृढ़ता से वे अडिग रहते थे। इससे उनका स्वभाव हठी बन गया था। उनका अहम् भी काफी प्रबल था। उन्होंने लोकनायक जयप्रकाश नारायण से मिलने जाने को भी मना कर दिया था। क्योंकि जे० पी० उनसे उम्र में छोटे थे। अपने पूर्वाग्रहों के कारण वे निरन्तर बदलते प्रगतिशील युग में न समाजवादी थे, न साम्यवादी, न ही गांधी जी की तरह समानतावादी। अपने इकलौते पुत्र श्री कान्ति देसाई के संसर्गों के कारण तथा संगठन कांग्रेस के परिवेश में उन्हें पूंजीवादी परम्परा का माना जाता था। इस मान्यता का उन्हें एहसास था, क्योंकि वे भयंकर भाग्यवादी थे। अपनी वरिष्ठता और लम्बे अनुभव पर जैसे वे स्वयं कट्टर लीकवादी थे, वैसे ही दूसरों के भी होने की उनकी अपेक्षा थी। प्रधान मंत्री पद पर यहीं उनकी मूलगत चूक हुई। वे विभिन्न मत-मतान्तरों, तथा घटकों की रीति-नीति का सामंजस्य नहीं कर सके, जितना लचीला उन्हें होना चाहिए था, नहीं हो सके। उल्टे मंत्रिमंडल बनाते समय ही उन्होंने अपने भूतपूर्व संगठन कांग्रेस दल के सात सदस्यों को पूर्ण सक्षम मंत्री बनाया। दूसरे प्रधान दल भूतपूर्व जनसंघ और भारतीय लोक दल से तीन-तीन मंत्री बनाकर उन्होंने समानुपात को तोड़ा। इससे भूतपूर्व घटकों में क्षोभ का बढ़ना स्वाभाविक था।

उधर श्री चन्द्रशेखर को जनता पार्टी का अध्यक्ष बनाने में और गुल खिलाया। चौधरी चरण सिंह और उनके निकट के अनुयायी श्री कर्पूरी ठाकुर या श्री पीलू मोदी को अध्यक्ष बनाने के पक्ष में थे। श्री मोरार जी भाई और कतिपय दूसरे इससे सहमत

नहीं थे। तब चौधरी चरण सिंह ने श्री राजनारायण को चन्द्रशेखर का नाम प्रस्तावित करने को कहा। श्री चन्द्रशेखर कांग्रेस के किसी गुट विशेष से नहीं आये थे। यह भी विश्वास किया जाता था कि वे राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से सम्बधित जनसंघ के सदस्यों पर समुचित नियंत्रण रख सकेंगे। श्री चन्द्रशेखर का कोई जनाधार नहीं था। उनकी एक-मात्र उपलब्धियां यह थी कि वे "युवा तुर्क" की हैसियत से कांग्रेस में अग्रणी रह चुके थे, जहां कांग्रेस के सभापति और कार्यकारिणी के सदस्यों के खिलाफ कार्य समिति का चुनाव जीत चुके थे। आपात काल में कैद किए जाने पर जेल में वह गेरुआ वस्त्र धारण किये थे। लोकनायक के वे निकट भी माने जाते थे। इन सबसे उनकी आकांक्षायें बांसों उछलने लगी थीं। वे भी प्रधान मंत्री बनने का सपना मन ही मन पाल रहे थे। श्री चन्द्रशेखर और दूसरे पदाधिकारी अस्थायी तौर पर मनोनीत हुए थे। आगामी नवम्बर में संगठन का विधिवत् चुनाव होना तय हुआ था।

विधिवत चुनावों की तैयारी में जनसंघ ग्रुप ने बड़ी दिलचस्पी दिखायी। उन्होंने जनता पार्टी के संगठन के चुनाव में हर स्तर पर अपने कार्यकत्ताओं को पदासीन करने के लिए सभी राज्यों में बेशुमार सदस्य बनाये। व्यापारियों से इसके लिए उन्होंने चंदा भी उगाहा। कहा जाता है कि लाखों की संख्या में सदस्य बनाये गये। योजना यह थी कि मंडल, जिला से लेकर उच्चतम स्तर तक उनके कार्यकर्त्ता पदाधिकारी बन जाएं और नाना जी देशमुख को पार्टी का अध्यक्ष बनाया जाय। चौधरी चरण सिंह को यहीं भूतपूर्व जनसंघियों की नीयत पर अविश्वास पैदा हुआ। उनके भूतपूर्व लोक दल के अनुयायी तो रोष से भरे ही जा रहे थे। सवाल अल्पसंख्यकों का भी था कि उनकी आंखों में जनता पार्टी की छवि भूतपूर्व जनसंघी सदस्यों को संगठन के पदों पर देख कर क्या उभरेगी ?

अध्यक्ष चन्द्रशेखर कुछ दिनों तक राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की दोहरी सदस्यता के विरुद्ध वक्तव्य भी देते रहे। लेकिन जब उन्होंने देखा की संगठन पर भूतपूर्व जन-संघी दल हावी हो जायेगा, तब अपना अध्यक्ष पद सुरक्षित रखने के लिए वे दोहरी सदस्यता की अपनी तीखी आलोचना भूल कर उनकी ओर झुकने लगे। यह खतरे की घंटी थी। चौधरी चरण सिंह इससे सशंकित हुए और भूतपूर्व समाजवादी श्री मधु लिमये और राजनारायण जनसंघी ग्रुप के विरुद्ध ताल ठोंक कर खड़े हो गये। जन-संघी ग्रुप ने भी उत्तर दिया। इस तरह जनता पार्टी के घटकों की अन्दरूनी राजनीति और कलह धोबी पछाड़ बनकर बाहर प्रकट होने लगी। समाचार पत्रों में यह खबरें शीर्ष लाइनों में छपने लगीं।

उधर आठ राज्यों में विधान सभा के चुनाव कराये गये थे। उसमें जनता पार्टी बहुमत में निर्वाचित हुई। चौधरी चरण सिंह के भूतपूर्व लोक दल ग्रुप और जनसंघ ग्रुप के सदस्य अधिक चुने गये थे। दोनों घटकों ने अपने प्रभाव क्षेत्र के अनु-

सार तालमेल बैठा कर राज्यों के मुख्यमंत्री पदों पर समझौता कर लिया। हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार और उड़ीसा में लोक दल ग्रुप के मुख्यमंत्री बने और हिमाचल प्रदेश, राजस्थान तथा मध्य प्रदेश में जनसंघ ग्रुप के। बिहार में भूतपूर्व जनसंघ के निर्वाचित सदस्य अधिक संख्या में थे। लेकिन जनसंघ ने वहां श्री कर्पूरी ठाकुर का समर्थन किया, जो लोकदल से आये थे। इस तर्क का उल्लेख करते हुए श्री लालकृष्ण अडवाणी ने, जिन्होंने जनता सरकार के भंग होने के बाद चौधरी चरण सिंह के खिलाफ 'विश्वासघात' नामक पुस्तक में विष वमन किया, लिखा है कि "वास्तविकता यह है कि जो भी व्यक्ति मुख्यमंत्री बने, उनका चुनाव स्वाभाविक रूप से और विधायकों द्वारा स्वतंत्र रूप से किया गया था। यह धारणा कि मुख्यमंत्री पद बांट लिए गये असत्य है।"

जो भी हो, उक्त समझौते से भूतपूर्व संगठन कांग्रेस वाले बहुत चिढ़े, यद्यपि प्रधानमंत्री मोरार जी भाई ने ही केन्द्रीय मंत्रिमंडल में सबसे पहले समानुपात का सिद्धान्त तोड़ा था। अध्यक्ष चन्द्रशेखर पहले ही उत्तर प्रदेश विधान सभा के प्रत्याशियों की लिस्ट में भारी मनमानी कर चुके थे। अब संगठन में उन्होंने हरियाणा को छोड़ कर कहीं भी भूतपूर्व लोक दल के सदस्यों को राज्य संगठन का अध्यक्ष नहीं नामांकित किया। राज्य के चुनाव पैनलों में भी उन्हें अपेक्षित स्थान नहीं दिया गया। बंगाल, बिहार और राजस्थान में संगठन कांग्रेस ग्रुप के लोग अध्यक्ष बनाये गये। दिल्ली, पंजाब और मध्य प्रदेश में भूतपूर्व जनसंघी अध्यक्ष बने। शेष राज्यों में समाजवादी ग्रुप को अध्यक्ष पद मिला। जिलों की तदर्थ समितियों में भी भूतपूर्व लोक दल ग्रुप के कम लोग लिए गये। इससे उन राज्यों में जहां, लोक दल ग्रुप के मुख्यमंत्री थे, काफी अव्यवस्था और अराजकता फैली। चौधरी चरण सिंह अपने पुराने अनुयायियों की इतनी उपेक्षा पर नहीं चिढ़ते, तभी आश्चर्य होता। उन्हें लगा और बड़ी दूर तक यह सम्भव भी है कि श्री चन्द्रशेखर इस नीति को अपना कर पद ही नहीं सुरक्षित रखना चाहते थे, उनकी निगाह अपनी छिपी आकांक्षा की मूर्त रूप देने के लिए अपना प्रभाव क्षेत्र बढ़ाने पर भी टिकी थी।

उधर संगठन कांग्रेस के भूतपूर्व सदस्यों की ईर्ष्याग्नि गृहमंत्री चौधरी चरण सिंह की बढ़ती हुई ख्याति से धधक रही थी। चौधरी साहब ने आपात काल के अत्याचारों ओर अन्यायों की विधिवत् जांच करा कर दोषी पाये जाने वाले लोगों को दण्ड दिलाने के लिये कई जांच आयोग नियुक्त कराये। इनमें सबसे प्रमुख भारत के भूतपूर्व प्रधान न्यायाधीश श्री शाह का शाह आयोग था, जो श्रीमती इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्री की हैसियत से किये गये अवैध कामों और अत्याचारों की जांच कर रिपोर्ट देने के लिए नियुक्त किया था। श्रीमती इंदिरा गांधी ने स्वार्थान्धता से आपातकाल को अवैध रूप से लागू किया था और ऐसे जघन्य अत्याचारों को प्रश्रय दिया था, जो दासता

काल में अंग्रेजों द्वारा किये गये नृशंस अत्याचारों से भी अधिक पाशविक थे। संसद में एक प्रसंग में उन्होंने एक बयान दिया था कि विरोधी दल मुझे स्वेच्छाचारी कहते हैं। अब सबको मालूम होगा कि स्वेच्छाचार क्या है ? उसके कारण देश की निरीह जनता आतंकित जरूर हुई, यह चौधरी चरण सिंह जैसे दृढ़ तथा कुशल प्रशासक का ही बूता था, जो श्रीमती इंदिरा गांधी को उनकी सही जगह दिखा सकता था। वे चाहते थे कि श्रीमती गांधी को मीसा में ही गिरफ्तार कर उसी एकान्त कक्ष में कैद किया जाय, जहां उन्होंने लोकनायक जयप्रकाश नारायण को या राजमाता सिन्धिया को रखा था। प्रधान मंत्री देसाई इससे सहमत नहीं थे। वह श्रीमती गांधी के प्रति शिष्टता बरतना चाहते थे। यहां तक कि शाह आयोग की रिपोर्ट प्राप्त होने पर उन्होंने श्रीमती गांधी के "ट्रायल" के लिए स्पेशल कोर्ट नहीं बनाया। वे साधारण अदालतों द्वारा उनकी कार्यवाही कराना चाहते थे, जिसमें न जाने कितना समय लगता।

श्रीमती इंदिरा गांधी अपने अपराधों को जानती थी। अपने से अधिक वे अपने पुत्र स्वर्गीय संजय गांधी के अपराधों से चिन्तित थी। वे सब के पास दौड़ी। मोरार जी भाई ने, यह कहा जाता है, उन्हें उनके लिये आश्वस्त कर दिया था, उनके पुत्र संजय के लिये नहीं। गुप्ता आयोग ने संजय के विरुद्ध आर्थिक अनियमितताओं और भ्रष्टाचार की रिपोर्ट दी थी। चौधरी चरण सिंह शिष्टता के स्वयं बड़े कायल हैं। शिष्टाचार पर उन्होंने एक विचारपूर्ण पुस्तक भी लिखी है। लेकिन श्रीमती इंदिरा गांधी ने एक लाख से ऊपर लोगों को जेल भेजा था, उनके परिवारों को सताया था, देश के महान स्वतंत्रता सेनानियों को अकारण एकान्त कोठरियों में सड़ाया था। यहां तक कि लोकनायक जयप्रकाश नारायण को उनके अस्वस्थ होते हुए भी एकान्तवास में कैद रखा था। ऐसे व्यक्ति को क्षमा करने का यह अर्थ था कि कानून भी ऊंच और नीच के लिए बराबर नहीं। इस सिद्धान्त का प्रधानमंत्री श्री देसाई द्वारा सही प्रतिपादन न होते देख चौधरी चरण सिंह को हार्दिक दुःख हुआ। शायद इसी शिष्टता की लहर में मजिस्ट्रेट ने श्रीमती गांधी को अपराध की जांच के दौरान पुलिस रिमाण्ड मांगे जाने पर छोड़ ही नहीं दिया, उन्हें निरपराधी भी घोषित कर दिया। रिमाण्ड न देना, विशेष कर जब उच्चतम न्यायालय के भूतपूर्व प्रधान न्यायाधीश के जांच आयोग से अपराध होने की संस्तुति हुई थी, कानून के सर्वथा विरुद्ध था। वर्तमान न्याय-पद्धति के इतिहास में ऐसा कभी हुआ नहीं था। बहुतों को विश्वास है और चौधरी चरण सिंह को भी इधर कुछ जानकारी मिली है कि मजिस्ट्रेट ने वह गलत काम प्रधानमंत्री श्री देसाई के इशारे पर किया था। इतना तो विस्मयकारी सच है कि रातोंरात एक मजिस्ट्रेट से दूसरे मजिस्ट्रेट के पास वह मुकदमा बदल दिया गया था। यह भी सच है कि जिस मजिस्ट्रेट ने श्रीमती गांधी को रिमांड न देकर छोड़ दिया, वह सिक्किम में आज उच्च न्यायाधीशों के समकक्ष पद पर है। न जाने कितनों की वरिष्ठता का उससे अतिक्रमण कराया गया है। जो हो, सच्चाई का

अनुमान लगाना ही सम्भव है अनुमान सच इसलिए लगता है कि प्रधानमंत्री श्री देसाई श्रीमती इंदिरा गांधी को आश्वस्त ही नहीं कर चुके थे, वे चौधरी चरण सिंह की उत्तरोत्तर बढ़ती ख्याति से चिढ़े से थे। श्री जगजीवन राम, श्री चन्द्रशेखर और श्री बहुगुणा भी चौधरी साहब के विरुद्ध प्रचार कर रहे थे। शायद इन्हीं कारणों से चौधरी साहब ने कान्ति देसाई के आरोपों के सत्यासत्य के जांच की मांग की। प्रधानमंत्री देसाई और चौधरी चरण सिंह के बीच दरार का पड़ना स्वाभाविक था। प्रधान मंत्री का संगठन कांग्रेस ग्रुप चौधरी चरण सिंह से गृह विभाग हटाने की मंत्रणा करने लगा। प्रधानमंत्री का दृष्टिकोण कितना गलत था, वह आज एकतंत्र और वंशतंत्र के नंगे नाच से स्वयं सिद्ध है। काश, प्रधानमंत्री जो आपात काल की यातनाओं के स्वयं भुक्तभोगी थे, चौधरी चरण सिंह की दूरदर्शिता पर पूरा ध्यान देते। तब दोनों के बीच वह दरार नहीं फटी होती।

इन्हीं दिनों श्री राजनारायण की ओर से जबर्दस्त मांग हुई कि अस्थायी अध्यक्ष की जगह कोई दूसरा अध्यक्ष बनाया जाय। संगठन के चुनावों को भूतपूर्व जनसंघ की तैयारियों के कारण सभी घटक स्थगित करना चाहते थे। वह स्थगित हो गया। लेकिन आपसी तनाव और विवाद में अस्थायी अध्यक्ष श्री चन्द्रशेखर ही अध्यक्ष बने रहे। चन्द्रशेखर ने भारतीय लोक दल के पुराने कार्यकर्त्ताओं की संगठन में जानबूझ कर उपेक्षा की थी। लोक दल ग्रुप उनके अध्यक्ष बने रहने से नाराज हुआ।

प्रधानमंत्री मोरार जी देसाई 10 जून को लम्बी विदेश यात्रा पर चले गये। अपनी अनुपस्थिति में वे मन्त्रिमंडल के दूसरे नम्बर के सदस्य चौधरी चरण सिंह को अपने कार्य का पूरा दायित्व दे गये। उसे वह चौधरी साहब और नम्बर तीन बाबू जगजीवन राम को बांट गये। यह भी एक प्रकार का अविश्वास था। साथ ही नम्बर दो और नम्बर तीन के बीच प्रतिस्पर्धा बढ़ाने वाला कदम था। आश्चर्य की बात है कि श्रीमती इंदिरा गांधी को अच्छी तरह जानते हुए भी प्रधानमंत्री श्री देसाई जनता के विभिन्न घटकों के बीच तनाव बढ़ाने में ज्ञात या अज्ञात रूप से सहायक हो रहे थे, जैसे अध्यक्ष चन्द्रशेखर जानबूझ कर कर रहे थे।

चौधरी चरण सिंह मानसिक रूप से इतने क्लान्त हुए कि वे बीमार पड़ गये। 28 जून को वे सूरजकुण्ड (हरियाणा) के निरीक्षण भवन में स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे, जब प्रधानमंत्री श्री देसाई विदेश के दौरे से लौटे। विदेशों में उन्हें विभिन्न घटकों की प्रतिस्पर्धा और खींचातानी से अवगत कराया जाता रहा था। हवाई अड्डे पर ही जहाज से उतर कर स्वागत के लिए गये स्वास्थ्य मंत्री श्री राजनारायण को उन्होंने सरे आम डांटा। ऐसी बड़ी शिष्टता का अनुमान ही लगाया जा सकता है?

अपने निवास पर पहुंच कर वे चौधरी चरण सिंह के एक वक्तव्य को पढ़ कर बौखला गये। चौधरी चरण सिंह ने संयोग से उसी दिन एक बयान दिया था कि श्रीमती

गांधी के अपराधों के खिलाफ समुचित कार्यवाही न होते देख जनता सरकार को शासन करने के अयोग्य तथा नपुंसकों का समूह समझती है। उस बयान में इशारा यह भी था कि जनता सरकार में भी उच्च स्तरों पर भ्रष्टाचार-वाद पनप रहा है, जिसे सहा नहीं जा सकता। बयान कड़ा था, यद्यपि उसमें ऐसा कुछ भी नहीं था, जिससे मंत्रिमंडल के संयुक्त उत्तरदायित्व को चुनौती हो या मंत्रिमंडल का कोई भेद प्रकट हो। जनता श्रीमती गांधी के विरुद्ध तत्परता से कार्यवाही न करने को क्या समझ रही है, बयान में इसी का इशारा था। वयोवृद्ध नेता आचार्य कृपलानी ने भी अपने एक पत्र में कुछ ऐसा ही कहा था। प्रधानमंत्री श्री देसाई जो इस बात के आदी थे कि उनके इशारे के विपरीत भी कोई न बोले, बेहद चिढ़ गये। उन्होंने मंत्रिमंडल के सदस्यों की राय लेकर इसी बात पर चौधरी सिंह का त्यागपत्र मांग लिया। उधर श्री राजनारायण ने, जो तब तक अपने को चौधरी चरण सिंह का 'हनुमान' बताते थे, शिमला में रिज पर एक सभा को सम्बोधित कर दिया था। कहा जाता है कि उक्त सभा धारा 144 लगी होते हुए वहां जानबूझ कर की गयी थी। प्रधानमंत्री ने उनका त्यागपत्र भी मांग लिया। बस जनता पार्टी में आग लग गयी। चौधरी चरण सिंह ने तीन पंक्तियों के सीधे सादे जवाब के साथ अपना त्यागपत्र भेजा। उनके 'हनुमान' ने चार पन्नों के बहुत बड़े पत्र के साथ त्यागपत्र भेजा। उस पत्र की भाषा भी कड़ी थी और उसमें लगाये गये आरोप भी असंयत थे।

श्री लालकृष्ण अडवानी ने अपनी पुस्तक 'विश्वासघात' में यह लिखा है कि श्री मधु लिमये ने चौधरी साहब से उस बयान के कारण को पूछा था। श्री आडवानी ने चौधरी साहब द्वारा श्री मधु लिमये को दिए गये जवाब का भी उल्लेख किया है कि चूंकि श्री राजनारायण को मंत्रिमंडल से निकालने की साजिश थी, इसलिए उन्होंने वह बयान दिया था, जो सत्य से विपरीत नहीं था और जिसमें कुछ भी आपत्तिजनक नहीं था। चौधरी चरण सिंह श्री मधुलिमये से इस बातचीत को इन्कार करते हैं।

यहां यह सवाल उठता है कि चौधरी चरण सिंह से जो मंत्रिमंडल में नम्बर दो थे, तथा स्वास्थ्य मंत्री श्री राजनारायण से भी पहले स्पष्टीकरण क्यों नहीं मांगा गया? निष्कर्ष केवल यही निकलता है कि प्रधानमंत्री श्री देसाई जिद में थे। उच्च स्तर के भ्रष्टाचार वाली उक्ति में उन्हें कान्ति देसाई के खिलाफ जांच के मांग की गन्ध मिली थी। चौधरी साहब जैसे दिग्गज को वे सबक सिखाना चाहते थे। यह ठीक है कि मंत्रिमंडल के किसी सदस्य ने सिवा श्री बीजू पटनायक के, प्रधानमंत्री की कार्यवाही का विरोध नहीं किया। मगर चौधरी चरण सिंह जैसे जनप्रिय नेता को इस तरह अपमानित करना सर्वथा विवेकहीनता थी विशेषकर जब श्री मोरार जी को प्रधानमंत्री बनाने में चौधरी चरण सिंह ने भारी सहयोग किया था। क्या यह सम्भव नहीं था कि चौधरी चरण सिंह जनता पार्टी से अलग होकर भारतीय लोक दल को

पुनः जीवित कर देते ? प्रधानमंत्री की एक धारणा यह थी कि जहां जनता दल में विलीन हर घटक का नेता प्रधानमंत्री पद प्राप्त करना चाहता है, वहां चौधरी चरण सिंह जल्दी से जल्दी प्रधानमंत्री पद पर आसीन होना चाहते थे। यह नहीं कि चौधरी चरण सिंह की यह महत्त्वाकांक्षा नहीं थी, लेकिन तत्कालीन परिस्थितियों में उनके लिए ऐसा करना घोर अदूरदर्शिता होती जो अन्ततः श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा स्वेच्छा से उनके प्रधानमंत्रित्व को सहयोग स्वीकार करने पर वस्तुतः हुई। चौधरी चरण सिंह ने महात्मा गांधी से साध्य ही नहीं, साधन की पवित्रता को भी सीखा था। अपने त्यागपत्र पर संसद में बयान देते समय उन्होंने बताया कि प्रधानमंत्री श्री देसाई उनसे 11 मार्च से ही चिढ़े थे, जिस दिन उन्होंने कान्ति देसाई के भ्रष्टाचार के सत्यासत्य की सम्यक् जांच की मांग उठायी थी। प्रधानमंत्री कान्ति देसाई के विरुद्ध तब तक जांच कराने को तैयार नहीं थे, जब तक आधार सहित कान्ति देसाई के विरुद्ध कोई शिकायत निरूपित न हो। मोरार जी भाई जैसे अनुभवी और वरिष्ठ नेता से यह दलील सराहनीय नहीं मानी जाएगी। उन जैसे सर्वोच्च पद के व्यक्ति को जांच कराकर सत्यासत्य को सार्वजनिक रूप से प्रकट करना ही विवेक होता। इससे उनकी प्रसिद्धि में चार चांद लग जाते। ऐसा उन्होंने किया नहीं। सच यही लगता है कि कान्ति देसाई वाले प्रकरण से चिढ़ कर ही प्रधानमंत्री ने चौधरी चरण सिंह का त्यागपत्र मांग लेने की अदूरदर्शिता की।

भारतीय जनता पार्टी के सुप्रसिद्ध नेता श्री लालकृष्ण अडवानी ने, जो उस समय सूचना एवं प्रसारण मंत्री थे, अपनी पुस्तक 'विश्वासघात' (हिन्दी) में इस विषय में यह सवाल उठाया है कि चौधरी साहब ने कान्ति विषयक मामले पर प्रधानमंत्री से पहले बातचीत क्यों नहीं की ? एक वृद्ध व्यक्ति की अकेली संतान के बारे में ऐसी बातचीत से विशेषकर जब पिता का पूर्वाग्रह प्रकट हो, क्या लाभ होता ? और पत्र लिखने में क्या आपत्ति थी ? उक्त आरोप का सच्चा निराकरण जांच कराने से ही हो सकता था। प्रधानमंत्री ने इस प्रक्रिया को अन्ततः स्वीकार भी किया।

उक्त परिस्थिति के लिए प्रधानमंत्री श्री देसाई के अहम् और हठ को ही दोषी माना जा सकता है। इससे मनों की दरार चौड़ी होती गयी, घटकों की प्रतिस्पर्धा बढ़ती गयी, सभी अपना-अपना दांव लगाने लगे और जे० पी० के महान आशीर्वाद से बनी कांग्रेस कुशासन की विकल्प जनता पार्टी की नींव हिलने लगी।

जनता के महल को एकाएक ढह पड़ने से बचाने का प्रयत्न श्री मधु लिमये ने प्रारम्भ किया। उन्होंने चौधरी साहब को तत्काल मंत्रिमंडल का फिर से सदस्य बनाने का प्रधानमंत्री देसाई से आग्रह किया। उनका सबसे अधिक साथ दिया भूतपूर्व जनसंघ के श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने। कोई ग्रुप पार्टी का विघटन नहीं चाहता था। श्री चन्द्रशेखर हमेशा अपनी सुरक्षा को सुनिचिश्त कर पक्ष-विपक्ष में जाने का साहस

करते थे। संगठन कांग्रेसी चौधरी चरण सिंह के वापस लिए जाने के घोर विरोधी थे। प्रधानमंत्री संगठन कांग्रेस से आये थे। समझौते की कोई सूरत उन्हें पसन्द नहीं आ रही थी। अन्त में वे इस बात पर राजी हुए कि चौधरी साहब को वे मंत्रिमंडल में ले लेंगे, मगर श्री राजनारायण को कदापि नहीं। चौधरी साहब को भी वह गृह विभाग नहीं सौंपेंगे। चौधरी चरण सिंह को श्री राजनारायण की अप्रतिष्ठा कब स्वीकार होती ? गतिरोध बना रहा।

चौधरी चरण सिंह के समर्थकों ने विशेष कर हरियाणा के मुख्य मंत्री चौधरी देवी लाल ने सत्रह जुलाई को दिल्ली में एक किसान रैली को आहूत किया। भूतपूर्व लोक दल के सदस्यों में प्रधानमंत्री के प्रति भारी आक्रोश था। वे जनता पार्टी इसलिए नहीं छोड़ रहे थे कि चौधरी चरण सिंह ने पार्टी को नहीं छोड़ा। चार कनिष्ठ मंत्रियों ने उनका त्यागपत्र स्वीकार होते ही मंत्रिमंडल से विरोध स्वरूप इस्तीफा दे दिया था। लेकिन चौधरी चरण सिंह ने स्पष्ट घोषित किया था कि वे जनता पार्टी में हैं। वे कदापि नहीं चाहते थे कि जनता पार्टी टूटे, यद्यपि प्रधानमंत्री तथा पार्टी के अध्यक्ष ने उन्हीं के समर्थन से बन कर भी उन्हें और उनके अनुयायियों को कमजोर करने में कोई कोर कसर बाकी नहीं छोड़ी थी। समझौता कराने वालों ने अपने प्रयत्नों में ढील नहीं आने दी। किसान रैली के व्यापक महत्त्व को सभी जानते थे। वह रद्द करायी गयी। श्री देवी लाल ने रैली को आहूत करते समय यह बयान दिया था कि चौधरी चरण सिंह को मंत्रिमंडल से निकालने का प्रधानमंत्री का कान्ति देसाई की जांच के मांग के कारण पहले से ही सुनियोजित षडयंत्र था। उनके इस बयान के कारण चौधरी देवी लाल से जनता संसदीय दल ने मुख्य मंत्री पद छोड़ देने को कहा था। यह बयान वापस ले लिया गया। संसदीय दल ने भी हरियाणा में नया नेता चुनने की बैठक रद्द कर दी। चौधरी साहब ने जनता कार्यकारिणी समिति से इस्तीफा दे दिया था। उसे वापस ले लिया। समझौता कराने वालों ने चौधरी साहब को चन्द्रशेखर की जगह पार्टी का अध्यक्ष बनाने का प्रस्ताव किया था। संगठन कांग्रेस ग्रुप के संग-संग बाबू जगजीवन राम और श्री बहुगुणा का लोकतान्त्रिक कांग्रेस (सी० एफ० डी०) इस प्रस्ताव के घोर विरोध में खड़ा हो गया। श्री चन्द्रशेखर ने प्रकट रूप में विरोध नहीं किया, लेकिन वह आसानी से प्राप्त अपना पद कब छोड़ना पसन्द करते ? अतः समझौते का यह तरीका भी स्वीकृत नहीं हुआ। चौधरी चरण सिंह ने तब पहले दलों को पुनर्जीवित कर एक संघीय दल बनाने का सुझाव दिया। वयोवृद्ध समाजवादी नेता श्री एस० एम० जोशी इससे दुःखी हुए। उन्हें लगा कि जनता पार्टी का विघटन अब दूर नहीं। उन्होंने जे० पी० से एक बयान दिलाया कि पूर्व दलों को पुनर्जीवित करना राष्ट्रीय विकल्प बनाने के अब तक के प्रयासों पर

पानी फेरना होगा। जे०पी० ने प्रधानमंत्री को भी चौधरी चरण सिंह को मंत्रिमंडल में वापस लेने को लिखा।

प्रधान मंत्री ने जे०पी० की सलाह नहीं मानी। चौधरी चरण सिंह ने संघीय दल बनाने का विचार छोड़ दिया और 22 दिसम्बर को संसद में अपने त्यागपत्र से सम्बन्धित बयान दिया। उसमें उन्होंने कहा कि 11 मार्च को कान्ति देसाई की जांच का मामला उन्होंने एक पत्र में उठाया था, तभी से प्रधान मंत्री उन्हें मंत्रिमंडल से बाहर करने का मौका ढूंढ रहे थे। अपने बयान में उन्होंने जनता की अपेक्षाओं के मुताबिक श्रीमती गांधी के खिलाफ तत्परता से कड़ी कार्यवाही न करने का भी आरोप लगाया। प्रधान मंत्री ने अपने जवाब में आरोपों से इनकार किया। दूसरे दिन 23 दिसम्बर को चौधरी चरण सिंह के जन्म दिन पर किसानों का अभूतपूर्व समागम दिल्ली में हुआ। वहां उपस्थित अपार जनसमूह ने चौधरी साहब के मंत्रिमंडल से बाहर होने पर भारी आक्रोश प्रकट किया और उनसे नया दल गठित करने का आग्रह किया, लेकिन चौधरी साहब जनता पार्टी से अलग नहीं हुए। वह उसे तोड़ना कदापि नहीं चाहते थे।

चौधरी साहब को जनता पार्टी से अलग न होते देख कर उनके लोक दल के अनुयायियों ने समझौता के प्रयत्नों को दुबारा तेज किया। समझौता कराने वालों ने चौधरी साहब की प्रतिष्ठा अक्षुण्ण रखने के लिए उन्हें उप-प्रधान मंत्री की हैसियत से मंत्रिमंडल में वापस लाने का सुझाव दिया। उनके जन्म दिन पर किसानों के अभूत-पूर्व समागम का भी व्यापक प्रभाव पड़ा। प्रधान मंत्री सबको समझौते के पक्ष में देख कर कुछ नरम हुए। उन्होंने यह जरूर कहा कि चौधरी चरण सिंह का मंत्रिमंडल में लौटना निरापद नहीं होगा। यह उनके हठ की संकीर्णता थी। प्रधान मंत्री ने अपनी शर्तें फिर दोहरायी। गृह विभाग नहीं मिलेगा, श्री जगजीवन राम भी उप-प्रधान मंत्री होंगे और कान्ति देसाई के खिलाफ़ आरोपों को वापस लेना पड़ेगा। अब समझौता कराने वाले चौधरी चरण सिंह को तैयार कराने में जुटे। अन्ततः पार्टी की एकता के हित में चौधरी चरण सिंह 24 जनवरी 1979 को को उप-प्रधान मंत्री के रूप में वित्त मंत्री बन कर मंत्रिमंडल में लौटे। उन्हीं दिन उन्होंने अपने एक बयान में कहा था कि श्री मोरार जी देसाई उनके नेता हैं और वे कभी उनके खिलाफ नहीं जायेंगे। उनके 'हनुमान' राजनारायण ने जैसा एक पत्रकार ने लिखा है, संजय गांधी से कहा, "कुर्सी की अति पड़ी है। क्या किया जाय ?" अगर यह सच है, तो हनुमान ने मर्यादा का ध्यान कदापि नहीं रखा।

श्री राजनारायण वर्तमान भारतीय नेताओं में श्रीमती इंदिरा गांधी को वोट और न्यायालय दोनों में हराने के कारण बहुचर्चित नेता हैं। मूल रूप से वह लोहिया ग्रुप के समाजवादी थे। डॉक्टर लोहिया के बाद उस दल के एक ग्रुप के वह सबसे बड़े

नेता माने गये। हर कुशल नेता की तरह उनमें एक विलक्षण शक्ति है। वे जी जान से किसी की मदद भी करते हैं और बड़े से बड़े को उखाड़ भी सकते हैं। प्रधान मंत्री मोरार जी द्वारा अपनी अवहेलना पर वे अत्यन्त क्रुद्ध हुए। वे क्रुद्ध पहले से ही थे और मोरार जी भाई की सरकार को भंग करने की हर कोशिश कर रहे थे। चौधरी साहब के कारण उनकी चल नहीं रही थी। संयोग से संजय गांधी उनसे मिलने आ गये। श्रीमती इंदिरा गांधी को जांच आयोगों द्वारा प्रमाणित अभियोगों के खिलाफ बचाव की एक ही सूरत दिखायी पड़ रही थी—किसी तरह जनता पार्टी को भंग करना। वह जनता पार्टी के घटकों के आपसी तनाव से परिचित थीं। उनकी राय से ही उनके सुपुत्र श्री संजय गांधी राजनारायण से मिलने आये।

मुसीबत में, विचित्र-विचित्र परस्पर विरोधी लोग एक साथ हो जाते हैं। श्री राजनारायण जैसा साफ सुथरा और निर्भीक व्यक्ति संजय गांधी जैसे चालू तथा अराजकता पसन्द व्यक्ति से सहयोग भी करे, यह आसानी से समझ में आने वाली बात नहीं। मगर वरूण सेन गुप्ता की किताब 'लास्ट डेज ऑफ मोरार जी राज' ने इस बारे में कोई संदेह नहीं रहने दिया है, श्री संजय गांधी ने हनुमान को जनता सरकार को जल्दी से जल्दी तोड़ कर गिराने का एक रास्ता बताया—जनसंघ और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के खिलाफ प्रगतिशील घटकों का ध्रुवीकरण। श्री मधु लिमये पहले से ही इसी नीति पर ध्रुवीकरण की चेष्टा कर रहे थे। श्री राजनारायण ने भी यह कौल उठा लिया। वे जनसंघ ग्रुप और श्री चन्द्रशेखर पर विष उगलने लगे। जनसंघ या राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ ने अखण्ड भारत के नारे के अलावा ऐसा क्या किया है कि उन्हें साम्प्रदायिक माना जाय? यह गंभीरता से पूछा जा सकता है कि क्या अल्पसंख्यक समुदाय भारत की अखण्डता नहीं चाहते, क्या वे भारत के प्रति निष्ठा से समर्पित नहीं हैं? श्रीमती इंदिरा गांधी तो जनसंघ को सोते जागते कोसती ही थीं, श्री मधु लिमये और श्री राजनारायण भी वही बेसुरा राग अलापने लगे। श्री मधु लिमये ने एक जगह कहा है कि वे इस नीति पर काम कर रहे थे कि सन् 1982 के बाद जनता पार्टी को राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ समर्थित लोगों पर निर्भर न होना पड़े। उन्होंने इतनी जल्दी नतीजा पाने की आशा नहीं की थी।

जो हो, जिस दिन चौधरी चरण सिंह ने उप-प्रधान मंत्री की हैसियत से मंत्रिमंडल में पुनः प्रवेश किया, उसी दिन उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री श्री रामनरेश यादव ने चार कनिष्ठ मंत्रियों को अपने मंत्रिमंडल से अलग कर दिया। उनमें दो जनसंघ ग्रुप के थे। जनसंघ ग्रुप में कुहराम मच गया। उन्होंने चौधरी चरण सिंह से बात की। चौधरी साहब ने दखल नहीं दिया। प्रधान मंत्री ने उनसे कहा कि चौधरी साहब को वापस लाने का मजा उन्हें मिलता ही। अध्यक्ष चन्द्रशेखर ने मुख्यमंत्री से सीधे बात की। कोई नतीजा नहीं निकला। यहां बहुत उपयुक्त प्रश्न उठता है कि ऐसा

क्या श्री राजनारायण के कारण हुआ या चौधरी चरण सिंह का इसमें इशारा था। श्री आडवाणी ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि चौधरी साहब ने उनसे स्वीकार किया कि मुख्य मंत्री ने उनसे कतिपय अक्षम्य और कुख्यात मंत्रियों के हटाने की बात की थी। लेकिन चौधरी साहब ने उनसे कहा था कि दो भूतपूर्व जनसंघियों की जगह उन्हीं के ग्रुप के नये लोग लिये जायेंगे। श्री राम नरेश यादव वस्तुत: श्री राजनारायण के अन्यतम सहयोगी रह चुके थे। श्री राजनारायण की विशेष संस्तुति पर ही चौधरी चरण सिंह ने उन्हें उत्तर प्रदेश का मुख्य मंत्री बनाया था। क्या यह सम्भव नहीं हो हो सकता कि श्री राजनारायण के कारण ही जनसंघ के दो मंत्रियों को हटाने की बात श्री यादव ने चौधरी साहब से की हो ?

उत्तर प्रदेश की उक्त कार्यवाही की प्रतिक्रिया न होती तभी आश्चर्य होता। जनसंघ ग्रुप के आठ मंत्रियों ने पार्टी के पास अपना इस्तीफा भेज दिया। मुख्य मंत्री ने उनका इस्तीफा सीधे मांगा। उन्होंने तब मुख्य मंत्री को नेता पद से हटाने की मांग की। मुख्य मंत्री ने राज्यपाल से उन्हें बर्खास्त करने की संस्तुति की। इस पर विधायक बिगड़े। विधायक दल की बैठक हुई। मुख्य मंत्री विश्वास प्राप्त करने में असफल रहे। उनके स्थान पर चौधरी चरण सिंह और श्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा के सहयोग से श्री बनारसीदास नये नेता चुने गये। श्री बनारसी दास ने जो मंत्रिमंडल बनाया, उसमें एक भी भूतपूर्व जनसंघी को मंत्री नहीं रखा। यहां यह अमान्य नहीं किया जा सकता कि उप-प्रधान मंत्री चौधरी चरण सिंह की सहमति से ही ऐसा हुआ होगा। ऐसा करने का कारण समझ में नहीं आता। यही मानने को बाध्य होना पड़ता है कि यहां से चौधरी साहब ज्ञात अथवा अज्ञात भाव से ध्रुवीकरण का समर्थन करने लगे।

इसकी प्रतिक्रिया दूसरे राज्यों में हुई। बिहार में भूतपूर्व भारतीय लोक दल के कर्पूरी ठाकुर पर अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर श्री राम सुन्दर दास को जो समाजवादी थे और संगठन कांग्रेस में रह चुके थे, नया नेता और मुख्य मंत्री निर्वाचित किया गया। राजस्थान, मध्य प्रदेश और हिमाचल प्रदेश में जनसंघियों को अपदस्थ करने की मांग लोक दल ने नहीं उठायी। हरियाणा में चौधरी देवी लाल को अपदस्थ करने में देर लगी। छः महीने बाद उनके स्थान पर श्री भजन लाल नेता चुने गये। जनता पार्टी के विघटन की प्रक्रिया शुरू हो गयी। अध्यक्ष चन्द्रशेखर भी अपने को सुरक्षित रखने के लिए कभी इधर, कभी उधर से अपना दांव लगाते रहे। पार्टी को समन्वित रखने की क्षमता उनकी थी नहीं।

इन्हीं दिनों देवराज अर्स और श्रीमती इंदिरा गांधी में बिगाड़ हो गया, जिससे अर्स ग्रुप के कर्नाटक राज्य के ग्यारह संसद सदस्य श्री चव्हाण वाले कांग्रेस गुट में जा मिले। इसका प्रभाव संसद में पड़ा। श्री चव्हाण का दल इंदिरा कांग्रेस की जगह मुख्य विरोधी दल बन गया। श्री मधु लिमये के लिए यह मनचाहा हुआ।

चौधरी चरण सिंह निस्संदेह इन घटनाओं के क्रम से अपरिचित नहीं थे। लेकिन वे उस जनता पार्टी को, जिसको बनाने में उन्होंने कितना परिश्रम किया था, विघटित कदापि नहीं करना चाहते थे। प्रधानमंत्री और पार्टी के अध्यक्ष ने उनको और उनके ग्रुप को कमजोर करने के लिए जो कुछ किया था, उससे क्षुब्ध जरूर थे। उन्हें यह भी मालूम था कि प्रधान मंत्री और पार्टी अध्यक्ष विभिन्न घटकों में समानुपात और समन्वय बनाये रखने में सर्वथा असमर्थ हैं। लेकिन उन्हें यह भी मालूम था कि जनता पार्टी अगर टूटी तो इंका का विकल्प समाप्त हो जायेगा।

श्रीमती इंदिरा गांधी और संजय गांधी जनता पार्टी को तहस-नहस करने के लिए अपनी कोशिश कर ही रहे थे। राजनारायण अपने प्रति किये गये अपमान का बदला चुकाने के लिए मोरार जी भाई को पदच्युत करने के लिए कृत-संकल्प थे। पहले वे जनसंघ और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के खिलाफ ही विष वमन करते थे, अब उन्होंने जनता पार्टी पर आक्रमण शुरू कर दिया। जनता पार्टी ने उन्हें अपनी कार्य समिति से 12 जून 1979 को एक वर्ष के लिए निष्कासित कर दिया। उन्होंने पार्टी से इस्तीफा दे दिया और पार्टी के विरुद्ध धुंआधार प्रचार में जुट गये।

जनता की आन्तरिक कलह पर श्रीमती इंदिरा गांधी और संजय गांधी अपना खेल तेजी से खेलने लगे। चौधरी चरण सिंह को वे जानते थे। उन्हें मालूम था कि चौधरी चरण सिंह किसी हालत में भ्रष्टाचार को नहीं सह सकते। चौधरी चरण सिंह को जवाहर लाल नेहरू से यह बड़ी शिकायत थी कि वे भ्रष्टाचार को जान कर भी क्रोध से उबल नहीं आते थे। श्रीमती गांधी ने अपने सुपुत्र संजय गांधी द्वारा चौधरी साहब की उक्त कमजोरी का लाभ उठाया। श्री संजय गांधी की सास के एक मित्र श्री बाला सुब्रह्मण्यम थे। वह कांति देसाई के भी मित्र थे। श्री बाला सुब्रह्मण्यम विदेशी और स्वदेशी बड़े औद्योगिक संस्थानों का अपने सम्पर्क या सिफारिश से काम कराया करते थे। काम कराने के बदले वे संबंधित फर्मों से कमीशन उगाहते थे। उसमें कांति देसाई का भी हिस्सा बताया जाता था। मनमाना पैसा कमाने के लिए वे घटिया से घटिया तरीका भी बिना हिचक अपना लेते थे। एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा। उन्हें पता चला कि आपातकाल में बड़े-बड़े तस्करी धन्धे वालों को गिरफ्तार करने के वारंट जारी हुए थे, जो बाद में रद्द भी हो चुके थे। संबंधित कितने तस्कर हिन्दुस्तान से बाहर भाग कर दूसरे देशों में रह रहे थे। उन्होंने ऐसे तस्करों की सूची प्राप्त की, विदेशों में उनसे सम्पर्क स्थापित किया और लाखों नहीं करोड़ों लेकर उन्हें भारत लौटने को इस आश्वासन से प्रेरित किया कि वे उनके विरुद्ध जारी वारंट को श्री कांति देसाई के माध्यम से रद्द करा देंगे। वारंट तो पहले ही रद्द हो चुके थे। श्री बाला सुब्रह्मण्यम ने इस तरह बेहद धन कमाया। उसमें किस-किसका हिस्सा था, इस बात का अनुमान ही लगाया जा सकता है।

बाला सुब्रह्मण्यम कांति देसाई के जरिए मोरार जी भाई का भी सुपरिचित था। करीब अस्सी लाख का चंदा श्री कांति देसाई ने जनता पार्टी के लिए एक अल्प अवधि में इकट्ठा किया था। उतनी बड़ी धनराशि किन-किन सूत्रों से आयी थी, इसका पता जनता पार्टी के कोषाध्यक्ष श्री चन्द्रभान गुप्त को भी नहीं था। श्री मधु लिमये ने इस बारे में पार्टी में सवाल उठाया था। अनुमान है कि बाला सुब्रह्मण्यम के माध्यम से ही इतनी बड़ी रकम की वसूली सम्भव थी। श्री बाला सुब्रह्मण्यम अगाध धनी जरूर था। वह बेहद खर्चीली आदत का भी था, जिससे हमेशा उसे धन उगाहने की जरूरत पड़ी रहती थी। वह दिल्ली में जिस फ्लैट में रहता था, उसके नीचे वाले फ्लैट में संजय गांधी की सास श्रीमती अमितेश्वरी आनंद रहती थीं। दोनों की घनिष्ठता थी।

बाला सुब्रह्मण्यम का निजी सहायक एक कल्याणम् था। वह भी पहले मोरार जी भाई के साथ सहायक के रूप में काम कर चुका था। संजय गांधी ने इस कल्याणम् को चौधरी चरण सिंह से मिलने भेजा या भिजवा दिया। बाला और कल्याणम् में अनबन हो गयी थी।

कल्याणम् ने बाला और कांति के विदेशी और स्वदेशी व्यावसायिक कारनामों की सूचना चौधरी साहब को दी। उसने यह भी बताया कि बाला सुब्रह्मण्यम प्रधान मंत्री की रूस और यूरोपीय देशों की यात्रा पर उनके दल के साथ गया था। वहां से प्रधान मंत्री के सामान का लेबिल अपने ट्रंकों पर चिपका कर वह कुछ ऐसे दूर संचरण के अति आधुनिक उपकरण भारत लाया था, जो बिना सरकारी स्वीकृति के देश में आ ही नहीं सकते। वित्त विभाग ने कल्याणम् की सूचना की यथासम्भव तसदीक करा कर बाला सुब्रह्मण्यम के निवास की 4 जून को तलाशी करायी। कुछ संदेहास्पद कागजों के अलावा वहां कुछ भी नहीं मिला। बाला सुब्रह्मण्यम के आवास के नीचे वाले फ्लैट में श्रीमती अमितेश्वरी आनंद के फ्लैट की भी तलाशी ली गयी। वहां भी कुछ नहीं मिला। आगे जांच पड़ताल के लिए रिपोर्ट दर्ज करा दी गयी। उधर श्रीमती अमितेश्वरी आनंद ने प्रधान मंत्री को तलाशी की शिकायत लिख भेजी। बाला को उन्हीं दिनों किसी रोग के उपचार के लिए जर्मनी जाना था। उसने जाने की इजाजत मांगी। वह इनकार हो गयी। तब वह प्रधान मंत्री के पास पहुंचा। उन्होंने भी इनकार किया। वह बाला पर बहुत बिगड़े भी। शायद उन्हें बाला के अवैध धंधों के बारे में जानकारी नहीं थी और यह भी नहीं मालूम था कि कांति देसाई का भी उसके लाभांश में हिस्सा है। बाला प्रधान मंत्री से कुपित हो कर वकीलों के पास भागा। कानूनी सलाह पर उसने शपथ पत्र दाखिल किया। उस शपथ पत्र का टेप हुआ। बाला अपनी चाल या अपने शुभेच्छुओं की साजिश से नेपाल के रास्ते देश छोड़ गया।

श्री राजनारायण को इसका पता चला। उन्होंने टेप की प्रतिलिपियां और

दस्तावेजों की फोटो कापी रातों-रात जनता तथा विरोधी दलों के प्रमुखों के पास पहुंचा दी। उसमें जर्मनी की एक कम्पनी से प्राप्त दस्तावेज भी थे। वित्त मंत्रालय तथा विरोधी सदस्यों में हंगामा मच गया। संसद के वर्षाकालीन सत्र में प्रधान मंत्री की मुसीबत सुनिश्चित हो गयी।

चौधरी चरण सिंह भ्रष्टाचार के खिलाफ ऐसे गरम हो जाते हैं, जैसे बालक खिलौना पकड़ने के लिए लपकता है। उच्च स्तरीय भ्रष्टाचार को पकड़ने का कोई मौका चूकना नहीं चाहते। श्रीमती इंदिरा गांधी के नये मकान में उन्होंने इसीलिए गृहमंत्री के रूप में तलाशी करायी थी। कांति के मामले में वे बाला सुब्रह्मण्यम को बख्श ही नहीं सकते थे। उन्होंने प्रधान मंत्री श्री मोरार जी भाई देसाई के पास टेप और दस्तावेजों की प्रतियां तत्क्षण भेज दी। प्रधान मंत्री ने उनपर समुचित कार्यवाही करने का आदेश देकर उन्हें लौटा दिया। इस बयान और दस्तावेजों से प्रधान मंत्री का वह बयान झूठा पड़ जाता था, जो उन्होंने कई बार दिया था कि कांति देसाई कोई व्यापार नहीं करते। कांति देसाई पहले भी 'बाम्बे इण्डस्ट्री और केमिकल कम्पनी' नाम से व्यापार कर चुके थे, जिसमें परिवार के लोग ही हिस्सेदार थे।

चौधरी चरण सिंह का उपर्युक्त काण्ड में प्रधान मंत्री श्री देसाई को उनके पुत्र कांति देसाई का सही रूप दिखाना तथा उसे उच्च स्तरीय भ्रष्टाचार का भण्डा-फोड़ करना ही उद्देश्य रहा होगा। मगर विवाद बढ़ गया। विरोधी दल और श्रीमती इंदिरा गांधी को एक नया हथियार अनायास मिल गया।

23 जून को जनता पार्टी की सदस्यता से इस्तीफा देने के बाद श्री राज-नारायण ने दिल्ली की एक पत्रिका से साक्षत्कार में यह कहा था कि वे एक नयी जनता पार्टी बनाने का विचार कर रहे हैं, जिसको चौधरी चरण सिंह का सहयोग प्राप्त है। चौधरी साहब ने तत्काल इसका जोरदार खंडन किया। उन्होंने जनता पार्टी को छोड़ा भी नहीं। लेकिन जब तक वे कुछ करें, एक नयी स्थिति उत्पन्न हो गयी।

श्री चव्हाण ने जो अब विरोधी दल के नेता थे, 9 अगस्त को मोरार जी देसाई मंत्रिमंडल पर अविश्वास का प्रस्ताव लोक सभा को भेज दिया। उसी दिन श्री राजनारायण ने अपना नया दल, जनता (एस) बनाने की घोषणा कर दी। चौधरी चरण सिंह इससे बिलकुल अनभिज्ञ थे। उनकी फाइलों, कागज-पत्रों में मुझे कुछ भी ऐसा नहीं मिला, जिससे यह प्रकारान्तर से भी साबित हो कि जनता (एस) के गठन में उनका इशारा भी था।

10 जुलाई को श्री राजनारायण के निकट के, लोहिया दल वाले सहयोगी, जो भारतीय लोक दल में शामिल हो चुके थे, जनता पार्टी छोड़ कर जनता (एस) में आ गये। 11 जुलाई तक वह संख्या 25 हो गयी। अब श्री मधु लिमये के साथ

श्री बहुगुणा भी मोरार जी देसाई की सरकार के खिलाफ बहुत सक्रिय हो गये। उनकी योजना थी कि जनसंघ को अलग कर जनता पार्टी का नया गठन हो। श्री चन्द्रशेखर ने अब समझौता कराने की कोशिश की। 13 जुलाई को उनके यहां एक बैठक हुई, जिसमें सभी दलों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। उस बैठक में भारतीय लोकदल के सदस्यों ने नेतृत्व परिवर्तन की मांग की। उसी दिन श्री अटल बिहारी वाजपेयी और जार्ज फर्नाण्डिस ने मोरार जी से नेता पद त्यागने के लिए बहुत जोर दिया। मोरार जी ने साफ इन्कार कर दिया, क्योंकि उनकी दृष्टि में बाला सुब्रह्मण्यम काण्ड में कोई महत्त्व की बात नहीं थी, न ही उन्हें बहुमत खोने का डर था। उस बैठक में श्री देसाई के स्थान पर बाबू जगजीवन राम को नया नेता बनाने का कइयों ने सुझाव दिया। श्री मधु लिमये की राय चौधरी चरण सिंह को नेता बनाने की थी। संगठन कांग्रेस मोरार जी के साथ पूरी तरह थी। उन्होंने इसीलिए नेता पद से न हटने का कड़ा रुख अपना लिया। श्री मधु लिमये को छोड़ कर दूसरे समाजवादी नेता बाबू जगजीवन राम के पक्ष में थे। जनसंघ भी उधर झुका। फिर भी प्रधान मंत्री श्री देसाई टस से मस नहीं हुए। श्री देसाई अगर उस समय नेता पद छोड़ने को तैयार हो जाते, तो शायद जनता पार्टी बच गयी होती। उनका हठवाद यहां भी तीव्र रहा।

श्री देसाई के रुख से नाराज होकर उतना नहीं, जितना नये ध्रुवीकरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए श्री बहुगुणा और श्री जार्ज फर्नाण्डिस ने मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया। लोग चौकन्ने हुए। जार्ज ने जिस शाम इस्तीफा दिया, उसी दिन उन्होंने अविश्वास के प्रस्ताव का संसद में इतना तर्कपूर्ण और जोरदार विरोध किया था कि ऐसा लगा अविश्वास प्रस्ताव निस्संदेह फेल हो जायेगा। मगर श्री मधु लिमये का चक्र भी उतनी ही तेजी से चला और जार्ज ने इस्तीफा दे ही दिया। उसी दिन कम्युनिस्ट (मार्क्सवादी) दल ने भी अविश्वास प्रस्ताव का समर्थन करने का अपना निश्चय प्रकट किया। स्थिति की गम्भीरता अब प्रधानमंत्री पर पूरी तरह प्रकट हुई। उन्होंने 15 जुलाई को राष्ट्रपति को अपना और अपने मन्त्रिमंडल का इस्तीफा भेज दिया। इस्तीफा भेजने का कारण कानूनी राय थी कि अगर वे फिर बहुमत बना सके, तो राष्ट्रपति उन्हें दुबारा सरकार बनाने के लिए आमंत्रित कर सकेंगे। अविश्वास का प्रस्ताव पारित हो जाने पर उन्हें बुलाना सम्भव नहीं होगा।

चौधरी चरण सिंह अभी भी जनता पार्टी में थे। मोरार जी भाई और श्री अडवाणी कुछ भी क्यों न कहें, चौधरी चरण सिंह राजघाट के शपथ में उपस्थित न होते हुए भी उस शपथ की रक्षा करते रहे। श्री मधु लिमये तथा श्री राजनारायण के नकारात्मक रवैये के लिए वे कदापि जिम्मेदार नहीं थे। श्री राजनारायण के एक बयान का कि चौधरी साहब अन्दर से और वे बाहर रहकर जनता सरकार को भंग करेंगे, कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं। चौधरी साहब ने श्री राजनारायण के बयान

का जोरदार प्रतिवाद भी किया था। मैंने इस बिन्दु पर बड़ी गम्भीरता से फाइलों, कागज-पत्रों और तत्कालीन खबरों में खोजबीन की है। मुझे कोई शक नहीं कि श्री राजनारायण ने अपने बयान में चौधरी साहब को अपना प्रभाव जमाने के लिए तथा आतंक फैलाने के लिए सान लिया था। चौधरी साहब की इतनी चूक मानी जा सकती है कि उन्होंने श्री राजनारायण और श्री मधु लिमये को नियंत्रित नहीं किया। लेकिन क्या वे उन्हें नियंत्रित कर भी सकते थे, या मोरार जी देसाई के अहम् और हठवादिता से वे उनका नेता पद से हट जाना ही जनता के हित में मानते थे। जो हो, जनता पार्टी के टूटने की पूरी जिम्मेदारी उसमें व्याप्त तेज घटकवाद, प्रधानमंत्री श्री देसाई की घटकों में समन्वय न रखने की अक्षमता तथा पार्टी अध्यक्ष श्री चन्द्रशेखर की अवसर के अनुसार पैंतरेबाजी को ही माना जाएगा। श्री मधु लिमये की ध्रुवीकरण की योजना और श्री राजनारायण का इन्तकाम (बदला) भी बहुत निकृष्ट था, लेकिन चौधरी चरण सिंह ने जनता पार्टी के टूट जाने तक कोई ऐसा कदम नहीं उठाया, जिससे उन पर यह दोष मढ़ा जा सके। उनके प्रति तो घटकों ने अन्याय किया, क्योंकि मोरार जी देसाई के बाद वे बाबू जगजीवन राम को नेता बनाना चाह रहे थे। यह उनका सरासर अपमान था। वे उम्र में बाबू जगजीवन राम से बड़े थे, मंत्रिमंडल में नम्बर दो पर थे, उन्होंने जनता पार्टी का निर्माण किया था, जबकि श्री जगजीवन राम ने आपातकाल लागू करने का प्रस्ताव पेश किया था और 7 महीने से अधिक समय तक मंत्री भी बने रहे। श्री अडवाणी का निष्कर्ष कि चौधरी चरण सिंह ने जनता से अपनी दुराकांक्षा के कारण विश्वासघात किया, उनका दृष्टिदोष ही नहीं, उनका घृणित प्रचार है। आज श्री अडवाणी और उनका दल चौधरी चरण सिंह का सहारा लिए हुए हैं।

चौधरी साहब के साथ शुरू से ही जो अन्याय हुआ था, उससे लोक दल ग्रुप निस्संदेह तभी से क्षुब्ध था। जब कम्युनिस्ट (एम०) और दूसरे दलों के अधिकांश सदस्य बिना शर्त उन्हें समर्थन देने को तैयार हो गये थे, तब उनके समर्थक उनके पास इस अनुरोध के साथ आये कि वह जनता (एस) का नेतृत्व करना स्वीकार करें। चौधरी चरण सिंह ने तब भी कहा कि मुझे नहीं मालूम कि आप लोग मुझसे क्या कराना चाहते हैं, लेकिन पुराने सहयोगियों का आग्रह इतना तीव्र था और परिस्थितियां इस तेजी से बदलीं कि उन्हें अन्ततः अन्य दलों के आग्रह पर विचार करना पड़ा। जैसे ही उन्होंने विचार करने की सहमति दी, उनके हनुमान ने वक्तव्य दे दिया कि चौधरी चरण सिंह जनता (एस) का नेतृत्व करने को तैयार हो गये हैं।

18 जुलाई को राष्ट्रपति ने कांग्रेस (एस) के नेता श्री चह्वाण को सरकार बनाने के लिए निमंत्रित किया। 22 जुलाई को चह्वाण ने सरकार बनाने में अपनी असमर्थता प्रकट कर दी। इधर मोरार जी भाई नेता पद छोड़ने लिए अब भी तैयार

नहीं थे। उन्होंने 22 जुलाई को श्री जगजीवन राम से यह समझौता किया कि अगर वे सरकार बनाने के अपने प्रयास में विफल हो जाने की स्थिति में आयेंगे, तब तत्काल श्री जगजीवन राम के पक्ष में नेता पद छोड़ देंगे। उधर ध्रुवीकरण वाले लोग जिनमें मधु लिमये, राजनारायण और सर्वश्री बहुगुणा प्रमुख थे, जनता (एस) का बहुमत बनाने में जुटे। समाचार पत्रों के अनुसार 23 जुलाई की यह स्थिति थी कि न मोरार जी न ही चौधरी चरण सिंह बहुमत जुटा पा रहे थे। अचानक राष्ट्रपति भवन से दोनों से अपनी-अपनी लिस्ट एक ही समय भेजने की मांग आयी। यह चौंकाने वाली बात थी। राष्ट्रपति को जैसे उन्होंने श्री चह्वाण को बुलाया था, वैसे ही पहले चौधरी चरण सिंह को बुलाना चाहिए था। श्रीमती इंदिरा गांधी ने अपनी कुटिलता यहां प्रदर्शित की। उन्होंने चौधरी चरण सिंह का बिना शर्त समर्थन का वक्तव्य समाचार पत्रों में प्रकाशित कराया। उनका एकमात्र ध्येय जनता पार्टी को पुनर्जीवित न होने देना था। पहले वह चाहती थीं कि चौधरी चरण सिंह उनसे मिल कर या टेलीफोन से बात कर समर्थन का अनुरोध करें। चौधरी साहब ने ऐसा करने से कड़ाई से इन्कार कर दिया। तब उन्होंने अपने दल द्वारा चौधरी चरण सिंह के समर्थन का वक्तव्य जारी कर दिया।

25 जुलाई को दोनों नेताओं ने 280 संसद सदस्यों की अलग-अलग लिस्ट राष्ट्रपति को भेजी। श्री राजनारायण के अनुसार जनता (एस) की लिस्ट में जनता (एस) के 92, समाजवादी 15, कांग्रेस 75, इंका-73, कम्युनिस्ट दल 7, मुस्लिम लीग 2, आर० एस० पी० 1, अकाली दल-9, तथा पी० डब्लू० पी० 7 थे। जनता पार्टी की लिस्ट में उनके सदस्यों के अलावा ए० आई० डी० एम० के० के 18, यू० पी० एफ० के 11 और अन्य 32 थे। अन्य में कांग्रेस के 15 सांसद थे। इन पन्द्रह से श्री देवराज अर्स ने विरोध के पत्र प्राप्त कर राष्ट्रपति को भेज दिये। इससे जनता (एस) की लिस्ट बहुसंख्यक साबित हुई। जनता पार्टी की लिस्ट में गलत नामों से पार्टी को बड़ा धक्का लगा। मोरार जी देसाई को गलत नाम लिस्ट में देने पर अपने सहयोगियों से बहुत आक्रोश हुआ। उन्होंने अब अपने दल के नेता पद से इस्तीफा दे दिया।

राष्ट्रपति ने चौधरी चरण सिंह को सरकार बनाने के लिए 26 जुलाई 1979 को आमंत्रित किया। श्रीमती इंदिरा गांधी ने चौधरी साहब को टेलीफोन पर मुबारकबाद दिया। लेकिन मां और बेटे ने उसी दिन चौधरी सरकार को भंग करने का निश्चय भी कर लिया। इसका कारण यह था कि अपने अनुयायियों के बहुत कहने पर भी चौधरी साहब श्रीमती इंदिरा गांधी को समर्थन के लिए धन्यवाद देने उनके यहां नहीं गये। श्रीमती गांधी ने श्री भीष्म नारायण सिंह को जगजीवन राम के पास उसी दिन भेजा। उनकी घंटे भर बातें हुई।

28 जुलाई को नये मंत्रिमंडल के शपथ समारोह का इंका ने बायकाट किया। पत्रकारों को सम्बोधित करते हुए इंका के संसदीय दल के नेता श्री सी० एम० स्टीफन ने एक महा कुटिल बात कही कि इंका ने चौधरी चरण सिंह को केवल सरकार बनाने के लिए समर्थन का वादा किया था। वह बात अब पूरी हो गयी। नयी सरकार ने इसी दुविधा में अपना कार्यकाल आरम्भ किया।

राष्ट्रपति ने चौधरी चरण सिंह को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करते हुए यह शर्त लगा दी थी कि महीने भर के भीतर वे संसद में अपना बहुमत प्रमाणित करेंगे। नये मंत्रिमंडल ने 20 अगस्त को संसद की बैठक बुलायी। उसमें विश्वास का प्रस्ताव भी प्रस्तुत होता। श्रीमती इंदिरा गांधी जैसा संजय गांधी के विश्वस्त श्री कमलनाथ की डायरी से प्रकट हुआ, यह चाहती थीं कि उनके आपातकालीन अपराधों के लिए बनायी गयी गई स्पेशल कोर्ट रद्द कर दी जाय और संजय गांधी का मुकदमा उच्चतम न्यायालय से हटा कर दिल्ली के उच्च न्यायालय में भेज दिया जाय। चौधरी चरण सिंह ने अपने निकटतम अनुयायियों को भी ऐसा करने की सलाह को साफ-साफ इंकार कर दिया। इंका ने तब 20 अगस्त को सवेरे चौधरी सरकार का समर्थन नहीं करने का प्रस्ताव पारित कर दिया। चौधरी चरण सिंह ने राष्ट्रपति को अपनी सरकार का इस्तीफा तत्क्षण भेज दिया। उन्होंने संसद के समक्ष जाना समीचीन नहीं समझा।

जनता पार्टी के नये नेता बाबू जगजीवन राम ने तत्काल राष्ट्रपति से मिल कर सरकार बनाने का दावा किया। इस परिस्थिति में जनता (एस), ए० आई० डी० एम० के०, सी० पी० आई०, सी० पी० आई० (एम), ने लोक सभा को भंग करने की मांग की। वह भंग नहीं की गयी होती, अगर इंका बाबू जगजीवन राम का समर्थन करती। इंका समर्थन इस शर्त पर देना चाहती थी कि बाबू जगजीवन राम तीन महीने में चुनाव कराने की घोषणा करें। वह चौधरी चरण सिंह की काम चलाऊ सरकार के तत्त्वावधान में चुनाव नहीं कराना चाहती थी। लेकिन बाबू जगजीवन राम ने ऐसा आश्वासन देने से इन्कार कर दिया। उन्हें बहुमत पा लेने का पूरा भरोसा था। बाइस (22) अगस्त को जनता पार्टी का अष्टग्रह हर तरफ से पूरा उदय हो आया। अध्यक्ष चन्द्रशेखर और बाबू जगजीवन राम राष्ट्रपति से सवेरे मिले और उन्हें आश्वासन दे आये कि अपने समर्थकों की पूरी सूची शाम तक उनके पास भेज देंगे। राष्ट्रपति ने उनसे कहा कि उन्हें कोई जल्दी नहीं है। उनके राष्ट्रपति भवन छोड़ने के कुछ ही घंटों में राष्ट्रपति ने लोक सभा को भंग कर मध्यावधि चुनाव की घोषणा कर दी।

देश के सर्वोच्च पदाधिकारी ने अपने आश्वासन को क्यों नहीं निभाया, उसे इन पृष्ठों में जांचना निरर्थक है। देश के सर्वमान्य कानून विशेषज्ञों और राजनीति

विशारदों की राय एकमत थी कि राष्ट्रपति को बाबू जगजीवन राम को अपनी सूची भेजने के लिए पर्याप्त समय देना चाहिए था। राष्ट्रपति पर महाभियोग चलाने की बात भी उठी। लेकिन राष्ट्रपति जो कर चुके थे, उसे अमान्य करने का तरीका नहीं था। जनता पार्टी टूट गयी, जनता (एस) टूट गयी और मध्यावधि चुनावों में जो कदापि नहीं होना चाहिए था, वह हुआ। देश पर अकारण आपात स्थिति थोंप कर ऐतिहासिक कलंक लगाने वाली श्रीमती इंदिरा गांधी की कांग्रेस भारी बहुमत से चुन कर सत्ता में आ गयी। यह निस्संदेह जनता पार्टी की आपसी फूट का परिणाम था।

आज सारे देश को उसके लिए हार्दिक पश्चात्ताप है, क्योंकि श्रीमती गांधी का स्वभाव बढ़ती उम्र में बदल ही नहीं सकता। देश उनकी नीति और उनके तरीकों के कारण आज अराजकता और विघटन के कगार पर खड़ा है। विरोधी दल अब भी एकजुट नहीं हो रहे हैं। देश नहीं सबका स्वार्थ सर्वोपरि है।

उपर्युक्त साक्ष्य से यह प्रमाणित है कि जनता पार्टी को तोड़ने की मुख्य जिम्मेदारी प्रधानमंत्री श्री मोरार जी देसाई के विकट अहम् तथा जनता के संगठन के अध्यक्ष श्री चन्द्रशेखर की अवसरवादिता की है। वे दोनों पार्टी के घटकवाद को नियंत्रित रख पाने के सर्वथा अयोग्य थे और ईर्ष्यावश भारतीय लोक दल को कमजोर करने पर तुले हुए थे। श्री मधु लिमये अपनी नकारात्मक राजनीति के लिए अपने पूरे जीवन प्रसिद्ध रहे हैं। आखिर जनसंघ या राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ ने देश के साथ क्या विश्वासघात किया था कि वे उन्हें जनता पार्टी से निकाल बाहर करना चाहते थे। वे अपनी आदत से मजबूर होकर ध्रुवीकरण की चेष्टा कर रहे थे। इस तरह जाने-अनजाने वे श्रीमती इंदिरा गांधी का खेल खेल रहे थे। श्रीमती गांधी ने सन् सड़सठ के चुनावों के, जिसमें विरोधी दल ने बहुमत पा कर आठ राज्यों में संयुक्त विधायक दल बनाया, बाद से ही जनसंघ का हौवा-हल्ला खड़ा करना शुरू कर दिया था। उनको अल्पमत का अपना वोट बैंक बनाना था। श्री मधु लिमये का क्या उद्देश्य था ? अगर कोई उद्देश्य था भी तो उन्होंने जनता पार्टी के संगठन के समय ही जनसंघ को पार्टी से बाहर रखने की आवाज क्यों नहीं उठायी ?

श्री राजनारायण स्पष्टतः ही बदला लेने (इन्तकाम) की भावना से ग्रसित थे। उनका कहना है कि वे मंत्रिमंडल में शुरू में ही शामिल नहीं हो रहे थे। उनका आज भी दावा है कि उन जैसे सर्वहारा वर्ग के प्रतिनिधि और स्वतंत्र विचारक के लिए शासन तंत्र का सदस्य बनने का अभी समय नहीं आया है। उन्हें, उनका कहना है, मोरार जी भाई ने विवश कर मंत्रिमंडल का सदस्य बनाया। इसके लिए श्री देसाई ने उन पर उनके दीक्षा गुरु से भी जोर डलवाया। उनको मंत्रिमंडल में दुबारा न लेना उनका अपमान था। उद्देश्य भी ओछा था कि इस तरह चौधरी चरण सिंह कम-

जोर हो जायेंगे। श्री बरुण सेन गुप्ता ने अपनी 'लास्ट डेज़ आफ मोरार जी' में यह साफ-साफ अंकित किया है।

परिस्थितियों का खेल कोई जान नहीं पाता। एक ही चौराहे से गलत रास्ता भी पकड़ा जा सकता है और सही भी। चौधरी चरण सिंह को परिस्थितियों ने आक्रान्त जरूर किया। लेकिन बहुत खोजबीन पर भी कोई ऐसा साक्ष्य नहीं मिलता, जिससे उनको जिस पार्टी को उन्होंने अथक परिश्रम से बनाया, उसे भंग करने का दोषी ठहराया जाय। वे अन्त तक जनता पार्टी में बने रहे। उनका दोष उनकी नैतिक आस्था की गरिमा ही मानी जा सकती है, जिसके कारण उन्होंने कांति देसाई के भ्रष्टाचार के सत्यासत्य को जांचने पर जोर दिया। वह जनता सरकार की छवि को हर संदेह से ऊपर रखना चाहते थे। उन दिनों की आम धारणा थी कि अध्यक्ष चन्द्रशेखर ही नहीं, प्रधान मंत्री श्री देसाई भी पूंजीवादी परम्परा और उससे उत्पन्न भ्रष्टाचार के उसी प्रकार पोषक थे, जैसे इंदिरा कांग्रेस के शीर्षस्थ नेता। चौधरी साहब से चूक तब हुई जब जनता सरकार के विघटन के बाद जनता (एस) के नेता के रूप में उन्होंने श्रीमती इंदिरा गांधी जैसे व्यक्ति के समर्थन का विश्वास किया। श्रीमती गांधी सन् 1967 से ही चौधरी चरण सिंह के खिलाफ हिटलर के प्रचार मंत्री डाक्टर गोएबल्स की तरह सोते जागते विष वमन कर रही थीं कि उन्होंने कांग्रेस मुख्यमंत्री बनने के लिए छोड़ी, जबकि सत्य यह है कि कांग्रेस छोड़ने के पहले उन्होंने श्रीमती गांधी का मुख्यमंत्री बनने का अनुरोध ठुकरा दिया था। महान व्यक्ति को क्षुद्र विरोधियों का कोप सहना पड़ता है।

राजनीतिज्ञों को, विशेषकर मौजूदा हिन्दुस्तान के, गिरगिट की उपमा दी जाती है। चौधरी चरण सिंह निस्संदेह इसके ज्वलंत अपवाद हैं। वह साफ, सच्ची और नैतिकवादी राजनीति के समर्थक हैं। उनका एक विश्वास है कि भारत के बहु-संख्यक शोषित ग्रामवासियों के दैन्य को गांधीवादी नीतियों से ही मिटाया जा सकता है। उनका यह भी विश्वास है कि उस नीति को सबसे अच्छा वही कार्यान्वित कर सकते हैं। इस परम शुभ अहम् की ईर्ष्या का उन्हें शिकार होना पड़ा। उनके विरोधियों ने धंआधार प्रचार किया कि जनता पार्टी उनकी महत्त्वाकांक्षा के कारण टूटी। उपर्युक्त विवरण और घटनाक्रम से यह स्पष्ट है कि जनता पार्टी के विघटन में उनकी जिम्मेदारी किंचित् मात्र भी नहीं। सत्य का स्वरूप हमेशा देखने वाले की दृष्टि, दिशा और दूरी पर निर्भर करता है।

आने वाला कल

एक साधारण किसान का बेटा अपनी कर्मठता और बौद्धिकता के बल पर गांव की संकरी पगडंडियों और खेतों की मेड़ों पर एकाकी चल कर अपने राज्य तथा देश के राजपथ पर सधे डगों से मुख्य मंत्री के आसन पर बैठा तथा हिन्दुस्तान का प्रधान मंत्री भी बना। फिर भी उनका किसान का सीधा सच्चा रूप अक्षुण्ण रहा। इस असाधारण शौर्य और उत्कर्ष पर बड़े से बड़े रीझ कर भी ईर्ष्यावश उसका हर मोड़ पर विरोध करते रहे। किसी भाव भी भारत के अपरिग्रह की प्राचीन परम्परा में पगी उस प्रतिभा को वे समादृत नहीं होने देना चाहते थे। लेकिन पुष्पराज का सौरभ लाख कौशल से भी क्या कभी मिटा है ? वह विशिष्ट प्रतिभा राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के आह्वान की रूप थी। उसे अमान्य कर भी कोई भूल नहीं सका। वह बापू के संदेश की तरह नगर-नगर, गांव-गांव गूंजी। बापू भारत को राजनैतिक स्वतंत्रता के साथ-साथ आर्थिक स्वतंत्रता दिलाना चाहते थे। राजनैतिक स्वतंत्रता दिला कर ही वह चले गये। आर्थिक स्वतंत्रता लाने के प्रयत्न का भार उठाया उस किसान के बेटे ने, जिसने महात्मा गांधी का केवल दूर से दर्शन किया था और उनका भाषण सुना था, उनके साहचर्य में कभी नहीं रहा था। बापू के बाहर-भीतर की एकरस पवित्रता के सिद्धान्त को उसने अपने सार्वजनिक जीवन के प्रारंभ में ही अपनाया। उससे तप कर वह ईर्ष्यालु विरोधियों की दुरभिसंधि के बाद भी देश के सर्वोच्च पद पर अथाह-अथाह दरिद्रनारायण की सेवा में समर्पित परम शुभ जाज्वल्यमय नक्षत्र सा चमका। शुभ का विरोधी अशुभ होता है। अशुभ ने कुचक्र किया, जिससे शुभ पर ग्रहण जल्दी लग गया। लेकिन बापू का सपना कि इस सदियों के शोषित देश का प्रधान मंत्री एक किसान और मजदूर हो, निस्संदेह सच होगा। क्योंकि वही आर्थिक स्वतंत्रता के सपने को सच कर सकता है।

उसने जहां-जहां काम किया, अपने लक्ष्य को आंखों से ओझल नहीं होने दिया। उत्तर प्रदेश का जमींदारी उन्मूलन विधेयक उसका कनिष्ठ मंत्री की हैसियत से प्राय: पहला अति दूरगामी प्रभाव वाला महान क्रान्तिकारी काम था। सहस्रों-लाखों खेतिहर मजदूरों तथा भूमिहीनों को खेती की जमीनों पर स्वामित्व और बेदखली के भय से त्राण मिला। संत विनोबा के भूदान यज्ञ की तरह उत्तर प्रदेश का जमीन्दारी उन्मूलन भी गांधीवादी आन्दोलन था। राज्य सत्ता के माध्यम से उसकी उपलब्धि संत विनोबा भावे की भावनात्मक उपलब्धि से निस्संदेह अधिक व्यापक हुई। शायद इसी

कारण देश के दूसरे राज्यों ने अपने जमींदारी उन्मूलन विधेयक को उत्तर प्रदेश के सांचे में ढाला। कृषि की भूमि और जल तथा किसान के पशुधन के संरक्षण की ओर भी किसान के बेटे ने बहुत ध्यान दिया। महान सादगी से वही इसे कर सकता था, क्योंकि उसका परिवार और वह पांवों में बेवाई फटने की पीड़ा को जानते थे। वह जब दिल्ली आया, तब लगा कि जैसे गांव की निष्कलुष आत्मा आयी, किसानों का पुरुषार्थ आया। दिल्ली में देहात का यह कदम जिसे चौधरी चरण सिंह कहते हैं, आया तो खामोशी से, लेकिन जलजला बरपा कर रहा है। . आश्चर्य नहीं कि लोग इसे अपनी मिट्टी का बना देवता मानते हैं। वहीं सोंधी मिट्टी की महक, वही सोना उगलने की उसकी क्षमता।

जनता सरकार से देश के बहुसंख्यक अस्सी प्रतिशत ग्रामवासियों को बड़ी आशा थी। उस पर उनकी टकटकी बंध गयी थी। जनता सरकार ने अपनी घटकबाजी के विकराल अन्तर्द्वन्द के होते हुए काम बहुत अच्छा किया। प्रशासन में भारी मित-व्ययता, कृषि की उपज बढ़ाने के लिए सिंचाई के साधनों का विकास, उर्वरकों का कम दाम, गांवों में पीने के साफ पानी की व्यवस्था आदि ऐसा और इतना किया जितना पूरे पैंतीस साल में नहीं हुआ था। राजधानियों में कम दाम के नये होटलों की योजना भी चालू की गयी जिससे जन-जन की सुख-सुविधा में विषमता कम हो। ग्रामीण क्षेत्रों में अन्त्योदय और काम के बदले अनाज की योजना चलायी गयी। अजगर सी बढ़ी हुई महंगाई को रोकने के लिये मुद्रास्फीति पर नियंत्रण किया गया। प्रगति की दर को 5.2 प्रतिशत बढ़ाया गया, जो एक रिकार्ड था। रोजगार योजना के अधीन हर जिले में कुटीर और लघु उद्योगों का विभाग स्थापित किया गया। प्रौढ़ शिक्षा की स्कीम और हर गांव में स्वास्थ्य सहायकों के केन्द्र स्थापित किये गये। महात्मा गांधी के आदर्शों के अनुरूप लोक कल्याण की कितनी योजनायें शुरू की गयी। मशीन से ऊपर मानव को प्रतिष्ठित किया गया। यह गरीबी को मिटाने के सच्चे प्रयास का श्रीगणेश था। उस समय के आंकड़े पुकार-पुकार कर तत्कालीन प्रगतिपूर्ण शासकीय प्रयत्नों की सराहना कर रहे हैं। उन आंकड़ों को उद्धृत कर हम इस प्रकरण को लम्बा नहीं करना चाहते। संक्षेप में यही उल्लेख पर्याप्त होगा कि जनता सरकार ने ग्रामों की ओर अपनी नीतियों का मुंह सफलतापूर्वक मोड़ा। उसकी अल्प काल की उपलब्धियों पर किसी सरकार और देश का गर्व से भर आना स्वाभाविक है। इस उत्कृष्ट कार्य पर चाहे वह किसी विभाग से संबंधित क्यों न हो, उस किसान के बेटे के गम्भीर चिन्तन की छाया थी। उसने अपने विभाग में, गृहमंत्री के रूप में परम निर्भीकता तथा अदम्य साहस से तानाशाही के घोर भ्रष्टाचार, अमानुषिक शोषण और पाशविक अत्याचारों की निष्पक्ष जांच करानी शुरू की, जिससे संविधान के मौलिक अधिकारों को छीनने वालों को उनकी कुकरनी का फल चखाया जा सके। इसी प्रकार आपात

काल की स्थितियों का हमेशा के लिए दाह संस्कार हो जाता। वह हो नहीं पाया, पर वैसा करने का सच्चा उपक्रम तो हुआ !

देश अभी महात्मा गांधी वाली बुनियादी कांग्रेस के आकर्षण में था। साथ ही दुर्दान्त गरीबी और अशिक्षा के अन्धकार में पड़ा था। भारी उद्योगों की चमक-दमक की विकास के लिए निस्सारिता को जान कर भी तन-पेट साथ रखने के लिए देश अनबूझ बन गया। उसकी गलती से छलछंद वाली इंदिरा कांग्रेस फिर से सत्ता में आ गयी। उसका सबको—जन-जन को, तस्करों, मुनाफाखोरों, चोरबाजारियों और असामाजिक तत्वों को छोड़ कर—हार्दिक पश्चात्ताप है। इंका के कर्णधार अठारह अरब रुपया खेल-कूदों पर बिना हिचक खर्च कर सकते हैं। मगर राजस्थान की नहर या गांवों में साफ पीने के पानी पर व्यय करने के लिए उनके पास धन नहीं। दुर्नीति से देश की सर्वाधिक पीड़ित जनता नगर और गांव सभी जगह आक्रोश से जल उठी है। वह आज अपने मसीहा, किसान के बेटे, के लिए तड़प रही है, जिससे उसे दो जून की रोटी तो मिले, भले ही वह एक दिन के लिए ढाई हजार रुपये वाले पांच सितारे वाले होटल में न ठहर पाये। जनता जनार्दन अब समझ चुकी है कि जो गांव में पैदा नहीं हुआ, उसको गेहूं और जौ की बाल का फर्क मालूम नहीं, वह उनका दुःख-दर्द नहीं मिटा सकता। अब किसी छल, प्रपंच, धोखे से उन्हें नहीं लुभाया जा सकता।

उपर्युक्त एहसास के कारण ही आज किसान के उस महान सपूत के नेतृत्व में जनता का विकल्प फिर उभर रहा है। वह विकल्प आयेगा और गांव-गांव, जन-जन की व्याधि को मिटा कर हिन्दुस्तान को वह महानता प्रदान करेगा, जिसके बल पर वह कभी संसार का सिरमौर और ज्ञान गुरु था। हिन्दुस्तान का प्राचीन संकल्प है, सर्वे सुखिना भवन्तुः। यहां भी, बाहर भी, सब सुखी होंगे, बराबर होंगे भेदभाव मिटेंगे, जाति-पांति मिटेंगे और मेहनतकश मजदूर तथा उत्पादनकर्त्ता किसान पवित्र भारत भू का उत्कर्ष बन खिल उठेंगे। बापू दरिद्रनारायण के प्रतीक थे, चौधरी चरण सिंह उस प्रतीक की ज्वाला हैं। आज जन-जन को छल, फरेब, झूठ और धोखा सिखाया गया है, कल व्यक्ति-व्यक्ति स्वतंत्र और पवित्र होगा। अर्थलोलुपता का नंगा नाच ऋषियों के इस पुरातन देश से मिट कर रहेगा। आर्वाचीन युगद्रष्टा कार्ल मार्क्स और महात्मा गांधी के आदर्शों के बीच मध्य मार्ग के प्रणेता चौधरी चरण सिंह का अखिल विश्व के सुन्दर भविष्य के लिए यही शुभ संदेश है।

परिशिष्ट

विविध

एक ऐतिहासिक सिंहनाद

[चौधरी चरण सिंह, नेता विरोधी दल, उत्तर प्रदेश, द्वारा विधान सभा में दिनांक 23 मार्च, 1976 को दिया गया वह अभूतपूर्व भाषण, जिसे एतिहास कभी नहीं भूल सकता।]

अध्यक्ष महोदय,

आज जो वाद-विवाद होने जा रहा है, वह इस समय बहुत ही ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। यह दूसरी बात है कि इसमें भाग लेने वाले लोग इस प्रश्न का सामंजस्य कर सकें या न कर सकें, लेकिन इसमें दो राय नहीं हो सकतीं कि हिन्दुस्तान के भविष्य के सिलसिले में इससे ज्यादा संकट का समय गालिबन कभी नहीं आया और न आयेगा ही। पेश्तर इसके कि मैं आगे बढ़ूं ओर आगे कहना शुरू करूं, मैं माननीय नारायण दत्त तिवारी से और दूसरे सभी साथियों से जो सत्तासीन हैं, एक बात कहना चाहूंगा कि मेरी यह कोशिश होगी कि मैं उनसे दिल से बात करूं; लेकिन मसला ऐसा है कि हो सकता है मुझे कहीं-कहीं आवेश आ जाये और कठोर शब्द मेरी जबान से निकल जायें, जिनको यद्यपि में मैं कोशिश करूंगा न कहूं, उनको कहने के लिए वह मुझको माफ करने की कृपा करें।

आज देश की क्या स्थिति है ? स्थिति यह है कि लाखों आदमी जेल के अन्दर हैं। सन् 1942 का आन्दोलन गांधी जी के जमाने के आन्दोलनों में गालिबन सबसे ज्यादा ऐतिहासिक महत्त्व का माना जाता है; लेकिन उसमें कुल 60 हजार आदमी जेल गये थे। उस समय के होम मिनिस्टर के वक्तव्य के अनुसार, जो उन्होंने केन्द्रीय असेम्बली में दिया था, केवल इतने आदमी जेलों में बन्द कर दिये गये थे। आज श्री ओम मेहता के अनुसार एक लाख तीस हजार आदमी इस बार गिरफ्तार किये गये हैं। आप उसको एक लाख बीस हजार मान लीजिए या घटाकर एक लाख ही कर दीजिए, लेकिन पहले से कहीं ज्यादा (अंग्रेजी काल की गुलामी के जमाने से कहीं ज्यादा) आदमी इस बार जेलों में गये हैं। आप बढ़ी हुई आबादी के हिसाब से निकाल लीजिए, तब शायद आपको तसल्ली हो जाय। यह देश की बदकिस्मती है कि ऐसा हिसाब लगाने वाले यहां बैठे हुए हैं और लाखों आदमी या एक लाख आदमी आजाद देश में जेलों में पड़े हुए हैं।

पहले प्रधानमंत्री जी कम्युनिस्टों की भाषा में जनतंत्र को सोशल डेमोक्रेसी (सामाजिक लोकतंत्र) कहा करती थीं कि संविधान में बड़े भारी संशोधन की जरूरत है, लेकिन अब केवल डेमोक्रेसी (लोकतंत्र) कह रही हैं और कह रही हैं कि हम डेमोक्रेसी के अन्तर्गत कार्य कर रहे हैं और संविधान में ज्यादा संशोधन की जरूरत नहीं है। किन कारणों से उनके कथनों में तबदीली आ गई है, इस पर मैं कुछ नहीं कह सकता हूं, लेकिन इसमें शक नहीं है कि आज डेमोक्रेसी का दम भरा जा रहा है। दूसरी ओर एक लाख से ज्यादा आदमी जेल में हैं। वे किस तरह जेल में डाले गये हैं। महीनों उनके परिवार को यह नहीं मालूम हो पाया कि वे कहां बन्द किये गये हैं। 26 जून को सवेरे मुझे और मेरे सहयोगियों को गिरफ्तार कर लिया गया। देश के बड़े आदमियों की बात छोड़िये, क्योंकि आज तो शायद प्रधानमंत्री जी बड़ी हैं, चूंकि वह बहुत बड़े पद पर हैं, लेकिन ऐसे आदमी जिन पर देश गर्व कर सकता है, वे गिरफ्तार हुए और उनके घर वालों को यह नहीं बताया गया कि कहां वह कैद किये गये हैं। तीन चार मर्तबे मैं अंग्रेजों के जमाने में जेल गया हूं और उस जमाने की सारी बातें मुझे याद हैं। कभी अंग्रेजों के जमाने में ऐसा नहीं हुआ। यही नहीं कि दो महीनों तक गिरफ्तारशुदा लोगों के अजीजों, उनके बच्चों, उनके घर वालों से मुलाकात करने का मौका नहीं दिया गया, न उनको यह ही बतलाया गया कि क्या जुर्म उनसे हुआ है।

माननीय जयप्रकाश नारायण जी का, माननीय मोरार जी देसाई का और लोक सभा की डिबेट में एक बार माननीय राजनारायण जी का भी जिक्र आया कि इन्होंने अमुक पाप किया है। मैं रोज पढ़ता रहा कि मेरे पाप का भी जिक्र शायद इसमें आयेगा। नहीं, कम से कम मैंने नहीं पढ़ा। दोस्तों ने पढ़ा होगा, मुझे खुशी होगी जानकर। इस बार जरूर मेरा पाप था कि इंदिरा जी से हम लोग इस्तीफा मांग रहे थे। क्योंकि हाईकोर्ट से आप हार गयी थीं, इसलिए इतनी बड़ी प्राइम-मिनिस्टर को शोभा यह देता है कि वह इस्तीफा दे। जून माह में दिए हुए मेरे बयान दिल्ली के कुछ अखबारों में प्रकाशित हुए। मैं जानने का बहुत प्रयास करता हूं, तो मैं इन वक्तव्यों का ही अपना जुर्म पाता हूं। खैर, मेरा यह जुर्म हो सकता है। लेकिन सैकड़ों, हजारों ऐसे लोग हैं, जिन बेचारों ने कोई बयान भी नहीं दिया, फिर भी उन्हें जेलों में डाल दिया गया। नजरबन्दी के क्या कारण हैं, गिरफ्तारी के क्या कारण हैं, यह उनको नहीं बताया गया। हाईकोर्ट में कोई चला जाय और जानने की कोशिश करे कि किसी व्यक्ति विशेष के खिलाफ क्या अभियोग है तो हाईकोर्ट से भी नहीं बताया गया। यही नहीं मेण्टिनेन्स ऑफ इन्टरनल सिक्योरिटी ऐक्ट में, जिसको 'मीसा' भी कहते हैं, संशोधन कर दिया गया। मुमकिन है संविधान में किया हो, लेकिन मीसा कानून में तो संशोधन जरूर है कि हाईकोर्ट अगर स्वयं चाहे, तब भी उसको यह

अख्तियार नहीं कि किसी व्यक्ति के गिरफ्तार होने के कारण गवर्नमेंट की नजरों में क्या हैं, मालूम कर सके। इससे ज्यादा तानाशाही, स्वेच्छाचारिता और निरंकुशता इतिहास में कहीं मिलेगी ? और फिर मुझको अफसोस होता है कि ऊपर जो दोस्त बैठे हैं, वे लोकतंत्र का दम भरते हैं और आंख मींच कर हाथ उठाते रहते हैं; खैर इस सिलसिले में और अधिक कहना व्यर्थ है। इस बात को यहीं छोड़े देता हूं।

दूसरी बात जो हर आदमी को खटकेगी, यह है कि सारे मौलिक अधिकार, जो कि एक नागरिक के होते हैं, सब निलम्बित हैं, मान लो मैं आज जाना चाहूं, यहां का डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट आदेश दे सकता है कि आप पंजाब नहीं जायेंगे। अब पंजाब जाने का अधिकार या बंगाल जाने का अधिकार या किसी तरह का व्यापार करने का अधिकार, सभा करने का अधिकार, बोलने का अधिकार, जो कि एक व्यक्ति की स्वतंत्रताऐं होती हैं, वह सभी ले लीं गयी है। मैं जानना चाहता हूं कि मुझे पंजाब क्यों नहीं जाने दे रहे हैं ? परन्तु कोई बताने की जरूरत नहीं है। यह नहीं, पंजाब जाने की बात छोड़िए, अगर किसी व्यक्ति को कोई व्यक्ति शूट कर दे (गोली मार दे) या बदला निकालने के लिए सब इन्स्पेक्टर शूट कर दे और गोली खाने वाला व्यक्ति बच जाये, तो उसको यह हक हासिल नहीं है कि वह कचहरी में जाकर मालूम कर सके कि उसके परिवार वालों को यह हक हासिल नहीं है कि वह जान सकें कि उस पर गोली क्यों चलायी गयी ? और मर जाय तो उसके परिवार वालों को यह हक हासिल नहीं है कि वह जान सकें कि ऐसा क्यों हुआ ? आपके एटार्नी जनरल ने हैबियस कारपस की बहस के समय सुप्रीम कोर्ट में स्वयं तसलीम किया है। मैं जानता हूं कि इतिहास में कोई और मिसाल हैं ?

अध्यक्ष महोदय ! पुलिस को कितने अधिकार हैं—जो चाहें कर दे, ऐसे हक हैं। सारे अधिकार उनको दे दिए गये हैं। यदि आपको नागरिकता के सारे अधिकार लेने ही थे और व्यक्तिगत आजादी को जब्त करना ही था, तो पावर अपने हाथ में ही रखनी चाहिए थी। लेकिन ऐसा नहीं किया गया। आप बड़े से बड़ा संगीन मामला होम मिनिस्टर, चीफ मिनिस्टर, प्राइम मिनिस्टर से कह लीजिए, लेकिन कोई सुनवाई (राहत) नहीं है। किसी भी सब इंस्पेक्टर को या पुलिस वाले को सजा नहीं मिलेगी ? आपकी गवर्नमेंट उन्हीं के बल पर चल रही है।

मुझे नहीं मालूम कि मेरे साथी इत्तफाक करेंगे कि नहीं, लेकिन मैं तिहाड़ जेल में जब दिल्ली की पुलिस के अत्याचार की कहानी सुनता था, तो मैं बार-बार उत्तर प्रदेश की पुलिस की तारीफ करता था। मैंने वाराणसी जेल में अपनी पार्टी के एक सज्जन को उनके खत के जवाब में लिखा था कि दिल्ली की पुलिस बिल्कुल बेलगाम है। मैं समझता हूं उत्तर प्रदेश में ऐसा हाल नहीं है। जैसा मैंने उनको सन् 1967 में और सन् 1970 में देखा था, मुझे कोई शिकायत यहां की पुलिस से नहीं थी। देश की

बरबादी के लिए नौकरशाही बहुत कुछ जिम्मेदार है, लेकिन इतना नहीं जितना कि राजनीतिक नेतागण। क्या हुआ इस पुलिस को ? अब मैं बाहर आया हूं। मुझे पुलिस की बर्बरता के कुछ किस्से सुनाए गये। अन्त में जिम्मेदार नारायणदत्त तिवारी जी और आपसे पहले हमारे एक दो बड़े अच्छे-अच्छे व्याख्यान देने वाले थे, जिम्मेदार हैं। दूसरे महकमों में मिनिस्टर के काम करने के ढंग का इतनी जल्दी असर नहीं पड़ता है, जितनी जल्दी होम मिनिस्टर के रवैये का असर पुलिस वालों पर पड़ता है।

जेल में राजनीतिक बन्दियों के साथ जो बर्ताव हुआ है, वह अच्छा नहीं था, बमुकाबिल, दिल्ली, हरियाणा और पंजाब के जैसी इत्तिला मेरे कान तक तिहाड़ जेल में आती थी। मैं समझता हूं कि वह सब कृपा है बहुगुणा जी की। मुझे माफ करेंगे वह। आज उन्हें हाउस में होना चाहिए था। मैं नहीं कह सकता कि वे इसका प्रतिवाद कर सकेंगे या नहीं। सुना है कि बरेली जिले के जिला परिषद् की एक मीटिंग में गये हैं। वहां उन्होंने इन राजनीतिक बन्दियों के बारे में कहा, जो उनके मुखालिफ हैं कि जेल में जो ऐसे लोग पड़े हैं (कम्बख्त और क्या-क्या कहा) उनसे अगर मेरा बस चलता तो मैं पत्थर तुड़वाता और गंगा और यमुना की रेत छनवाता। हम उनके या आपके दुश्मन हैं, क्योंकि हम आपसे मतभेद रखते हैं। इसका अन्त कहां जाकर होगा ? हमारी क्या नीतियां होंगी, इसके सम्बन्ध में मतभेद हो सकते हैं। मतभेद होना कोई पाप नहीं है। आपके और हमारे दृष्टिकोण में अन्तर हो सकता है, लेकिन यह क्या कि जो आपसे मतभेद रखते हैं, वह देशभक्त नहीं हो सकते ? वे देश के दुश्मनों से मिले हुए हैं। मैं यह कह रहा था कि आपके दृष्टिकोण का असर पुलिस पर और सारे प्रशासन पर पड़ेगा। बरेली में, आगरा में और अलीगढ़ में जो अत्याचार हुए हैं, वह मैं थोड़े से आपको सुनाना चाहता हूं।

अध्यक्ष महोदय, पहले मैं बरेली की बात सुनाता हूं। वहां पर एक रमेश आनन्द नाम का छात्र था, जो एम० एस-सी० प्रथम वर्ष (मैथेमेटिक्स) का विद्यार्थी था, जिसकी उम्र 23 वर्ष थी। उसे 26 अक्तूबर सन् 1975 को घर से सर्किल इंस्पेक्टर कोतवाली ने बुलाया और सायं 6 बजे से रात्रि 2 बजे तक उसको पीटा। दोपहर दो बजे बन्दी बनाया गया। 4 बजे एक दूसरे लड़के वीरेन्द्र अटल को घर से लाया गया और शाम 4 बजे से ही दोनों से एक साथ पूछताछ की गई। साइक्लोस्टाइल मशीनों के बारे में गालियों की बौछार करते हुए उनसे पूछा गया और बताने से इन्कार करने पर उनको पीटना शुरू कर दिया गया। बाद में जिलाधीश श्री माता प्रसाद जी भी आ गये। उनको देखकर पीटने वालों की हिम्मत और बढ़ गई। बजाय कम होने के और क्षमा याचना का रवैया अख्तियार करने के डी० एम० की आँख बतला रही थी कि ठीक कर रहे हो और रस्सी से हाथ बांध कर पीटना शुरू कर दिया गया। पीटते-पीटते 4 बेंत तोड़ डाले गये, परन्तु दोनों में से किसी ने भी अपना

मुंह नहीं खोला। यह देखकर लहीम-सहीम हाकिम राय इंस्पेक्टर का क्रोध और भड़क गया। डी० एम० को खुश करने का उसे अच्छा मौका नज़र आया। अतएव बिजली के प्लास से रमेश आनन्द के हाथ का अंगूठा बड़ी क्रूरता से दबाया। खून की धार बह चली। इसके बाद उसी से अंगुली दबायी और बहुत ही बेजा-बेजा गालियां दी। इसके बाद उसने वीरेन्द्र अटल के हाथ की एक-एक कर चार अंगुलियां लहू-लुहान कर दीं और कहा सब नाखून खींच लूंगा, नहीं तो बताओ कहां रहता है प्रचारक, कहां से होता है साइक्लोस्टाइल आदि। जब नाखूनों को प्लास से दबाने पर वे कुछ नहीं कर पाये तो जमीन पर (मौजूदा गवर्नमेंट से मतभेद करने की यह हिम्मत) कह कर पटक दिया गया और पैर ऊपर करके बेतों से इतनी पिटाई की कि तीन बेंत और टूट गये। दोपहर से लेकर अगली दोपहर तक चाय भी नहीं पिलायी गयी, भोजन तो दूर रहा। 29 अक्तूबर को दोपहर पैदल चलाकर और हथकड़ी डालकर जेल भेज दिया गया। जेल में सब कैदियों की मांग पर 29-30 अक्तूबर सन् 1975 की रात में दोनों की डाक्टरी जांच हुई। जिसमें प्रत्येक के शरीर पर ग्यारह चोटें दर्ज की गई। इतना घोर अमानुषिक अत्याचार किया गया।

चेतराम को तो इतना मारा गया कि पिटते-पिटते उसकी मृत्यु ही हो गयी। इनकी फोटो भी मौजूद है। इनकी कहानी सुन लीजिए। व्यवसायी। उम्र 40 वर्ष। काली बाड़ी, बरेली। 23 नवम्बर सन् 1975 को चेतराम ने अपने एक साथी शिव-नारायण के साथ सत्याग्रह किया। थाना किला के इंस्पेक्टर रणविजय सिंह ने थाने ले जाकर लात घूसों और डण्डों से बहुत पिटाई की, जिससे चेतराम के शरीर में बहुत मार्मिक चोटें आयीं। बाद में उन्हें जिला जेल बरेली भेज दिया गया। इस प्रकार अपनी चोटों की असहनीय पीड़ा के कारण 12 दिसम्बर को उन्होंने शरीर त्याग दिया और शहीदों में अपना नाम लिखा लिया। तानाशाही के नंगे नाच का यह एक नमूना है। ज्ञानेन्द्र देव, छात्र बी० एस-सी० प्रथम वर्ष, बरेली कालेज, उम्र 19 वर्ष, उनका एक दूसरा साथी था, जिसकी उम्र 22 वर्ष थी और एक अध्यापक तीसरा। इन तीनों ने बरेली कालेज में एक साथ सत्याग्रह किया। थाना बारादरा के इंस्पेक्टर श्री शैलेन्द्रनाथ घोषाल ने थाने में ले जाकर उनकी बहुत पिटाई की और उनसे तरह-तरह की पूछताछ की। पर इन लोगों ने कुछ नहीं बतलाया। झक मार कर उनको जेल भेज दिया गया। विश्वबन्धु नाम के एक अन्य साथी भी थे, उनको मैं अब छोड़े देता हूं।

अब जिला पीलीभीत के उत्पीड़न की बात सुनिये। पीलीभीत में पुलिस शासन ने अपना आतंक फैला रखा था। वहां के पुलिस इंस्पेक्टर श्री गौड़ और श्री तिवारी ने घोषणा कर रखी थी कि पीलीभीत में सत्याग्रह नहीं होगा। अब इसको साबित करना था कि सत्याग्रह नहीं हुआ। परन्तु सत्याग्रह हुआ और सत्याग्रहियों की बेहयाई से पिटाई की गई।

आगरा डिवीजन की पिटाई संबंधी बहुत सी घटनाएं हैं, लेकिन दो सुनाता हूं। एक डाक्टर हैं अलीगढ़ के श्रीनिवास पाली, उनको अपने घर पर पकड़ा गया और पुलिस स्टेशन ले जाकर वहां उन्हें एक दरख्त पर पैर ऊपर करके लटका दिया गया, पैर ऊपर सिर नीचे। और इस तरह से उनको दो दिन तक पीटा गया। एक लड़के को तो लोहे की सलाखों से पीटा गया। 28 नवम्बर को श्री तेजसिंह और उनके 9 साथियों को जो अतरौली के रहने वाले हैं, पुलिस लाइन अलीगढ़ में ले जाकर पीटा गया और उनको पीने के लिए पानी के बजाय पेशाब दिया गया। एक बूढ़ा किसान ज्ञान सिंह था, उसे इतना पीटा गया कि दो दांत टूट गए। और इन सब लोगों से यह भी कहा गया कि तुम अपने जूते से एक दूसरे को पीटो। बाला सिंह नाम के व्यक्ति को इतना पीटा गया कि 26 दिसम्बर सन् 1975 को जेल में जाकर उसका इन्तकाल हो गया। 18-19 दिसम्बर को सत्याग्रह हुआ था। इसी तरह से मथुरा में सिरोहा और डी० वी० चौधरी को खूब पीटा गया। पहली दिसम्बर को रामप्रसाद और उसके दूसरे साथी जो बनारसीपुल के रहने वाले हैं, उनको बलदेव पुलिस स्टेशन के तोमर और त्यागी नाम के पुलिस अफसरों ने खूब पीटा। इतनी पिटाई की कि उनके मुंह और नाक से खून बहना शुरू हो गया। एक पत्रकार हैं, नाम है देवनन्दन कुदेशिया काफी लोग उनको जानते हैं। उनकी पिटाई की जाती है और तब तक पीटा गया आखिर बेहोश हो गया। बुलन्दशहर के कई मामले हैं, लेकिन मैं उनको छोड़ देता हूं। लेकिन कानून अपनी जगह पर है। कानून के खिलाफ कुछ नहीं हो सकता। कानून के माने यह नहीं है कि नाखून खींच लिया जाय और पेशाब पिलाया जाय और लगातार पिटाई की जाए। यह बात नहीं है कि इनकी सूचना ऊपर के अफसरों को न हो।

मेरे साथियों ने मुझे तफसील में बताया है कि उन्होंने डी० एम० को लिखा, एस० पी० को लिखा, लेकिन कोई कार्यवाही नहीं हुई। कल ही मेरे पास देवरिया के कुछ लोग आये। मैं उनको नहीं जानता, उन्होंने कहा कि पुलिस ने बिना कारण उन्हें बन्द कर दिया था। डी० आई० जी० के पास गये, शिकायत की, लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला। वे लोग कह रहे थे कि अब 'मीसा' में बन्द करने का इरादा है। मैंने कहा लिख कर दे दो, नारायणदत्त जी मेरे साथी रहे हैं, उनसे कहूंगा, लाये शाम को लिखकर! मैंने कहा कि आज मेरी तबियत कुछ अच्छी नहीं है। वैसे भी मैं मशगूल रहूंगा। 24-25 को मिलना। पुलिस वालों की यह हिम्मत है, क्यों है? क्या पुलिस इस देश की मालिक है या आपलोग हैं? यह पुलिस का हाल है। मैं तो नहीं कहता कि उनका दोष है। वह तो एक मशीन है, किसी भी तरह इस्तेमाल कर लीजिए, उसी तरीके से काम करेगी, जैसा आपका दृष्टिकोण होगा।

कांग्रेस पार्टी पावर में हमेशा रहना चाहती है। अगर कोई कुछ कहने की

हिम्मत करता है, तो वह देश का दुश्मन कहा जाता है, देशद्रोही कहा जाता है। विरोधियों के पास दुनिया में 'देशद्रोहियों' जैसा बर्ताव डेमोक्रेसी (लोकतंत्र) में नहीं, बल्कि डिक्टेटरशिप (तानाशाही) में किया जाता है। वैसा ही बर्ताव यहां किया जा रहा है।

अब मजिस्ट्रेटों के विषय में सुनिए। मजिस्ट्रेट पुलिस पर निर्भर हैं, जैसा पुलिस कहेगी, बिल्कुल वैसा ही करेंगे। खुद वे अपना निर्णय नहीं ले सकते। जो सुपरिन्टेन्डेन्ट कहेगा, वही मजिस्ट्रेट कहेगा। हां, एक-दो मजिस्ट्रेट ऐसे भी हैं, जो सुपरिन्टेन्डेन्ट क्या कहता है, उसकी परवाह नहीं करते। अगर आप इनाम दे सकें, तो मैं आपको नाम बताऊं। लेकिन अधिकांश लोग ऐसे हैं, जो पुलिस के कहने के मुताबिक ही काम करते है। फिर मजिस्ट्रेटों की जरूरत ही क्या है? पुलिस वाले ही मुकदमा चलायें और जो चाहें करें। एक युवक सब इंस्पेक्टर एक प्रोफेसर को गिरफ्तार करने आया। वह युवक उसका विद्यार्थी रह चुका था। प्रोफेसर का नाम बताना मैं जरूरी नहीं समझता हूं। लेकिन उन जैसा ईमानदार व्यक्ति मिलना मुश्किल है। वह यूनीवर्सिटी में प्रोफेसर हैं। सब इंस्पेक्टर ने उनके पैर छुए और कहा कि गुरु जी आज हम आप को गिरफ्तार करने आये हैं। वह बोले क्यों? उसने कहा कि हुक्म है। उन्होंने कहा मेरा क्या कसूर है? उसने कहा कि यह मैं नहीं जानता। प्रोफेसर तिहाड़ जेल में गये। मुकदमा पेश हुआ। धीरे-धीरे उस युवक सब इंस्पेक्टर के मन पर सच्चाई हावी हो गयी और उसने अदालत में कह दिया कि मामला झूठा है, परन्तु प्रोफेसर साहब की फिर भी रिहाई नहीं हुई।

रोजाना क्या किस्सा होता था कि जेल से लोग छूटते थे और जेल के फाटक पर गिरफ्तार कर लिए जाते थे और दूसरे या तीसरे दिन मजिस्ट्रेट के सामने मुकदमा पेश हो जाता कि अमुक कोने पर 30 आदमी इकट्ठा थे और कह रहे थे कि गवर्नमेंट निकम्मी है। वह इस तरह फिर गिरफ्तार कर लिये गये। पुलिस का कहना था कि वह छूटते ही व्याख्यान देते थे। सेशन जज आर्डर करता, तो उनको रिलीज (रिहा) करना पड़ता। फिर बाहर आया, फिर केस बना दिया गया। एक व्यक्ति को पुलिस ने तीन दिन तक हवालात में रखा, चूंकि पुलिस अफसर के यहां शादी थी। फिर वह मजिस्ट्रेट के सामने हाजिर किया गया। मजिस्ट्रेट ने अपनी मजबूरी जाहिर की और सजा का हुक्म सुना दिया। परन्तु मजिस्ट्रेट को कौन कहे? सुप्रीमकोर्ट के जज के साथ क्या बर्ताव नहीं किया गया? वहां जिस तरह के कन्फरमेशन (स्थायीकरण) और प्रोमोशन (पदोन्नति) होते हैं, वह भी मिसाल है। सन् 1973 की बात है; एक फैसला गवर्नमेंट के खिलाफ होता है। तीन न्यायाधीश उस फैसले के देने में शामिल थे, उन तीनों को सुपरसीड कर दिया जाता है। क्या वह नाकाबिल थे, यह नहीं बताया जाता है और एक जूनियर

आदमी को चीफ जस्टिस मुकर्रर कर दिया जाता है। मैं ज्यादा इसके बारे में नहीं कहना चाहता हूं। केवल एक बात कहना चाहता हूं कि जिस तरह सुपरसीड किया जाता है और ऐसे व्यक्ति को ऊपर रखा गया है, जो हर प्रकार से जूनियर था, उसका असर न पड़े यह मुश्किल है और पंजाब हाईकोर्ट में भी यही हुआ कि एक सीनियर जज को जिसकी सारा बार, सारे वकील इज्जत करते हैं, सुपरसीड किया गया और नियुक्ति उस जज की की गई, जिसका फैसला गवर्नमेंट के माफिक हुआ करता था। मैं जजों की शान के खिलाफ नहीं कहूंगा, लेकिन फैसला गवर्नमेंट के माफिक होता था। इसलिए उनका प्रोमोशन हुआ। दिल्ली हाईकोर्ट के दो जज रंगनाथन तथा अग्रवाल हैं। ऐसा इत्तिफाक है कि इनके तीन-चार जजमेंट गवर्नमेंट के खिलाफ जाते हैं। कुलदीप नैयर, जो स्टेट्समैन के सम्पादक रह चुके हैं, विख्यात पत्रकार हैं, उन्होंने कई किताबें लिखी हैं, जिनसे इन्दिरा जी खुश नहीं हो सकतीं। इसलिए उनको जेल भेज दिया। अगस्त में मुलाकात खुल गयी थी। मैं फाटक पर गया था, तो उनसे मुलाकात हो गयी। उनका कसूर यह था कि सच्चर साहब, जो कांग्रेस के लीडर थे, उनके वह दामाद हैं। सच्चर साहब ने इन्दिरा जी को यह पत्र लिखने की जुर्रत की कि आपने जिस तरह से इमरजेंसी लगायी है और जिस तरह लोगों को गिरफ्तार किया जा रहा है, वह मुनासिब नहीं है। इस पर पुन: विचार करें। सच्चर साहब शायद उड़ीसा के गवर्नर रह चुके हैं। बस उनके लिखने से इन्दिरा जी नाराज हो गयीं। उनको जेल भेज दिया गया। ससुर को जेल और दामाद को भी जेल। जिस दिन मैं फाटक पर गया था, उस दिन उनकी बहू मुलाकात करने आयी थी। यह मजाक भी अच्छा रहा। मैंने उनसे कहा कि घबराना नहीं, सच्चर साहब को तकलीफ नहीं होगी। उन्होंने कहा कि मैं कहां घबराती हूं। ससुर और दामाद साथ-साथ रहेंगे। ससुराल में आ गये हैं। बाद में सच्चर साहब को छोड़ दिया गया। कुलदीप नैयर साहब ने हाईकोर्ट में रिट फाइल कर दी। वह इस बेंच के सामने आ गई। गवर्नमेंट के वकीलों ने बेंच का रुख भांप लिया। पेश्तर इसके कि रिहाई का आर्डर दे सकें, गवर्नमेंट को रिलीज (रिहा) करने का आर्डर देना पड़ा। इसलिए कि ऐसा न करने पर बदनामी होती। एक दो और केस इसी तरह के हुए। आर० एन० अग्रवाल का कन्फरमेशन (पुष्टिकरण) होना चाहिए था। लेकिन उनके दो जूनियर व्यक्तियों का प्रोमोशन (तरक्की) किया गया और उनको सुपरसीड करके डिस्ट्रिक्ट जजी पर वापस कर दिया गया। हाईकोर्ट व सुप्रीमकोर्ट के बार ने एक रिजोल्यूशन (प्रस्ताव) पास किया। इनको किस बात की सजा मिली? जूनियर आदमी को कन्फर्म (स्थायी) किया गया और सीनियर आदमी को सुपरसीड किया गया। मुझको एक एडवोकेट ने बताया। मैंने एक एडवोकेट साहब को बुलाया था। मैं रिट पिटीशन फाइल करना चाहता था, ताकि जो विधायक जेल में हैं,

उनको राज्यसभा और विधान परिषद् के चुनावों में वोट डालने की पूरी सहूलियतें दी जा सकें। इसके लिए दिल्ली हाईकोर्ट के एडवोकेट को बुलाया गया। उन्होंने बताया कि आज एक रिजोल्यूशन पास किया है और डेपुटेशन लेकर इन्दिरा जी के पास जा रहे हैं। फिर मेरी उनसे बात नहीं हुई। मुझे नहीं मालूम क्या हुआ; लेकिन मैंने सुना यह है कि कोई नतीजा नहीं निकला। कई और जजों के साथ भी यही बर्ताव हुआ है। जो जज सरकार के खिलाफ निर्णय लेता है, उसके खिलाफ जुलूस निकाला जायेगा। नारायणदत्त जी की कोठी के सामने उसका पुतला जलाया जायेगा कि सी० आई० ए० (अमरीका के खुफिया विभाग) से मिला हुआ है, कितने आदमी हैं, जिनमें विरोध करने की हिम्मत हो। ऐसे-ऐसे आरोपों के बाद वे चुप बैठ जायेंगे। न्यायधीशों की क्या हिम्मत है कि आपकी निगाह न देखकर आपके खिलाफ फैसला दे सकें। लेकिन खुशकिस्मती की बात है कि कुछ लोग अभी बचे हुए हैं। बंगाल हाईकोर्ट, भोपाल हाईकोर्ट, इलाहाबाद हाईकोर्ट, दिल्ली हाईकोर्ट के जो फैसले हुए हैं, उनसे कुछ आशा बंधती है।

अब लीजिए ऑल इण्डिया रेडियो और टेलीविजन को। वह तो गवर्नमेंट के प्रोपेगैण्डा के माध्यम हो गये हैं। रेडियो से सिर्फ गवर्नमेंट का ही प्रोपेगैण्डा होता रहता है, वह गवर्नमेंट की वाणी बन गया है। वास्तव में वह केवल गवर्नमेंट की वाणी नहीं बनाया जा सकता, वह केवल कांग्रेस पार्टी के लिए ही नहीं, बल्कि वह सारी जनता के लिए है। विपक्ष के सभी नेता लोग कहते-कहते थक गए हैं कि रेडियो का एक निगम बना दिया जाय, लेकिन यह नहीं हो पाया है। केवल गवर्नमेंट के मात्र प्रचार का यह साधन बन गया है। क्या यह उपयुक्त है? लोकतंत्र की यह धारणा नहीं है, हां अधिनायकवादी लोकतंत्र में यह हो सकता है। जितने आरोप गुजरात सरकार पर लगाये गये हैं, वह सब रेडियो पर आये? लेकिन वहीं के मुख्य मंत्री श्री बाबू भाई पटेल का कुछ नहीं आया। हितेन्द्र देसाई ने जो आरोप लगाये वे सभी आये, क्योंकि वह कांग्रेस के लीडर हैं, लेकिन गवर्नमेंट के प्रतिनिधि की हैसियत से मुख्यमंत्री ने जो जवाब दिया, वह नहीं आया। आचार्य भावे ने कभी कोई बात कहीं, लेकिन, जो शब्द रेडियो पर आए, वह उन्होंने नहीं कहे थे, उन्होंने इसका खन्डन किया। रेडियो न सरकार के मतलब के शब्दों का खूब प्रोपेगैण्डा किया और कहा कि आचार्य भावे ने कहा है, "इमरजेंसी अनुशासन पर्व है।" जेल में हमारे एक साथी ट्रांजिस्टर सुना करते थे। वे बताया करते थे कि एक नौजवान जिसका नाम संजय गांधी है, उनका प्रोग्राम रेडियो पर आ रहा है। हमारी बहिन इन्दिरा जी का युवराज सुपुत्र संजय गांधी का रेडियो पर प्रोग्राम आ रहा है। मैं जानना चाहूंगा कि इसका क्या औचित्य है? किस नाम, किस उसूल (सिद्धान्त) से ऐसा किया जाता है? क्या कभी उन्होंने कांग्रेस में रहकर ही कोई जनसेवा का कार्य

किया है ? अब मैं आपसे पूछता हूं कि इन तथ्यों से आपके अंतःकरण को चोट लगती है या नहीं ?

अखबारों पर प्रतिबन्ध लगा हुआ है। सन् 1942 में 60-70 हजार आदमी गिरफ्तार हुए और उसका असर आज तक हमारे दिमाग पर है कि कितना बड़ा आन्दोलन था। आज दूने आदमी गिरफ्तार हुए, लेकिन लोगों को लगता है कि कोई आन्दोलन ही नहीं है। क्योंकि कोई अखबार कुछ छाप ही नहीं सकता है, छाप नहीं रहा है। अंग्रेजों के जमाने में भी ऐसा सेंसर (प्रतिबन्ध) नहीं था, जैसा आज है।

राजनारायण जी का मामला सर्वोच्च न्यायालय में पेश था। संजय गांधी जाते हैं, सुप्रीमकोर्ट में मामले को सुनने के लिए। इसलिए पुलिस वकीलों को एक जगह से दूसरी जगह जाना रोक देती है, क्योंकि संजय गांधी आये हुए हैं; उनको खतरा हो सकता है। सुप्रीम कोर्ट के बार एसोसिएशन की मीटिंग होती है, पुलिस की निन्दा की जाती है। क्योंकि जस्टिस महोदय के पास उनका एक डेपुटेशन जाता है कि पुलिस किस तरह वकीलों को रोकती है, इसलिये चीफ जस्टिस प्रधान मंत्री को लिखता है। क्या यह एक ऐसी चीज है, जिसमें लोगों को दिलचस्पी नहीं होनी चाहिए। लेकिन यह खबर अखबार में नहीं छपी, क्योंकि सेंसर था। कौन से नार्म्स (पैमाने) हैं ? यह आपका लौह-पूजा क्या जाहिर करता है ? आपके ऐसे रवैये के सम्बन्ध में कुलदीप नैयर का जजमेंट हुआ। एक दो पेपर में आखिरी पृष्ठ पर अथवा आखिरी कालम में कुछ छपा, लेकिन आम तौर पर नहीं छापा गया। इसी तरह से प्रेसीडेंसी जेल कलकत्ता टूट जाती है। लगभग 67 नक्सलाइट कैदी दिन के दो बजे जेल तोड़कर आजाद हो जाते हैं। पटना जेल इसी तरह टूट जाती है, लेकिन यह सब अखबारों में नहीं आता। इसी तरह से दिल्ली में तिहाड़ जेल टूट जाती है। राजनीतिक कैदी नहीं निकला था, गैर राजनीतिक कैदी 10-12 निकल जाते हैं। एक भी कैदी अगर छूटने की तारीख से पहले जेल से भाग जाता है, तो बड़ी खबर बन जाती है, लेकिन इतनी जेलें टूटीं, उनकी खबर अखबारों में नही आयी। कितनी ही ऐसी चीजें हैं, जो जरूरी नहीं थी, उनकी बाबत तो बतलाया जाता है, लेकिन जो जरूरी थी उनकी बाबत नहीं बतलाया गया। विपक्ष के किन लोगों की साजिश गवर्नमेंट को गिराने की है, जिसके लिये आपने सेंसर लगाया ? मौलिक अधिकारों में अखबारों की आजादी का अपना अलग महत्व है। लोकतंत्र के चार अंग माने जाते हैं—न्यायपालिका, विधायिका, कार्यपालिका और प्रेस। न्यायपालिका के बारे में मैं बता चुका हूं। कार्यपालिका के बारे में भी बता चुका हूं। विधायिका का यह हाल है कि 336 एम० पी० लोक सभा में आंख मींच कर हाथ उठाते रहते हैं। चौथा है, प्रेस, जिसकी बाबत मैं कह ही चुका हूं।

बात यह है और बड़े अफसोस की बात है कि हमारी प्रधान मंत्री कभी सच

नहीं बोलेंगी—कभी नहीं बोलेंगी। लिख लीजिए, इसका जवाब दे दीजिएगा। जो बयान उन्होंने दिये हैं, उसमें गलत बयानी ही अधिक की गयी हैं। कहती हैं—कहां है सेंसर। नारायणदत्त जी, यहां यू० पी० में सेंसर है या नहीं? हिन्दुस्तान में है या नहीं? गाइड लाइन्स के नाम से आदेश दे दिये गये हैं। इनके खिलाफ अगर प्रेस वाले कुछ करें, तो फौरन कार्यवाही। बिजली कनेक्शन काट दिया जायेगा। अखबार छपना बन्द हो जायेगा और कोई अपील नहीं होगी। यह है आपका हाल। कहीं भी गाइड लाइन्स ऐसी ही हैं, और सुना है कि आपको इस बीच कुछ और गाइड लाइन्स जारी हुई हैं, 22 मार्च को। उसमें किसी के दस्तखत नहीं हैं कि कहां से, किसके हुक्म से जारी हुई हैं। अगर कोई प्रेस वाला न माने और यह कहे कि गाइड लाइन्स पर किसी के दस्तखत नहीं थे, तो सम्भव है, इन्फारमेशन (सूचना) डिपार्टमेंट डी० आई० आर० और हाइकोर्ट से तो बच जायेगा, परन्तु आपके हाथ में इतनी शक्ति है कि उसको रगड़ कर सुखा देंगे। आपने प्रेस को क्या बना दिया? आज मैंने सुबह पाइनियर देखा, उसमें कोई न्यूज (खबर) ही नहीं थी। ऐसे ही और पेपर्स (समाचार-पत्र) हैं। ए-टू-ज़ैड (एक से सौ तक) दो ही नाम उसमें हैं—एक हमारी बहिन जी हैं और दूसरा हमारा भान्जा है।

मैं अभी 19-20 तारीख को बम्बई गया था। चार-पांच दलों के नुमाइन्दों ने इकट्ठा होकर यह तय किया कि एक जबरदस्त विपक्षी पार्टी बनायी जाये, फैसला हो गया। 20 तारीख को दोपहर को मीटिंग में मैं मौजूद था। लेकिन 21 तारीख को मुझे यहां आना था, इसलिए मैं इजाजत लेकर वहां से चला आया। उस रोज एक प्रस्ताव एक सज्जन लिखकर लाये। जयप्रकाश नारायण जी की तबियत ठीक नहीं थी, इसलिये नहीं आ पाये। इसलिए यह हुआ कि 21 मार्च को उन्हें दिखाकर वह रिजोल्यूशन रिलीज कर (निकाल) देंगे। वह 22 मार्च को अखबारों में आना चाहिए था। वह 21 तारीख की बात थी। आज 23 तारीख है, न कल आया और न आज ही। रिलीज तो जरूर कर दिया होगा। लेकिन आज तक प्रेस में नहीं आया। उस पर आपकी गवर्नमेंट की कृपादृष्टि हो गयी होगी, क्योंकि चार पार्टियों का एक होना उनके हिसाब से जनहित के खिलाफ है। वे चाहते हैं कि वह आपस में लड़ते रहें, ताकि उनकी गद्दी हमेशा के लिए सुरक्षित रहे, आपकी ही नहीं, आपकी औलाद के लिए भी, क्योंकि दो पीढ़ी तो बीत गयी, तो यह है आपका सेंसरशिप।

इसी तरह से अग्रवाल और जेल काण्डों के बारे में भी प्रेस में कुछ नहीं आया। अग्रवाल के केस में वकीलों की मीटिंग हुई, वह भी नहीं आया। यह जो हमारे अखबार वाले हैं, इनसे मेरी मुलाकात हुई। कुछ नये-नये नौजवान आ गये हैं। मैं उनको नहीं जानता हूं, परन्तु उनकी आंखों से, उनके लहजे से मालूम होता है कि वे आपकी मेहरबानी के शिकार हैं।

अब और एक मजे की बात है, अभी एक फॉरेन न्यूज़ एजेन्सी (विदेशी समाचार समिति) से इन्टरव्यू हुआ, बहिन जी का। उन्होंने कहा कि प्रेस सेंसर क्यों लगा रखा है? तो इंदिरा जी ने उत्तर दिया कि यहां के गवर्नमेंट के खिलाफ अनर्गल प्रोपेगैण्डा करते थे। वह बड़े-बड़े उद्योगपतियों के अखबार हैं और बड़ी-बड़ी जायदाद वाले हैं, इसलिए वे हमारे खिलाफ हैं, क्योंकि हम गरीबों की हामी हैं। वह प्रेस वाले मालदार आदमी हैं, हम उनके खिलाफ हैं, इसलिए प्रोपेगैंडा करते हैं। पहली बात तो मैं यह कहना चाहता हूं नारायणदत्त जी, कि प्रोपेगैंडा करने का सबको हक होता है, सही हो या गलत, अगर वह करना चाहे। कहीं संविधान में लिखा है कि प्रोपेगैंडा नहीं होगा? क्योंकि यह प्रोपेगैंडा उनके खिलाफ होता है, इसलिए वह कहती हैं कि यह लोकतंत्र के खिलाफ है।

नारायणदत्त जी मेरे नौजवान दोस्त हैं, उनसे कहना चाहूंगा कि मालदार लोग आपके खिलाफ नहीं हैं और आप भी उनके खिलाफ नहीं हैं। अगर उनसे पूछा जाये, तो उनके लिए आपसे बेहतर कोई और गवर्नमेंट नहीं होगी। सन् 1947 में बिड़ला जी की सम्पत्ति 30 करोड़ थी और सन् 1951 में बढ़कर 65 करोड़ हो गयी और सन् 1964 में बढ़कर 400 करोड़ हो गयी। आज बहिन जी के शासन के 10 वर्षों के बाद वह 10 अरब हो गयी हैं। यही हाल सबका है। इस तरह के 95 बड़े-बड़े पूंजीपति घराने हैं। जब से आपका राज्य आया, तब से उनकी सम्पत्ति दुगुनी, चौगुनी और दस गुनी और बीस गुनी हो गयी। लेकिन आप दुनिया को यह जाहिर करना चाहते हैं कि आप उनके खिलाफ हैं। इमरजेन्सी लागू करने के बाद फेक आर्गनाइजेशन (धोखे के संगठन) कायम किये अध्यापकों के या और लोगों के और वह दिल्ली डेपुटेशन ले जाते हैं। उसमें बिड़ला जी भी एक डेपुटेशन ले जाते हैं और प्रधान मंत्री से कहते हैं कि जो इमरजेंसी आपने लागू की है, उसका हम समर्थन करते हैं। फिर भी आप दुनिया को बताना चाहते हैं कि आप उनके खिलाफ हैं और उनके अखबार आप के खिलाफ खबर छापते थे। जो शिकायत हमको होनी चाहिए कि अखबार वाले हमारी खबरें नहीं छापते हैं, वह आप करते हैं, दुनिया को दिखाने के लिए। आपके हाथ में विज्ञापन है, अखबारी कागज का कोटा है, उसे रिलीज करना आपके हाथ में है, बिजली आपके हाथ में है, लायसेंस देना आपके हाथ में है, फैक्ट्री लगाने की इजाजत देना या न देना आपके हाथ में है। फिर क्या यह लोग आपके खिलाफ हो सकते हैं? इसका मतलब है जान-बूझकर झूठ बोला जाता है, ऐसी नंगी और गलत बयानी करना आपकी ही हिम्मत का काम है और आपकी ही यह हिम्मत है कि इस गलत बयानी को सही सिद्ध करने की कोशिश करते हैं। यह उनकी हिम्मत है, यह कोई पुरुष नहीं कर सकता। कोई पुरुष 60 करोड़ आदमियों को इमरजेंसी के नाम पर इस तरह से नहीं हांक सकता है, जैसे यह राजेन्द्र कुमारी जी कर सकती हैं या इन्दिरा जी

कर रही हैं। गाय बिगड़ जाय तो आदमी को छोड़ेगी नहीं, चाहे बैल किसी को छोड़ भी दे। बहनों में यह बात तो है ही। रोजाना की गलत बयानी मेरी समझ में नहीं आती। वह कैसे कर रही हैं, यह एक अचरज की बात है। कॉमनवेल्थ पार्लियामेन्टरी एसोसिएशन के समाचार भी सेंसर होकर आते थे। आपकी तरफ से जो गवर्नमेंट के आदमी पैरवी करने वाले थे, उनकी तकरीर (भाषण) आधे कालम में आयी और जवाब केवल दो पन्नों में आया। यह आपने उनके साथ में बर्ताव किया। सच्चाई का गला जितना आपने घोटा है, इतिहास में किसी ने नहीं घोटा होगा। जितनी न्यूज एजेंसी थीं, सब समाचार के नाम से खत्म कर दी गयी हैं। चायना की न्यूज एजेन्सी और मास्को की तरह ही आपकी समाचार एजेंसी है। दिल्ली का 'समाचार' और मास्को का 'तास' बराबर हैं।

जो मूल्य आप कायम करेंगे उसका नई पीढ़ी पर असर होगा। पंडित गोविन्द वल्लभ पन्त जी के मूल्यों का असर हम पर हुआ, वैसे ही आपके मूल्यों का असर नई पीढ़ी पर होगा। इसी तरह जो इन्दिरा गांधी कहेंगी, जो उनका तरीका होगा, जो शब्द उनके मुंह में होंगे, जो उनका दृष्टिकोण होगा, जिस चश्मे से वे दुनिया को देखेंगी, जिनकी कांग्रेस में रहना है, उनको उसी तरीके से सहना होगा, देखना होगा। विपक्ष के एक सदस्य ने पार्लियामेन्ट में मन्त्री जी से पूछा कि क्या आप यू० एन० आई० व पी० टी० आई० आदि जो पुरानी महत्त्वपूर्ण एजेन्सी हैं और जो धीरे-धीरे अपना हिन्दी विभाग विकसित कर रही है, उनको ठोक-पीट कर एक जगह लाना चाहते हैं, तो उस पर संबंधित मंत्री श्री वी० सी० शुक्ल ने कहा कि उन्हें बिलकुल आजादी है, वे बिलकुल स्वेच्छा से मिल रही हैं, इस पर मुझे हिटलर और स्टालिन की याद आती है, जिसने कहा था कि सब स्वेच्छा से अपना जुर्म कबूल कर रहे हैं। उनके साथ वह बर्ताव हुआ, जो बरेली में हुआ—अंगूठा दबाकर खून बहाया और सबसे कबूल करवाया गया। ऐसा ही श्री शुक्ल जी द्वारा प्रेस वालों के साथ किया गया और कहा कि वे स्वेच्छा से अपनी हस्ती मिटाने के लिए तैयार हो गये हैं। नारायणदत्त जी, मैं अपनी सारी तकरीर वापस ले लूंगा, यदि आप इन अखबार वालों से पूछें कि असलियत क्या है? सही हालत जानकर आपको आश्चर्य होगा। हाईकोर्ट को भी यह जानने की हिम्मत नहीं है। सब-इंस्पेक्टर से नाराजगी हुई और जेल के अन्दर। यदि दुकानदार से जितना रुपया मांगा गया और उसने उतना नहीं दिया तो 'मीसा' में अन्दर। मुझे मालूम हुआ है कि आम तौर पर पुलिस वालों का अब यही रवैया है। आपातकालीन जमाने में उन्होंने तरक्की की है। पहले पुलिस वाले अपनी अक्ल से ही कुछ करते थे, अब यह काम वह स्थानीय लोगों से यानी कांग्रेस के लीडरों से मशविरा करके करते हैं।

मैं आपसे कह रहा था कि आज यह पोज़ीशन (स्थिति) है। जेल के अन्दर

जिसको चाहो बन्द कर दो। जुडिशियरी (न्यायपालिका) की हालत खराब, मैजिस्ट्रेसी को हिम्मत नहीं और रेडियो आपके हाथ में है। न्यूज एजेंसी आपके कब्जे में है और पब्लिक मीटिंग हम कर नहीं सकते। जो मैं तकरीर कर रहा हूं, वह अखबार में छप नहीं सकती, क्यों ? क्यों डरते हैं आप ? अखबार में छप नहीं सकती ? अखबारों में क्यों नहीं छपने देते ? कोई कारण ? पब्लिक मीटिंग नहीं करने देंगे, अखबार में नहीं छपने देंगे, जिसको मन चाहे गिरफ्तार कर लेंगे ? यही लोकतंत्र है ? यह तरीका तो डिक्टेटरशिप का है। राज्य आपका चल रहा है। बेशर्मी के साथ चल रहा है। महात्मा जी के सपनों का भारत क्या ऐसा ही था ? आवाज विरोधी पक्ष की कुचल दी गयी, उनका गला घोट दिया गया। वे लिख नहीं सकते, बोल नहीं सकते। दो वर्ष हुए ब्रेझनेव आया था। मधु लिमये से वह पूछ बैठा कि हिन्दुस्तान में दूसरी पार्टी की यहां क्या जरूरत है ? उन्होंने क्या जवाब दिया मुझे मालूम नहीं। आपकी धारणा है कि जब आप चुन कर आ गये और प्राइम मिनिस्टर बन गये, चीफ मिनिस्टर बन गये, तो फिर अब कहां विपक्ष की जरूरत रह गयी। आपकी निगाह सोशल डेमोक्रेसी की तरफ है यानी कम्युनिस्ट मॉडल के जनतंत्र की ओर। आप बराबर कहते आये हैं कि चुनाव करायेंगे। हमने आपके नेताओं के बयान पढ़े हैं, उन्होंने कहा कि चुनाव समय से होंगे। मैं जानना चाहता हूं कि निश्चित समय यानी फरवरी सन् 1976 में क्यों नहीं हुए ? चण्डीगढ़ में तय किया गया कि चुनाव नहीं होंगे। बहिन राजेन्द्र कुमारी जी मुझे अफसोस होता है। सिद्धार्थ शंकर राय ने चुनाव की बाबत कहा कि चुनाव बहुत छोटी चीज है, हमें मुल्क को मजबूत करना है। मैं पूछना चाहता हूं कि मुल्क की मजबूती का चुनाव कराने या न कराने से क्या मतलब ? चुनाव नहीं करा रहे हैं, इस विषय में उनके शब्द ये हैं—

"होल्डिंग ऑफ इलेक्शन इज माइनर, मोर इम्पारटेंट इज दैट वी हैव टू ले फाउण्डेशन फॉर दी कन्ट्रीज प्रोग्रेस।" चुनाव कराना एक छोटी बात है। इससे बड़ी बात है तथा महत्त्वपूर्ण बात है, देश की प्रगति की नींव स्थापित करना। अगर आपकी यह धारणा है कि मुल्क का हित केवल कांग्रेस से ही हो सकता है और आप चुनाव जीत जायेंगे, तो क्या दिक्कत है चुनाव कराने में ?

मैं आपको चुनौती देता हूं कि आप कराइये चुनाव। आप जानते हैं कि आप हार जायेंगे। गुजरात में आप हारे थे, यह सूरत तब थी जब विरोधी दलों ने केवल एक मोर्चा बनाया था। मोर्चे की जगह एक विकल्प दल होता, तो और भी अच्छे परिणाम होते, फिर भी आपके केवल 40 प्रतिशत वोट पड़े। गुजरात को आप छोड़िए, यदि आपकी पार्टी को जन समर्थन प्राप्त है, तो सीधी सी बात है चुनाव क्यों मुल्तबी किया ? क्योंकि आपकी हार निश्चित थी। यह प्रधान मंत्री की शान के खिलाफ है कि वह गलत बयानी करें, परन्तु इन्दिरा जी बराबर गलत बयानी करती रहती हैं।

इलेक्शन का जब वक्त आयेगा किसी दूसरे देश से लड़ाई छेड़ देंगे। ताकि एक साल के लिए फिर इलेक्शन मुल्तबी हो सके। जो तरकीबें डिक्टेटर्स की होती हैं, वे की जाती हैं और की जायेंगी।

उपाध्यक्ष महोदय ! अब मैं संविधान के बारे में निवेदन करता हूं। जिस प्रकार से वह एमेंड (संशोधित) किया जाता है, वह भी दुनिया में एक मिसाल है। प्रधान मंत्री अपना पेटीशन हार जाती हैं या उनके खिलाफ जो पेटीशन है, उसमें वे हार जाती हैं। अपील करना पड़ता है, तो देश के कानून को ही अपने इन्टरेस्ट (हित) में बदलवा लेती हैं और वह भी रिट्रौस्पेक्टिव इफेक्ट (पूर्व प्रभावी रीति) से। जो हाईकोर्ट के जजमेंट के शब्द हैं, ठीक वे ही शब्द रिप्रेजेन्टेशन ऑफ पीपुल्स एक्ट (जन प्रतिनिधित्व कानून) में रखे जाते हैं। 19 दिसम्बर सन् 1976 को इन्दिरा जी से अखबार वालों ने पूछा कि संसद के चुनाव में आप कहां से खड़ी होंगी ? तो कहा कि राय बरेली से। इसी को होल्डिंग आउट कहते हैं। अर्थात् पहले से किसी बात का संकेत करना। उसके बाद 7 जनवरी को एक सरकारी ऑफिसर इंदिरा के चुनाव क्षेत्र में उसके हक में भाषण देता है, जो कानून के अनुसार भ्रष्टाचार है। लेकिन कानून में संशोधन कर दिया गया कि होल्डिंग आउट नामजदगी की तारीख से माना जायेगा। इन्दिरा जी के खिलाफ हाईकोर्ट ने 3 बातों पर अपना निर्णय दिया था और तीनों ही संविधान और कानून का संशोधन करके रद्द कर दिये गये। किसी देश का प्रधान मंत्री अपने हित में हाईकोर्ट से फैसला खिलाफ हो जाने पर लोक सभा में अपने बहुमत के बल पर कानून में संशोधन करा ले और उसके बल पर चुनाव याचिका जीत जाये, तो संसार में इस प्रकार की कोई दूसरी मिसाल नहीं मिलेगी। अब सुप्रीम कोर्ट के सामने कोई चारा नहीं था, अगरचे उसमें भी दो राय हो सकती थी यानी बहुमत के बल पर किसी प्राइम मिनिस्टर के लिए अपने हक में कानून बदलवाना कहां तक संविधान की भावना के अनुकूल है ? लेकिन सुप्रीम कोर्ट से फैसला सुनाने के दिन जैसा भी कानून था उसको ध्यान में रखते हुए इन्दिरा जी की अपील को मंजूर कर लिया, जिसका कि हम लोगों को और हर न्यायप्रिय आदमी को अत्यन्त मानसिक कष्ट है। आप भले ही बहस में हमसे जीत जायें, लेकिन सार्वजनिक जीवन में ऐसी मान्यताएं होती हैं, जो हमेशा कायम रहनी चाहिए, जिनसे मुल्क बनते और बिगड़ते हैं। इन्दिरा जी के जजमेंट के सिलसिले में जो कुछ हुआ वह देश के लिए शर्म की बात है।

इमरजेंसी या आपातकालीन स्थिति की घोषणा करने के लिए देश की स्थिरता का बहाना किया गया है। न मालूम देश की स्थिरता को कहां और कैसे खतरा हो गया था ? 7 नवम्बर को अपराह्न इंदिरा जी अपील जीत चुकी थीं। उस दिन देहली में कांग्रेस पार्टी की एक मीटिंग हुई, जिसके सिलसिले में 8 नवम्बर के 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' में इस प्रकार खबर छपी कि—

"श्रीमती इन्दिरा गांधी के अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के कार्यालय में पहुंचने के पूर्व ही मीटिंग ने यह प्रस्ताव पारित कर दिया कि सर्वोच्च न्यायालय ने अपने सर्वसम्मत निर्णय के द्वारा जनता की इच्छा को न्यायोचित सिद्ध कर दिया है और यह भी सिद्ध कर दिया है कि हमारी पवित्र-भूमि में लोकतांत्रिक सिद्धांतों का स्थान सर्वप्रमुख है।" परन्तु मेरी अपनी तुच्छ राय में भारत वर्ष अब पवित्र-भूमि नहीं रह गया है। जहां के मिनिस्टरों की तलाशी न होती हो। दूसरे देशों के जूनियर अधिकारी जिसका चाहे सामान खुलवा कर देख लें और वहां की सरकार से जब पूछा जाता है कि आपने इण्डिया के फाइनेंस (वित्त) मिनिस्टर की तलाशी क्यों ली, तो जवाब मिलता है कि हमें यह अन्देशा था कि हमारे देश का सिक्का चुरा कर तो नहीं ले जा रहे हैं हिन्दुस्तान के फाइनेंस मिनिस्टिर। छोटे से छोटे मुल्क के मिनिस्टरों की तलाशी नहीं ली जाती गयी। क्यों यह धारणा थी, सच थी या गलत, सच ही मैं तो मानता हूं कि भारत का मंत्री चोरी कर सकता है। यह पवित्र-भूमि थी गांधी के जमाने में। गुलामी के जमाने में भी दूसरे देशों के लोगों के घरों में इस देश के लीडर की तस्वीर लगी रहती थी। उस जमाने में हम लोग अपने प्यारे देश के लिए तरह-तरह के स्वप्न देखते थे। अब यह नोबल लैंड (पवित्र-भूमि) रह गयी है क्या? मोस्ट इग्नोबिल (बिलकुल अपवित्र) हम जैसे लोगों के लिए कहीं दूसरी जगह जाने का रास्ता नहीं है और हो भी तो इस उम्र में अब जाना भी नहीं चाहेंगे।

अब देखिये आगे चल कर बरूआ साहब क्या फरमाते हैं—

"प्रस्ताव पेश करते हुए श्री बरूआ ने कहा कि श्रीमती गांधी ने राष्ट्र को अराजकता तथा अव्यवस्था से बचा लिया। भारतीय लोगों ने यह बतला दिया कि वे कुछ गुण्डों के गुलाम नहीं हैं।"

मेरे तथा जयप्रकाश नारायण जैसे गुण्डे! अगर आप हमको गुण्डे कहें और हम आपको बदमाश कहें तब? और आपने हमको कुछ और कहा और हमने लाठी निकाल ली तब आप गोली निकाल लेंगे। क्या राजनीतिक विरोधियों को हूलिगन कहा जाता है डेमोक्रेसी में कहीं पर भी? दिन-रात आपके प्रेसीडेंट इसी प्रकार का प्रलाप करते हैं। अगर हम गुण्डे हों भी तब भी आप गुण्डे नहीं कहेंगे। ऐसी ही जनतंत्र की रीति होती है। आप कहिये कि हम गलत काम करते हैं। आपने हमको गुण्डा कहा, लेकिन हमारी तरफ से कोई जवाब नहीं दिया गया। आगे और कहते हैं—

"वे जानते थे कि यदि श्रीमती गांधी शीर्षस्थ पद से हटीं, तो केन्द्र कमजोर हो जाएगा। देश का शासन ठगों और पिंडारियों के हाथों में चला जायेगा।"

"Before Mrs. Indira Gandhi reaches the A.I.C.C. office the meeting passed a resolution, which said that the unanimous verdict of the Supreme Court had justified the will of the people. Also that the democratic ideals of our noble land have asserted this supermacy."

"Moving the resolution Mr. Barooah said that Mrs. Indira Gandhi had saved the nation from anarchy and chaos· that Indian people have shown that they were not slaves of some hooligans."

They knew that there centre would be weakened if Mrs. Indira Gandhi was removed from the summit, the country would be ruled by thugs and pindaries."

इस पर मैं टिप्पणी नहीं करना चाहता।

मीसा बनाया था अपराधियों के लिए, जो वाकई तस्करी करते हों, आश्वासन दिया गया था कि लोक सभा में राजनीतिक नेताओं के खिलाफ मीसा इस्तेमाल नहीं होगा। माननीय देसाई साहब ने जब अनशन किया था, उस समय एक मांग उनकी यह भी थी। उस समय इन्दिरा जी ने उनको लिखा था कि मीसा को राजनीतिक कार्यकत्ताओं के खिलाफ इस्तेमाल नहीं करेंगे। परन्तु आपने हमको फिर भी मीसा में बन्द कर दिया। क्या आप बतायेंगे क्यों? आप सदन में बयान देते हैं, प्राइम मिनिस्टर वायदा करती हैं, मोरार जी देसाई को पत्र लिखती हैं। मैं जानना चाहता हूं आपने इन आश्वासनों की अप्रतिष्ठा क्यों की?

उपाध्यक्ष महोदय! सन् 1937 के शुरू में जब मेरी उम्र 34 वर्ष की थी और मैं पहले यहां एम० एल० ए० होकर आया, तो मेरे साथ एक कृष्णचन्द्र जी भी आये थे। वे पुराने आदमी थे। मैं और वे तथा एक और सज्जन एक ही कमरे में रहते थे और साथ ही विधान सभा में आते-जाते थे। जूनियर लड़का था मैं। हमारे बड़े-बड़े नेता मंत्री थे और उन दिनों विरोध-पक्ष में भी कई बुजुर्ग लोग थे। जैसे राजा महाराज सिंह वगैरह कितने लोग थे। मुझे अब तक अच्छी तरह से याद है कि प्रोफेसर कृष्णचन्द्र जी कहा करते थे कि देखो चरणसिंह, जब कोई मिनिस्टर कहीं कोई बयान देता है, मान लो वह दौरे पर जाये और बयान दे, तो वह सरकार के नीति-वक्तव्य की भांति मान्य होता है। वह गवर्नमेंट का स्टेटमेंट माना जाएगा। आज मीसा के मामले में हमारे प्राइम मिनिस्टर ने औपचारिक वादा कर दिया। इन्दिरा जी व्यक्तिगत हैसियत से चाहे जो करें, लेकिन यह प्राइम मिनिस्टर का वायदा था। उसकी अवहेलना करना प्रधान मंत्री के पद को गिराने की बात है। नारायणदत्त जी! चाहे कोई प्राइम मिनिस्टर दो साल रहे, चाहे दस साल रहे, हमें ऐसी परम्परा नहीं कायम करनी है कि हिन्दुस्तान में आने वाली हमारी औलादें प्राइम मिनिस्टर के वचनों में

यकीन न करें। यकीन के ऊपर सारी सोसाइटी चलती है। प्राइम मिनिस्टर के वचनों पर मुल्क चलता है, मुल्क उठता है, लड़ाई लड़ता है, सन्धि करता है, नुकसान उठाता है और लाभ उठाता है।

अध्यक्ष महोदय ! फिर न मालूम कितनी बार संशोधन हुए मीसा में न मालूम कितनी बार अध्यादेश निकले। दूसरे मुल्कों में इस तरह की कोई परम्परा नहीं है और बात-बात पर वहां आर्डिनेंस नहीं निकलते। यहां तक कि सन् 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया ऐक्ट के अन्तर्गत भी आर्डिनेंस जैसी बात नहीं थी। लेकिन आपने रिप्रेजेन्टेशन ऑफ पीपुल्स एक्ट में संशोधन कर लिया कि आपके चुनाव के खिलाफ कोई अदालत में नहीं जा सकेगा भविष्य में। मैं जानना चाहता हूं क्यों ? यह कौन सा जनतंत्र है ? जनतंत्र के अन्दर तो सब लोग बराबर होते हैं। जनतंत्र का मतलब यह नहीं है कि प्राइम मिनिस्टर के खिलाफ कोई सुप्रीम कोर्ट नहीं जा सकता। इस आशय से आपने रिप्रेजेन्टेशन ऑफ पीपुल्स ऐक्ट को संविधान के नवें अनुच्छेद में शामिल करा लिया। मुझे अभी तक याद है कि जब मैं रेवेन्यू मिनिस्टर था, सन् 1956 में, मुजफ्फर नगर में एक दिन जबरदस्त बारिश हुई और थोड़े समय में इतना पानी भर गया कि गांव डूबने लगा। जिस गांव में पानी बढ़ रहा था, वहां एक पुराना नाला था, जिसको गांव वाले काटना या खोदना चाहते थे, ताकि पानी निकल जाय। परन्तु गांव के ही कुछ लोग इसके विरुद्ध थे। जब पानी भरने लगा और गांव डूबने लगा तो डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट के पास गांव वाले गये। फ्लड रिलीफ (बाढ़-राहत) का महकमा भी रेवेन्यू डिपार्टमेंट के पास था और रेवेन्यू डिपार्टमेंट मेरे पास था। डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने आदेश दिया कि वह जगह काट कर नाली खोद कर पानी बहने दिया जाय। ताकि गांव डूबने से बच जाय। एक किसान इस आदेश के विरुद्ध हाईकोर्ट में चले गये और वहां इंजंक्शन (स्थगन-आदेश) ले आये कि जगह नहीं कटेगी, गांव डूबे या रहे। माननीय तिवारी जी ! मेरी उम्र उस समय 53-54 की थी, लेकिन मुझे उस वक्त तक इतना तजुर्बा नहीं था कि जितना आज है। मेरी समझ में यह नहीं आया कि हाईकोर्ट बात-बात में क्यों दखल देता है और गवर्नमेन्ट को चलने नहीं देता ? इसी तरह से गाजीपुर जिले के एक लेखपाल का ट्रांसफर (तबादला) हो गया। वह हाईकोर्ट में जाकर ट्रांसफर के खिलाफ इजंक्शन ले आया ! उस समय की हमारी राय के अनुसार हाईकोर्ट गवर्नमेन्ट और सबको बेईमान समझती है और इसीलिए बार-बार इजंक्शन जारी करती रहती है। लेकिन आज मैं सोचता हूं कि मेरी कितनी बेवकूफी थी, मेरी कितनी नातजुर्बेकारी थी। मैं नहीं समझता था कि देश की यह अवस्था होगी आगे चलकर। मैं नहीं चाहता था कि पंत जी या मेरे साथी जानबूझकर कोई ऐसा गलत काम भी करेंगे बेईमानी का। लेकिन आज मेरी समझ में है कि अगर अदालत को अख्तियार न हो दखल देने का तो किसी नागरिक के अधिकार ही सुरक्षित न रह

जायेंगे और बेईमान मिनिस्टर या बेईमान गवर्नमेन्ट को मनमानी करने का अधिकार मिल जायेगा।

श्री ऊदल—बहुत दिनों के बाद समझ में आया।

चौधरी चरण सिंह—मैंने तो मान लिया।

श्री ऊदल—इसलिए मुझे खुशी हो रही है।

चौधरी चरण सिंह—अध्यक्ष महोदय, मैं श्री ऊदल के लिए अपने दिल में बहुत ज्यादा जगह रखता हूं। इसलिए नहीं कि उनको मेरी बात पर खुशी हो रही है, लेकिन मुझ पर उनका पुराना उपकार है। जब मैं रेवेन्यू मिनिस्टर था, अपने क्षेत्र में एक मीटिंग में मुझे ले गये। मैंने कहा था कि मैं कम्युनिज्म को अच्छा नहीं समझता। किसानों की आजादी चाहता हूं। तुम मुझे न ले जाओ। मैं कट्टर नॉन (गैर) कम्युनिस्ट हूं, लेकिन ले गये। गलती से वहां बैठे हैं। अगली दफा लोकदल का टिकट लेंगे।

तो मैं कह रहा था कि शासक दल ने चुनाव याचिकाओं के संबंध में, अध्यक्ष महोदय ! कानून बदल दिया। प्राइम मिनिस्टर, प्रेसीडेंट, वाइस प्रेसीडेंट, स्पीकर भी उसमें शामिल हैं। इनके विरुद्ध चाहे वह लोग चुनाव में कितनी ही बेईमानी क्यों न करें, विरोध का उम्मीदवार अदालत में न जा सकेगा। क्या बात हुई ? जैसे मुगलों के जमाने के उमरांव होते थे, रईस होते थे, कोई तीस हजारी, कोई पचास हजारी होता था। ऐसे ही इन्दिरा जी ने कहा कि यह लोग उमरा है। प्रेसीडेंट, वाइस प्रेसीडेंट, स्पीकर और मैं। इनके विरुद्ध इलेक्शन पेटीशन जो होगा वह अदालत में नहीं जायेगा। क्यों नहीं जायेगा अदालत में ? एक अलग से आर्गनाइजेशन (संस्था) बनेगा; वगैरह-वगैरह क्यों ? आप सब इसको डेमोक्रेसी क्यों कहते हैं ? इन पर कोई सिविल केस नहीं चलेगा। कोई क्रिमनल केस प्राइम मिनिस्टर पर चलेगा नहीं, न आज न कल। प्राइम मिनिस्टर न रहें तब भी नहीं चलेगा। मैं जानना चाहता हूं कि क्यों ! मैं कहता हूं कि प्राइम मिनिस्टर एक आदमी के साथ ज्यादती करता है, गुस्से में आकर शूट कर देता है। अगर मैं सामने जाऊं तो मार ही डालेंगी। (हंसी)

कोई रेमेडी (बचाव) है क्या है ? बताइये यह कैसे ?

डॉ० राजेन्द्र कुमारी बाजपेयी—आपको तो उन्होंने जेल से छोड़ दिया है।

चौधरी चरण सिंह—छोड़ तो दिया है और उसके साथ तरह-तरह की अफवाहें भी जारी कर दी हैं। (हंसी)

मैंने तो सुपरिंटेंडेंट जेल से कह दिया है कि अगर फिर आना पड़ेगा, तो मैं उनके जेल को पसन्द करूंगा। मैं तो यही कहूंगा राजेन्द्र कुमारी जी से कि मुझे वहीं भिजवा दीजिए, तिहाड़ जेल।

अध्यक्ष महोदय, मैं यह कह रहा था कि कहीं दुनिया में कोई ऐसी मिसाल है कि प्राइम मिनिस्टर ने ऐसा किया हो ? मैं आपसे कहता हूं, दोस्तो ! यह दिल्लगी

और हंसी का अवसर नहीं है। ठंडे दिमाग से सोचना चाहिए कि हमारे देश में क्या हो रहा है ? यह देश किसी के बापदादों का नहीं है, किसी के परिवार का नहीं है। हमारा सबका है, 60 करोड़ लोगों का है। यह जो हो रहा है, आप सब को क्यों नहीं अखरता है ? आखिर क्या होगा ? काशी नाथ मिश्र कहां हैं, रोज ही झगड़ते हैं, भले काम के लिए। आज वह कहां गये ? उनकी आवाज क्या हुई ? इन्डिविजुअल फ्रीडम (व्यक्तिगत स्वतंत्रता) के लिए गांधी जी ने कितना कहा है; लेकिन आप लोग आवाज ही नहीं उठा सकते हैं। क्या चीज आड़े आ रही है ? इसको मैं बाद में बताऊंगा। अध्यक्ष महोदय ! यह आपके संविधान का हाल है। इसको अब छोड़ देता हूं।

इन्दिरा जी से कोई नहीं पूछ सकता है, चाहे वह कत्ल ही किसी का कर दें, चाहे वह अपील में बेईमानी करके जीत जायें। अब अदालत में पेटीशन लेकर कोई नहीं जायेगा, क्योंकि कामयाब होने का कोई प्रश्न ही नहीं रह गया है। लेकिन मान लो कि अन्तःकरण से पीड़ित अर्थात् अति ईमानदार एक ट्रिब्यूनल बने, वह इस नतीजे पर पहुंचे कि डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने और पुलिस आफिसरों ने इन्दिरा जी को जिताया है, तो इसका सीधा-सा इलाज है, उन अफसरान से चुनाव से पहले की तारीख डाल कर इस्तीफा ले लें, और मंजूर इलेक्शन के बाद हो। इस प्रकार मान लो उन्होंने चुनाव कर बेईमानी का काम किया। जो कानून आज है, उसके अनुसार वह काम इल्लीगल (गैरकानूनी) है, परन्तु उस अफसर से कह देंगी कि हम तुमको डायरेक्टर या एम्बेसेडर (राजदूत) फलां देश का बनाकर भेज देंगे। यह डेमोक्रेसी है ? आप लोग कभी सोचेंगे कि नहीं ? गांव का आदमी तो जानता ही नहीं है। बुद्धिजीवी जानते हैं या कुछ अन्य शहर वाले। वह यह कहती हैं कि शहर वालों की मैं परवाह नहीं करती हूं। मुझे तो गांव वाले और गरीब चाहिए। लेकिन मैं उसके लिए भी तैयार हूं। चाहें तो केवल गांव वालों से ही इलेक्शन करवा लें। बड़ी आई हैं वह गरीब और गांव वालों को जानने वाली। जवाहर लाल नेहरू तक तो उनको जानते नहीं थे। मैं पूछना चाहता हूं, क्या वह गांव की झोंपड़ी में रही हैं ? या उनकी कठिनाइयों को क्या वह जानती हैं ? गांव वालों का तो केवल प्रोपेगैण्डा है। मैं तो चैलैंज करता हूं, पहले गांव वालों में ही इलेक्शन करवा लें।

चुनाव के सिलसिले में इंदिरा गांधी जी देश के साथ एक और मजाक कर रही हैं। कहती हैं कि चुनाव अवश्यमेव जीत जायेंगी, परन्तु चुनाव से देश का हित बड़ा है। इसलिए अभी चुनाव कराने की जरूरत नहीं है। यह एक लाल बुझक्कड़ वाली बात हो गयी। चुनाव से देशहित का क्या टकराव है, यह तो ऐसा ही हुआ कि जैसे कोई व्यक्ति किसी लड़के से यह सवाल पूछे कि एक किसान के पास 15 भैंसें हैं, उनमें 5 मर गयी, तो बताओं कितनी भैंसें बची ? (हंसी) चुनाव में जब आप जीत जायेंगी, क्योंकि जीतना तो आप को है ही, तो देश की सेवा और अधिक इतमीनान

के साथ कर सकेंगी। फिर चुनाव और देश-हित में क्या जिद है? असल बात यह है कि वह जानती हैं कि बिना भारी बेईमानी किए कांग्रेस आज नहीं जीत सकती। बेईमानी की तरकीब निकालने के लिए इंदिरा जी ने खुफिया विभाग में कोई सेल अर्थात् विशेषज्ञों की कमेटी बिठा रखी होगी कि बेईमानी करने के ऐसे रास्ते व तरकीबें ढूंढें, जिससे कांग्रेस की भारी जीत हो और विरोधियों को पता भी न लगे और लगे तो चुनाव के नतीजे निकलने के बाद।

वतमान स्थिति का वास्तविक कारण क्या है? मैं उसको भी जानता हूं और वह है जून सन् 1975 का हाईकोर्ट का निर्णय उनके खिलाफ हो जाना और कांग्रेस का गुजरात में उस तारीख को हार जाना। बस यही कारण हुआ हमारे जेल जाने का। जिस स्वराज्य को लाने के लिए हमने और हमारे नेताओं ने पुरुषार्थ किया था उस सब पर पानी फिर गया।

हमको स्वप्न में भी ख्याल नहीं था कि कानून हम कभी तोड़ेंगे। कोई हमको अब बतला भी नहीं सकेगा कि कौन सा कानून तोड़ा, जिसके कारण हमको जेल में डाल दिया गया। आज तक तो किसी ने बताया नहीं है।

डा० चेन्ना रेड्डी हमारे गवर्नर हैं। यह आंध्र हाईकोर्ट से पेटीशन हार गये। इस बीच में मिनिस्टर हो गये थे। उन्होंने अपील फाइल कर दी थी या करने वाले थे। अयोग्य करार दे दिये गये, क्योंकि हाईकोर्ट की राय में उनका कदाचार साबित हो गया। इंदिरा जी ने कहा कि तुम्हें इस्तीफा देना चाहिए और कहा कि एम० एल० ए० या एम० पी० हो, तो त्यागपत्र का प्रश्न ही नहीं उठता, किन्तु मिनिस्टर होने के नाते स्थिति बदल जाती है। मिनिस्टर को शोभा नहीं देता कि हाईकोर्ट से हार जाये और सुप्रीम कोर्ट के फैसले तक मिनिस्टर बना रहे, इस्तीफा देना चाहिए। मेरी उनसे बात नहीं हुई है। केवल अखबारों में पढ़ा है। इस्तीफा देना पड़ा। लेकिन अब आपका (इंदिरा जी का) केस वैसा ही हुआ, तो क्यों नहीं इस्तीफा दिया? मैं यह कहता हूं कि हमारा प्राइम मिनिस्टर ऐसा होना चाहिए था और आगे ऐसा होना चाहिए कि फैसला होते ही इस्तीफा दे दे। इसमें शान भी होती है। कोई मनुष्य तो अनिवार्य नहीं है देश के लिए, लेकिन बहिन जी के स्वयं बयान क्या निकले कि हाईकोर्ट का उनके विरुद्ध फैसला किसी व्यक्ति का प्रश्न नहीं है, देश का प्रश्न है। क्यों नहीं व्यक्ति का प्रश्न? डाकू को सजा हो जाय और गांव पंचायत से प्रस्ताव पास करा ले कि वह डाकू नहीं है, बल्कि हमारा प्रधान भी है, इसलिए यह सारे गांव का मामला है, सजा उसको नहीं मिलनी चाहिए। जब प्राइम मिनिस्टर ही कानून नहीं मानेगा, तो गांव का सभापति या कोई और क्यों मानेगा? जरा देखिए, मैं कहता हूं कि जरा देखिए हिम्मत। नीयत ही खराब। हंसते हैं आप लोग। कुछ लोग मुस्कुराते हैं। मैं जानना चाहता हूं, जब आप के दल का अध्यक्ष कहता है कि इंदिरा इज

इण्डिया (इंदिरा ही भारत है), इण्डिया इज इंदिरा (भारत ही इंदिरा है) तो शर्म आनी चाहिए आपको। जो और लोकतान्त्रिक देश हैं, वहां कभी ऐसा नहीं कहते, लेकिन वाह रे आपकी हिम्मत। यह आपकी कमजोरी है, आपकी गलती है। आपने इसके विरुद्ध आवाज उठायी है? नहीं उठानी चाहिए थी यह आवाज? आज आपको 25 प्रतिशत से ज्यादा जनता का समर्थन नहीं है। मान लीजिए 33 सही, 42 सही, लेकिन 100 फीसदी राय मिल जाय, तो भी इंदिरा जी को देश की बराबरी पर नहीं रखा जा सकता। लज्जा नहीं आती यह कहते हुए? वह शख्स (श्री बरूआ) जो दूसरों को ठग कहता है, अपने स्वार्थ के लिए कहता फिरता है "इंदिरा इज इण्डिया एण्ड इंडिया इज इंदिरा।" परन्तु पूरी कांग्रेस पार्टी उनको समर्थन करती है। आप महसूस नहीं करते हैं कि देश के साथ आप कितना बड़ा द्रोह व घात कर रहे हैं। लीजिए उससे ज्यादा अफसोस और शर्म की बात किसी इण्डियन पैट्रीआट (देशभक्त) के लिए और नहीं हो सकती। आपकी इस कायरता के कारण ही देश में इमरजेंसी की घोषणा की गयी।

हम पर चार्ज क्या है? इस देश की इंटीग्रिटी को थ्रेटेन कर रहे थे, अर्थात् देश की एकता को जोखिम में डाल रहे थे? इमरजेंसी (आपात्कालीन स्थिति) एक मजाक बन गयी है। न किसी को बोलने दिया जायेगा, न चलने दिया जायेगा। संविधान के अनुच्छेद 352 में इमरजेंसी इस तरह बयान की गयी है—

"If the President is satisfied that a grave threat exists, whereby the security of India or any part of the territory thereof is threatened, whereby war or external agression of internal disturbances, he may make praclamation, make a declaration to that effect."

"अगर राष्ट्रपति सन्तुष्ट है कि हिन्दुस्तान या हिन्दुस्तान के किसी भाग की एकता जोखिम में है, किसी युद्ध से, आक्रमण से या आन्तरिक शान्ति भंग से और कहां पर अव्यवस्था पैदा हो गई है, तब वह इमरजेंसी (आपात्-स्थिति) घोषित कर सकता है।"

अब मैं यह जानना चाहता हूं कि 8-9 महीने हो गये। क्या औचित्य है आप के पास यह कहने का कि देश की एकता को खतरा है? क्या हम पंजाब को लेकर पाकिस्तान में मिलाने को कोशिश कर रहे हैं? क्या हम बंगाल को बंगला देश के साथ मिलाना चाहते हैं? यह और क्या है? क्या यू० पी० के हिस्से गोरखपुर या बहराइच को नेपाल में शामिल करने की कोशिश कर रहे हैं? क्या है? राष्ट्रपति कैसे और क्यों सन्तुष्ट हो गये कि देश की एकता को खतरा है? यह चैलेंज नहीं हो सकता है। सुप्रीम कोर्ट में भी नहीं। बस उन्हीं की संतुष्टि है, यह कहना पर्याप्त है। प्रेसीडेंट तो हमारा (इंदिरा जी का) बनवाया हुआ है। वह कुछ कह नहीं सकता है। एक अखबार वाले ने एक मर्तबा एक कार्टून बना दिया कि राष्ट्रपति महोदय गुसलखाने में हैं। एक सन्देश-वाहक पहुंचता है दस्तखत करवाने के लिए। एक कलम मंगवाकर वहीं दस्तखत कर दिये।

एक सदस्य—बोलते-बोलते आपकी आवाज बन्द हो जाती है, जो सुनाई नहीं देती है। यह एक व्यवस्था का सवाल है।

चौधरी चरण सिंह—आप तीन माइक यहां पर लगवा दें। बन्द नहीं होगी। मैं आपको अपना अपराध बताना चाहता हूं। 25 जून को यू० पी० निवास के एक कमरे में, जहां मैं ठहरा हुआ था, मेरी कमर में चणका था और सियाटिका नर्व से बायें पैर में तकलीफ होती थी। वहां कुछ दोस्त व बुजुर्ग इकट्ठा हुए और एक रिजोल्यूशन (प्रस्ताव) पास किया, जिसे मैं पढ़ कर सुनाये देता हूं। मेहरबानी करके बतावें कि इसमें कहां डिस्टरबेंसेज (अशान्ति), इन्टरनल सिक्योरिटी (आन्तरिक सुरक्षा) तथा इंटीग्रिटी (एकता) के खतरे का सवाल है।

"The National Executives of the Cong (O), Jansangh, Bhartiya Lok Dal, Socialist Party and the Akali Dal met that morning to finalize the week long programme of agitation to be launched throughout the country to focus attention on Mrs. Gandhi's refusal to resign ever after she failed to get an unconditional stay of the operation of the Allahabad Judgement that set aside her election."

"कांग्रेस संगठन, जनसंघ, भालोद तथा सोपा की राष्ट्रीय कार्य-समितियां आज प्रात: एक सप्ताह के उस देशव्यापी आन्दोलन के कार्यक्रम को अन्तिम रूप देने हेतु इकट्ठा हुई, जिससे जनता का ध्यान इस तथ्य की ओर आकृष्ट हो सके कि श्रीमती गांधी ने चुनाव-याचिका में हारने तथा तत्संबंधी इलाहाबाद उच्च-न्यायालय द्वारा उस निर्णय के बिना शर्त-स्थगन आदेश न मिलने के बाबजूद त्यागपत्र देने से इन्कार कर दिया।" उच्चतम न्यायालय के निर्णय के फलस्वरूप हमको इस्तीफा मांगना चाहिये था या नहीं, इस संबंध में दो मत हो सकते है। परन्तु इसमें दो मत नहीं हो सकते कि हमको डिमांस्ट्रेशन (प्रदर्शन) करने का हक था, इस्तीफा मांगने का हक था, एजीटेशन (आन्दोलन) करने का हक था। हां वायलेंस (हिंसा) करने का हक नहीं था। यह हमारा प्रस्ताव था। आगे चलकर उसमें यह भी था कि प्रदेश की राजधानी के अलावा तहसील-स्तर पर भी प्रदर्शन होगा कि इंदिरा जी को इस्तीफा देना चाहिए। यही हमारा कसूर है। बतलाइये, इसमें देश की एकता को कहां खतरा है? सच्चाई यह है कि पहले से सारा मामला तैयार था। आज की तैयारी नहीं थी। पहले से थी। एक बार इमरजेंसी की घोषणा कर दी जाए, तो हमेशा के लिये डिक्टेटरशिप हो जायेगी। डिक्टेटरशिप नहीं होगी, एक परिवार का शासन स्थापित करने का मौका मिल जायेगा। अत: 26 तारीख को सवेरे सारे देश में इमरजेंसी की घोषणा कर दी गयी और उसके लिए आरोप क्या-क्या लगाये गये हैं, जरा उन पर विचार कीजिए।

जयप्रकाश नारायण जी पर सबसे बड़ा आरोप है कि उन्होंने पुलिस व सेना के

लोगों से कहा है कि वह सरकार के आदेश पर अपने देश के लोगों पर गोली चलाने से इन्कार कर दें। मेरा ख्याल है कि ऐसा कहने का उनको हक हासिल है, जो उन्होंने कहा वह आपको और हमको भी कहने का हक हासिल है। सेना और पुलिस से हम कह सकते हैं कि यदि ऐसा कोई आर्डर उनको दिया जाय जो कानून और देश हित के खिलाफ हो, संविधान के खिलाफ हो तो वे उस पर अमल करने से इन्कार कर सकते हैं। उसे उनको नहीं मानना है। किसी सैनिक या पुलिस मैन की यह दलील नहीं मानी जाएगी कि उसके आफिसर ने उसको ऐसा हुक्म दिया था। आर्मी ऐक्ट (सेना कानून) में इस आशय का सेक्शन (धारा) मौजूद है। ताजी घटना आप को याद होगी माई-लाई की ? वियतनाम में माई-लाई एक जगह है। अमेरिका के मिलिटरी पर्सोनल (सेना के लोगों) ने कुछ बेगुनाह गांव वालों को गोली का शिकार बना दिया। काफी बड़ी तादाद में लोगों की हत्या कर दी गयी। इस पर अमरीका में शोर मचा कि यह तो बुरा हुआ। मुकदमा चला। सैनिकों ने अपनी सफाई में कहा कि इसके लिए उनके अधिकारियों के आदेश थे। वहां कोर्ट ने निर्णय किया कि ऐसा कोई आदेश न्यायोचित नहीं हो सकता। यह सरासर जुर्म है। जो अफसर ऐसा आर्डर देता है, वह आपको नहीं मानना चाहिए। अगर आपने माना है तो सजा भुगतो। मैं जानना चाहता हूं कि कौन बहुत बड़ी बात हो गयी थी, अगर जे० पी० ने यह कह दिया था ? हमारे आर्मी ऐक्ट (फौजी कानून) में भी इस तरह का प्राविधान है। अर्थात् कोई अधिकारी खिलाफ कानून आदेश देता है, तो उसके बाध्य नहीं हैं और उस पर अमल करने से इन्कार कर सकते हैं। अब लीजिए मोरारजी देसाई का मामला। आपका कहना है कि वह मिनिस्टर रह चुके हैं और लोक सभा की कार्य-वाही नहीं चलने देंगे। उन्होंने निःसंदेह यह कहा था कि मैं सत्याग्रह करूंगा। किस मौके पर कहा था, किस बात पर कहा था—इस बात पर कहा था कि एल० एन० मिश्र के खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोप थे। सारा विरोध पक्ष कह रहा था कि न्यायिक जांच कराओ। आप नहीं माने। इसके पहले और मंत्रियों के विरुद्ध सवाल उठे। प्रधानमंत्री ने तब भी नहीं माना। इस पर विपक्ष की तरफ से एक प्रस्ताव आया कि सदन की ही एक कमेटी बैठ जाये, लेकिन उसे भी नामंजूर कर दिया गया। बहुत मुश्किल से यह तय हुआ कि सी० बी० आई० की इन्क्वायरी (जांच) करा ली जाये। और यह भी तय हुआ कि सी० बी० आई० जो रिपोर्ट देगी वह सदन के पटल पर रखी जायेगी। उसके बाद सदन स्थगित हो गया। अगली बार जिस दिन हाउस को बैठना था, ठीक उसी दिन 10 बजे कोर्ट में दावा दायर कर दिया गया। उस लाइ-सेंसदारों के खिलाफ गवर्नमेंट की तरफ से। जब हाउस बैठा तो अपोज़ीशन ने कहा कि सुना है सी० बी० आई० की रिपोर्ट आ गयी है, उसे हाउस की मेज पर रखिए। तो उसका जवाब मिलता है कि वह मामला न्यायालय के विचाराधीन है। सवाल

उठता है कि आपने उसे विचाराधीन क्यों कर दिया ? इससे अधिक बेईमानी की बात क्या हो सकती है ? आपने तो वादा किया था। आपको मिनिस्टर होने का मौका मिलेगा, तो क्या ऐसे ही करोगे ? अगर ऐसा करोगे, तो आपको मुबारक। मेरी तो हिम्मत नहीं है। मामूली शालीनताओं को, मामूली मान्यताओं को भी आप नहीं देखेंगे, तो कौन देखेगा ? इस पर मोरारजी ने कहा कि हम हाउस को नहीं चलने देंगे और उन्होंने ठीक किया। विपक्ष का विश्वास है कि आज देश में व्याप्त भ्रष्टाचार के मूल में राजनीतिक लोग हैं। इसलिए उनकी मांग थी कि भ्रष्ट राजनीतिक लोगों के खिलाफ कार्यवाही करो। प्रशासन अपने आप ठीक हो जायेगा। न्यायाधीशों से जांच कराओ। जवाब मिलता है कि हमने देख लिया है, एल० एन० मिश्र के खिलाफ कुछ नहीं है, बंसीलाल के खिलाफ कुछ नहीं है। मोटी सी बात है कि अगर उनके खिलाफ कुछ नहीं है, तो जज द्वारा इन्क्वायरी कराने में क्या हानि थी ? क्या यह ईमानदारी है ?

एक बात मैं पहले भी सदन में कह चुका हूं, उसे फिर दोहराता हूं।···सन् 1760 में ब्रिटिश पार्लियामेंट में मिनिस्टरों के खिलाफ शिकायत आयी, तो उस वक्त के प्रधान मंत्री अर्ल आफ चेटहेम ने कहा था कि अगर किसी मिनिस्टर के खिलाफ कोई शिकायत आती है, चाहे वह छोटी हो या बड़ी, हमारा फर्ज होता है कि उसकी तहकीकात करायें। अगर बात गलत पायी गयी, तो गवर्नमेंट की उससे शान बढ़ेगी और मन्त्री निर्दोष पाया गया, तो भी गवर्नमेंट की प्रतिष्ठा बढ़ेगी। लोग कहेंगे कि गलत आरोप लगाये गये। किसी विशेष संवाददाता ने इंदिरा जी से पूछा कि लोग आपके साथियों के खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोप लगाते हैं, तो उन्होंने कहा कि हमारा कोई मंत्री भ्रष्ट नहीं है। क्या इससे अधिक असत्य दुनिया में कोई और हो सकता है ? हालत यह है कि किसी जगह के लिए अगर आपके दो उम्मीदवार हैं, एक कम भ्रष्ट है और दूसरा अधिक तो मुकाबले में ईमानदारी या कम भ्रष्ट के उसको लिया जायेगा, जो भ्रष्ट हैं या अधिक भ्रष्ट हैं। क्योंकि वे जानती हैं वह तीन-पांच नहीं करेगा। हम कहते हैं कि आप इन्क्वायरी क्यों नहीं कराते हैं ? फिर आपकी हिम्मत की एक बात कहता हूं, आप एल० एन० मिश्र को शहीद बनाना चाहते हैं, क्यों ? इसलिए न कि आप लोग उनके और अपने पापों को छिपाना चाहते हैं।

हमारी बहिन गलती से भी कभी सही बात नहीं कहती हैं। रोज ही गलत प्रोपेगैंडा करेंगी, जिस तरह साम्यवादी देशों में ब्रेन-वाश किया जाता है या दिमाग की सफाई होती है। एक गलत काम करो, तो उसको छिपाने के लिए हजार झूठ बोले जाते हैं और हजार गलत बातें की जाती हैं।

फिर आपने विरोध-पक्ष पर एक आरोप लगाया है हिंसा करने का। तो वह कहां है ? कहीं पर आज तक ईंटे फेंकी गयी हों, वह बतायें। हिंसा साबित न कर सके

तो आप कहते हैं हिंसा के लिए तैयारी हो रही थी। कहीं कोई अन्य प्रकार का केस हुआ हो, तो उस सिलसिले का केस चलाती हैं। सारे मुल्क में इमरजेंसी लगाने की क्या आवश्यकता थी और हम लोगों को जेल में बन्द कर दिया, बिना किसी प्रकार की तहकीकात किये। आपको प्रेसीडेंट मिल गया दस्तखत करने वाला। मैं केवल इंदिरा जी को भी दोष नहीं देता। वे 336 मेम्बर पार्लियामेंट में जो आंख बन्द करके हाथ उठाते हैं, उनका दोष इंन्दिरा जी से कम नहीं है। दो लाख व्यक्तियों का एक एम० एल० ए० प्रतिनिधित्व करता है और दस लाख का एम० पी० प्रतिनिधित्व करता है। मैं फिर कहता हूं कि वायलेंस करने जा रहे हैं, तो उसका सबूत आज तक क्यों नहीं दिया ? हमें दिखा देते यह सबूत अलहदा बुलाकर या कोर्ट में दिखा देते। परन्तु आज तक नहीं दिखाया गया।

श्री रमेश श्रीवास्तव—यह तो हाउस की कार्यवाही में मौजूद है। आप तो हिंसा में विश्वास करते हैं।

चौधरी चरण सिंह—हां करता हूं, लेकिन उतना ही जितना श्री कृष्ण जी करते थे। उन्होंने दुर्योधन से कहा था कि अगर पांडवों के साथ घोर अन्याय करोगे और उनको पांच गांव भी नहीं दोगे तो युद्ध अनिवार्य हो जायेगा। इसी में सन्दर्भ आप महात्मा गांधी के विचार जानने की कृपा करें, जो अहिंसा को धर्म के तौर पर मानते थे। गांधी जी ने कहा था कि मैं अहिंसा धर्म से स्वराज्य चाहता हूं, तभी मेरे स्वप्नों का हिन्दुस्तान बनेगा। लेकिन अगर अहिंसा से स्वराज्य नहीं मिलता, तो मैं गुलामी से बेहतर हिंसा को मानता हूं। हिंसा से बदतर गुलामी है। (व्यवधान)

···आप क्या कह रहे हैं ?

चौधरी चरण सिंह—मैं सही कह रहा हूं।

सभी कांग्रेसमैनों का और पण्डित नेहरू का यही ख्याल था, वह नहीं मानते थे। अहिंसा को धर्म के तौर पर नहीं, मसलहत और पालिसी के तौर पर मानते थे। हिंसा किन्ही परिस्थितियों में भी नहीं होगी, यह किसी ने नहीं कहा था। ऐसी परिस्थितियां हो सकती हैं, मजबूरी और आवश्यकता हो सकती है, जिनमें हिंसा करनी पड़ सकती है—ऐसा लगभग सभी का विश्वास था। यह श्रीकृष्ण ने कहा था, पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था, महात्मा गांधी ने कहा था और यही मेरा कहना है। आप 60 करोड़ों को गुलाम बनाकर रख दें। उनकी स्वतंत्रता समाप्त कर दें, और आप चाहते हैं, यह सब कुछ मुल्क बर्दाश्त करता रहे ! मैं लोगों से हिंसा करने के लिए कहूं, यह मुमकिन नहीं है और चाहूं तो कर भी नहीं सकता हूं। लेकिन आप समझते है कि स्टीम इकट्ठी होती रहे बायलर में और कहीं कुछ नहीं होगा। होगा, अवश्य होगा, एक विस्फोट होगा, एण्ड दी कंट्री विल बी डूम्ड इन फ्लेम्स (और देश जल जायेगा)। मैं आपके हित में कह रहा हूं। अपने हित में और देश के हित में यह

बातें कह रहा हूं। आप किसी को ऐसा मौका न दें। हो सकता है कि कहीं कोई नौजवान या कोई पार्टी ऐसी हो, जो बहुत दिनों तक इस प्रकार का दमन बर्दाश्त नहीं कर पायेगी कि आप उनकी आजादी सदा के लिए छीन कर रख लें। इमरजेंसी किसी मुल्क में आई है, तो वह एक महीने से ज्यादा नहीं रही है। और अपने यहां 17-18 महीने तक चलने की उम्मीद है, जैसा कि सुनते हैं कि प्रधानमंत्री जी ने आचार्य जी को जवाब दिया है कि यह नवम्बर-दिसम्बर तक रहने की उम्मीद है। आप एक बार पावर में आ गये, तो आप सदैव के लिए देश के मालिक और सर्वेसर्वा नहीं बन गये। आप ही सब कुछ नहीं हैं कि आप सबको मनचाहे ढंग से मिटा कर रख दें। गांधी जी ने अहिंसा का सहारा लिया है, लेकिन कायरता के कारण नहीं, अगर उनकी बात आती, तो भी हिंसा हो सकती है। उन्होंने कहा था कि अहिंसा के असफल हो जाने पर मैं लोगों से कहूंगा कि तलवारें उठाये स्वराज्य के लिए। मैं उनकी इस बात को उचित मानता हूं। यदि यह गैरकानूनी है, तो मैं इसको पुनः कहने को तैयार हूं और अपने अपराध के विरुद्ध कार्यवाही की मांग करूंगा। मेरी पार्टी के लोग मुझसे नाराज थे तब, जब मैं कहता था कि सत्याग्रह के लिए किसी डेमोक्रेसी (लोकतंत्र) में स्थान नहीं है। मैं कांग्रेस में था, तब भी मेरा ऐसा ही विचार था कि सत्याग्रह एक विद्रोह है। सत्याग्रह की राय गांधी जी ने इसलिए दी थी कि हमारे पास हथियार नहीं थे। आज कल हर मुल्क की गवर्नमेंट शस्त्रों से सुसज्जित है, इसलिए हिंसा की गुंजाइश नहीं है। डेमोक्रेसी आई, यह डेमोक्रेसी ठीक तरह से चलती है तो सत्याग्रह की किसी को जरूरत नहीं। यही हमारा चुनाव घोषणा पत्र कहता था। यही उसमें लिखा हुआ है, यही हमने माना है। हिंसा की बात किस सन्दर्भ में कही है, यह आप सोचें। इलेक्शन में आप ईमानदारी न करें, हिम्मत के साथ बेईमानी करें, उसकी शिकायत की जाय, तो जवाब मिले कि इलेक्शन पिटीशन में जाओ, जहां निर्णय पांच साल में होता है। हिम्मत होती, तो तहकीकात कराते। गांव में घुस नहीं पाते थे और दो सौ पन्द्रह की मेजोरेटी (बहुमत) ले आये कुछ असफरों की कृपा से, तो दूसरे आदमी क्या करें ? यदि आप येन-केन-प्रकारेण सत्ता में रहना ही चाहते हैं, चाहे बेईमानी करके हो, चाहे करोड़ों रुपये इस्तेमाल करके हो, चाहे गवर्नमेंट के साधनों का इस्तेमाल करके हो, या फिर कम्बल और धोती बांट कर ही या फिर कुछ न हो तो इमरजेंसी घोषित करके हो, तो मैं कहता हूं कि विपक्ष को हक हासिल है कि वह येन-केन-प्रकारेण, जिस तरह से हो, आपको सत्ता से निकाल बाहर करे। यह मैं जानबूझ कर कहता हूं। (व्यवधान)

चौधरी चरण सिंह—अगर आप नाजायज बात करेंगे, डेमोक्रेसी को नहीं मानेंगे और आप हमेशा पावर में रहना चाहेंगे, तो अपोजीशन (विपक्ष) को भी अधिकार है इस तरह के हथकण्डे इस्तेमाल करने का। रोज ही कहती हैं इंदिरा जी, कि

विपक्ष वाले मिले हुए हैं अमेरिका से। हम देशद्रोही हैं, रोज़ कहती है। माननीय नारायणदत्त तिवारी और सभी से जानना चाहता हूं कि आप से राय अलग रखना या कहना कि अमेरिका और यूरोप या रूस या चीन सबसे अपने, दूसरे के हित में ताल्लुकात रखना उचित है। न कोई हमारा दुश्मन है, न दोस्त है। हमारे जो सोशलिस्ट पार्टी के दोस्त हैं, उनके बारे में आपने शायद कुछ और सुना है। मेरा कुछ और हो सकता है। लेकिन सवाल यह है कि हमने अमेरिका से साजिश की है अपने देश के खिलाफ, इसका कोई सबूत है? आपको यह नहीं कहना चाहिए अगर आपके पास सबूत नहीं है। इंदिरा जी रोज कहती हैं। बोलो कहां चले जायें? क्या करें? क्या करे अपोज़ीशन (विपक्ष)? आपकी प्राइम मिनिस्टर की रोज़ की तकरीर है कि हम लोग बाहर के देशों से मिले हुए हैं। अगर आपको यह बात अच्छी लगती है, तो लगे। इंदिरा जी ने रोज़ इस बात को कहा है कि विपक्ष के नेता दुश्मनों से मिले हुए हैं। मैं जानना चाहता हूं कि आपको क्या कहना है?

सरकारी पक्ष की ओर से··· ··जार्ज फर्नान्डीज़ की चिट्ठी इस आरोप की शहादत है·····

चौधरी चरण सिंह—यह जो चिट्ठी की बात आप कहते हैं सो गवर्नमेंट के बहुत से संगठन और गवर्नमेंट समर्थक दूसरे देशों से बहुत सा धन पाते हैं, इससे नारायणदत्त तिवारी जी इन्कार नहीं करेंगे। एक दूसरी बात यह है कि जो आपने उन पर चार्ज (आरोप) लगाया, हमने भी पढ़ा है, जब दिल्ली में थे। यह तब लगाया गया जब आपने इमरजेंसी लगा दी और रेल कर्मचारियों की हड़ताल के सिलसिले में लगाया, जो सन् 1974 में हुई थी, क्यों नहीं उसी समय लगाया?

श्री धर्मवीर—स्थिति तो तब सामने आई, जब यह मालूम हुआ।

श्री उपाध्याय—आप बैठने की कृपा करें। माननीय सदस्य अपना आसन ग्रहण करें।

श्री चरण सिंह—यह बेकार की बात है।

श्री धर्मवीर—यह पत्र पकड़ा गया।

श्री चरण सिंह—तो उसको प्रकाशित कराने में क्या हानि है?

श्री धर्मवीर—मैं आपको उसकी प्रतियां दे दूंगा और आपके दल को भी दे दूंगा।

श्री उपाध्यक्ष—मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि जो विवाद है वह राज्यपाल के अभिभाषण से परे है। मैं चाहूंगा कि अपने विचारों को सीमित रखें। राजनीतिक विवाद को लेकर विवाद किया जायेगा, तो स्थिति मेरे लिए कठिन हो जायेगी।

श्री चरण सिंह—मैं समझा नहीं कि मेरी क्या गलती है।

श्री उपाध्यक्ष—प्रश्न और उत्तर जो हो रहे हैं, उनसे मुझे दिक्कत होगी। राज्यपाल के अभिभाषण तक ही सीमित रहें। राष्ट्रीय स्तर पर चले जायें और जो विचार राज्यपाल के अभिभाषण पर करने हैं, उससे दूर चले जायें, तो मेरे लिए कठिन हो जायेगा।

श्री अब्दुल रऊफ लारी—जो विवाद उत्पन्न करें, उसी को तो मना करेंगे?

श्री उपाध्यक्ष—माननीय सदस्य बैठ जायें।

श्री रामनारायण पाठक—माननीय उपाध्यक्ष जी, मेरा व्यवस्था का प्रश्न है। आप हमारी बात को सुन लें।

श्री उपाध्यक्ष—आप कृपा कर बैठ जाइये।

चौधरी चरण सिंह—उपाध्यक्ष महोदय, मैं बतला रहा था कि इमरजेंसी क्यों लागू की गयी? प्राइम मिनिस्टर ने अनेक बार यह कहा है कि अपोजीशन लीडर्स का दूसरे अनेक देशों से सम्बन्ध है। जिसका मतलब है कि हम देश के दुश्मन हैं। मैं यह कह रहा हूं कि इंदिरा जी अनेक बार यह कह चुकी हैं, हजारों बार कह चुकी हैं कि अपोजीशन लीडर्स का दूसरे देशों से सम्बन्ध हैं। यह चार्ज है। इससे बड़ा चार्ज कोई नहीं हो सकता हैं एक पोलिटिकल (राजनीतिक) आदमी के लिए।

श्री रामनारायण पाठक—मान्यवर! मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि इसका जवाब दे दिया जाये।

श्री चरण सिंह—आपका तात्पर्य है कि मैं गलत कह रहा हूं। आप जिस ढंग से कह रहे हैं, राजनीतिक विवाद में फंस जायेंगे।

श्री उपाध्यक्ष—माननीय सदस्य बैठ जायें, बीच में न बोले।

श्री चरण सिंह—मैंने पूछा कि पहले क्यों नहीं पेश किया। पत्र फर्नान्डीज साहब का है, तो उनके खिलाफ मुकदमा दायर कीजिए, सजा हो जाये तो हम निन्दा करेंगे।

चौधरी चरण सिंह—यह कानून है, जिसके पास कोई जवाब नहीं होता वे ही यह कहते हैं कि हम लोग दुश्मनों से मिले हुए हैं। आप उन पर न्यायालय में मुकदमा क्यों नहीं चलाते हैं?

औद्योगिक उत्पादन के बारे में कहा जाता है कि यह इमरजेंसी से पहले जमाने में बहुत कम हो गया था, अब बढ़ गया है। बहुत खूब, आपकी नाकाबलियत से जो गड़बड़ियां पैदा हुई हैं, उसके लिए भी क्या हमारी जिम्मेदारी है। टी० यू० सी० शायद श्रमिकों का सबसे बड़ा संगठन है, जो आपके दोस्त सी० पी० आई० के हाथ में हैं। अगर हड़ताल हुई होगी, तो आपके दोस्तों ने करायी होगी। एक दूसरा संगठन है आई० टी० यू० सी०।

श्री भीखा लाल—इन आठ-नौ महीनों में देश में प्रोडक्शन (उत्पादन) बढ़ गया है।

चौधरी चरण सिंह—आप जब चाहते हैं, तो बढ़ जाता है, और जब आप चाहते हैं तो घट जाता है। औद्योगिक श्रमिकों के जो सार्वजनिक महत्त्वपूर्ण संगठन हैं, वे आपके हाथ में हैं, विरोधी दलों के हाथ में नहीं हैं, नाकाबलियत अपनी और जिम्मेदारी विपक्ष की।

आपके 20 प्वाइन्ट्स (सूत्र) हैं, उनमें कहा गया है कि विद्यालयों एवं छात्रावासों में विपक्ष वाले अनुशासनहीनता फैलाते हैं। मुमकिन है कि कुछ लोग फैलाते हों, लेकिन कांग्रेस वाले भी कम नहीं हैं। हमने सन् 1970 में निश्चय किया था कि कम्पलसरी स्टूडेन्ट्स यूनियन (अनिवार्य छात्र संघ) होना उचित नहीं है। नतीजा यह हुआ कि हालांकि कांग्रेस वालों ने और विपक्ष वालों ने भी लड़कों को भड़काया, लेकिन न कोई गोली चली, न कहीं पर हिंसा हुई। मुमकिन है दस-बीस लड़के गिरफ्तार हुए हों और उस वर्ष सबसे अधिक पढ़ाई हुई। जिस तरह की पढ़ाई हुई और विद्यालयों में शान्ति रही, उसके बारे में मेरे पास अनेक पत्र आये जिनमें कहा गया था कि इतनी पढ़ाई विगत 20 वर्षों में भी नहीं हुई। आपके लीडर त्रिपाठी जी आये, 5 तारीख को पावर (शासन) में और आते ही उन्होंने वह आर्डिनेंस (अध्यादेश) वापस ले लिया और फिर अनिवार्य यूनियन्स बनीं, नतीजा क्या हुआ, यूनिवर्सिटी जली। आज तक कहीं इतना बड़ा काण्ड नहीं हुआ, लेकिन फिर भी जो व्यक्ति इसके लिए जिम्मेदार था, (श्री त्रिपाठी) उनकी तरक्की हो गयी। तो मैं जानना चाहता हूं कि अगर यहां पर लड़कों के झगड़े हुए हैं, तो कौन है इसका जिम्मेदार ? जब गवर्नमेंट की तरफ से कोशिश हुई कि यूनियन्स न हों, तो आपकी ओर से कोशिश हुई कि हों। जब मैं जेल (दिल्ली में) में था, तो वहां पर एक पुलिस अधिकारी थे (एस० एच० ओ०)। उन्होंने मुझे बताया है कि जब कभी बस जलाने में या यूनिवर्सिटी कैम्पस में बदमाशी करने की वजह से लड़कों को गिरफ्तार किया गया, तो हमेशा कांग्रेस के लीडरों की ओर से कहा गया कि उनके ऊपर केस न चलाओ। शिकायत दर्ज कर लो और कुछ दिन बाद उन्हें छोड़ दो, लेकिन अनुशासनहीनता कराने का दोष दिया जाता है हमको।

एक तर्क हमारे विरुद्ध यह भी दिया गया है कि हम लोग प्रधानमंत्री के पद की बदनामी करते थे। कहा गया है कि हम उनकी शान नहीं बढ़ने दे रहे थे। हम तो चाहते हैं कि उनकी शान बढ़े, लेकिन डेमोक्रेसी में हमेशा यह होता है कि अपने काम से ही अपनी शान बढ़ती है। क्या हमने विल्सन साहब की शान बढ़ा दी है। उन्होंने अपने आप कहा कि मैं आठ साल तक प्राइम मिनिस्टर (प्रधान मंत्री) रह चुका हूं, अब और अधिक समय तक प्राइम मिनिस्टर नहीं रहना चाहता; लेकिन हमारी बहिन जी ने टेलीविजन पर इन्टरव्यू देते हुए कहा कि अभी तो मेरा काम

बाकी है। क्योंकि गवर्नमेंट का काम बाकी है। देश है, सरकार है, हमेशा समस्यायें बनी रहेंगी। लिहाजा हमेशा ही देश को इंदिरा चाहिए। मैं पूछना चाहता हूं कि किसी के कहने से मेरी शान नहीं घटेगी, मेरे कुकर्मों से ही घटेगी। आप मुल्क को किधर ले जा रही हैं? आप चाहते हैं कि देश में एक दलीय शासन हो और सिवाय कांग्रेस के कोई दूसरी पार्टी न रहे?

अभी तमिलनाडु में क्या हुआ? मार्च के महीने में वहां की विधान सभा की अवधि खतम होने वाली थी, लेकिन आपकी सरकार ने केवल डेढ़ महीने पूर्व वहां की प्रदेशीय सरकार और असेम्बली को बर्खास्त करके अपने कब्जे में वहां का शासन ले लिया। मैं जानता हूं कि क्यों ले लिया? वे तो कहते थे कि आप दोनों चुनाव लोक सभा और विधान सभा के साथ-साथ करायें और अगर पार्लियामेन्ट का नहीं कराते हैं, तो विधान सभा को भी मुल्तवी करा दें। फिर भी एक-दो महीने पूर्व ही बर्खास्त करके शासन को अपने हाथ में ले लिया। कहा गया कि उनके खिलाफ आरोप थे, सन् 1972 से। लेकिन सुनने में आया है कि वहां के गवर्नर ने अपने हर सम्बोधन में उनकी तारीफ की है। उधर कर्नाटक को आप देखें, वहां की कांग्रेस पार्टी ने प्रस्ताव पास किया, अपनी ही गवर्नमेंट के खिलाफ।

श्री उपाध्यक्ष—माननीय तिवारी जी इसका कैसे जवाब दे सकते हैं।

चौधरी चरण सिंह—छोड़िये अन्य प्रदेशों को। मैं यह सही कह रहा हूं कि रेजोल्यूशन पास होता है चीफ मिनिस्टर के विरुद्ध, लेकिन कोई एक्शन (कार्यवाही) नहीं की जाती है। जो गलती पायी गयी है, अकुशलता पायी गयी, वह केवल दो सरकारों में पायी गयी है, एक गुजरात और दूसरी तमिलनाडु में। न यू० पी० में, न पंजाब में, न हरियाणा में, न बिहार में। तो इसका मतलब क्या निकला? यह कि आपकी इच्छा है कि देश में एक दलीय शासन हो। लिहाजा दूसरी पार्टी के लोगों को लालच देकर फुसला कर पार्टी में शामिल कर लिया जाये। बराबर प्रोपेगैण्डा किया गया कि गुजरात की सरकार गिरेगी और आखिर में गिरा ही दी। जनवरी में पार्लियामेंट का इजलास शुरू होने से दो या तीन दिन पहले सचिवालय के सामने इन्दिरा जी ने विपक्ष को ध्वस्त करने, उनको मिटा देने का आह्वान किया। मैं जानना चाहता हूं कि दुनिया के किसी मुल्क में डेमोक्रेटिक लीडर्स (लोकतांत्रिक नेता) यह दृष्टिकोण अपनाते हैं या कहते हैं कि विपक्ष को समाप्त ही कर देना है? 5 जनवरी के अखबार निकाल लीजिए, हमारे पास इस वक्त नहीं हैं। मैंने पढ़ा हुआ है एक बार नहीं दो बार कहा, किसी इन्डिपेन्डेंट (निर्दलीय) मेम्बर ने श्रीमती जी से यह पूछ ही लिया कि आप विपक्ष वालों से बात क्यों नहीं करतीं? उन्होंने (इन्दिरा जी ने) कहा कि मैं कभी इनसे बात नहीं करूंगी। यह रवैया है प्राइम मिनिस्टर का। फिर जब अगले रोज़ लोगों ने कहा कि आपका इस तरह से कहना मुनासिब नहीं है, तो उन्होंने फरमाया कि "आई एम प्रिपेयर्ड

टू होल्ड ए डायलॉग प्रोवाइडेड दि अपोज़ीशन क्रियेट्स प्रापर ऐटमॉसफियर फॉर ए डायलॉग एण्ड डज नॉट ऑफर एनी ऑब्सट्रक्शन टू गवर्नमेन्ट्स वर्किंग" (मैं बात करने के लिए तैयार हूं, बशर्ते विपक्ष ऐसी बातचीत के लिए उचित वातावरण तैयार करे और सरकार की कार्य प्रणाली में बाधा न डाले)। उस पर एच० एम० पटेल, जो जनता फ्रन्ट (मोर्चे) के चेयरमैन हैं और गोरे साहब, उन्होंने फौरन इन्दिरा जी को पत्र लिखा। उन्होंने कहा कि आज आपने यह कहा है कि आप बात करने को तैयार हैं। अब आप से जानना चाहते हैं कि इसके लिए हम उचित वातावरण किस प्रकार पैदा कर सकते हैं? जहां तक आपने यह कहा कि हम लोग बाधा डालते रहते हैं प्रशासन में, सो उसकी मिसाल हम जानना चाहते हैं। हम केवल विपक्ष दल के कर्त्तव्यों को पूरा करते हैं। आपकी जिन नीतियों से देश को नुकसान पहुंच रहा है, उनकी हम आलोचना करते हैं और करते रहेंगे। लेकिन हिंसा हमने कहां की है, क्या बाधा डाला है? आज तक इस पत्र का जवाब नहीं आया है। यही नहीं, जयप्रकाश जी ने एक लेटर लिखा। गोरे साहब ने उनसे कहा, तो उन्होंने इतना मुलायम लिख दिया कि बहुत ज्यादा। अगर मैं होता तो उनको लिखने न देता। इस पत्र की प्राप्ति की सूचना तक भी नहीं भेजी गयी। यह नक्शा है! यही नहीं, जिस आचार्य के नाम का फायदा उठा रही थीं कि वह इमरजेंसी को अनुशासन-पर्व कहते हैं। बसों पर, रेलों पर, दुकानों पर यह पोस्टर लगवा दिये। पर बाबा तो पोलिटिकल नहीं हैं—संन्यासी हैं। निन्दा होती है अपोजीशन की, जब बाबा यह कहते हैं कि हमने यह नहीं कहा था। तो जितने पोस्टर लगे हुए थे दिल्ली की बसों पर और दुकानों पर वह मिटाये गये। इस तरह आपने खूब फायदा उठाया उनके नाम का। लेकिन जब आचार्यों की कान्फ्रेंस करते हैं और वह गैर-राजनीतिक लोग, जिनमें एक्स चीफ-जस्टिस हाईकोर्ट और सुप्रीमकोर्ट के भी हैं, रिटायर्ड वाइस चांसलर्स, जर्नलिस्ट और लिट्रेटियोर, पत्रकार और साहित्यकार हैं और किसी का कोई राजनीतिक लगाव नहीं है, उन सब ने जो रिजोल्यूशन (प्रस्ताव) पास करके भेजा, आपने पढ़ा होगा, हर मामले या बात में जो विपक्ष ने कही हैं, उन सब में उन्होंने विपक्ष का समर्थन किया। सर्वसम्मत प्रस्ताव सबके मश्विरे से पारित हो गया। उन्होंने उसमें यह कहा कि आप जल्दी इस मसले को सुधारें, ताकि कोई अप्रिय घटनायें घटित न हों, जिसका मतलब है, ताकि हिंसा न हो जाये। क्योंकि हर तरीके से किसी कौम को, किसी देश को दबाया जाता है, तो हिंसा होती है। (व्यवधान) अच्छा महोदय, आचार्य लोगों के यूनेनिमस रिजोल्यूशन (सर्वसम्मत प्रस्ताव) को उनके पास भेजा जाता है और श्री श्रीमन्नारायण जी जाते हैं, जो गवर्नर रह चुके हैं। प्लानिंग कमीशन के मेम्बर भी रह चुके हैं और काठमाण्डू में राजदूत रह चुके हैं। दस दिन तक वक्त मांगते हैं। टेलीफोन आप खुद नहीं उठाती हैं, हमेशा आदमी जवाब देता है कि बाद में आपको फोन पर समय दिया जाएगा। दस

रोज इन्तजार करके लौट गये। संक्षेप में फिर कहा, पहिले इन्दिरा जी ने कहा कि कांग्रेस जन को चाहिए विपक्ष को कुचल दें। अगले रोज जब लोगों ने कहा कि अपोजीशन से कुछ बात कीजिए तो कहा कि नहीं, मैं नहीं करूंगी ! जब लोगों ने बहुत कहा तो कहा कि ठीक है, मैं तैयार हूं, उसके लिए वातावरण तैयार कीजिए। लेकिन अपोजीशन की तरफ से लेटर लिखा गया, उसका एकानालेजमेंट (प्राप्ति सूचना) तक न किया गया। जे० पी० ने जो लिखा था, उसका जवाब तो दे देती। जिस बाबा की बड़ी तारीफ रही, और है, उनसे मशविरा करके लोगों ने एक सर्वसम्मत प्रस्ताव पास किया ! वे सब गैर राजनीतिक व्यक्ति थे और प्रस्ताव को लेकर एक आदमी गया, लेकिन उससे दस दिन तक बात तक नहीं की गयी, इतना भी सौजन्य नहीं। यह तो नशा है, यह नशा लम्बे समय तक नहीं टिकेगा। अगर इस तरह से होगा तो देश कैसे तरक्की करेगा। जो कुछ भी करो इंसाफ के साथ करो। हम चुनाव कराने को तैयार हैं, लेकिन आज तो आप चुनाव के लिए भी तैयार नहीं हैं। फिर हमारा दोष क्या है ?

अब इन्दिरा जी का बीस-सूत्री प्रोग्राम लीजिए। यह कांग्रेस का प्रोग्राम नहीं है, गवर्नमेंट का प्रोग्राम नहीं है, हर जगह यही पढ़ने को मिलता है कि इन्दिरा जी के प्रोग्राम को पूरा करके उनके हाथ मजबूत करो। जगर आपको उनके हाथ मजबूत करना ही था, तो लिखते कि कांग्रेस के हाथ मजबूत करो। अगर आप कहीं डेवलपमेंट ब्लॉक (विकास क्षेत्र) में जाइये, जहां कोई छोटी सड़क बनी, या ट्यूबवेल है, तो वहां यही लिखा मिलेगा कि इन्दिरा जी के बीस-सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत बनाया गया है। (व्यवधान)

श्री उपाध्यक्ष—माननीय सदस्य सदन में शान्ति रखें।

चौधरी चरण सिंह—अपने दौरे में एक जिले में ही नहीं, मैंने अनेक स्थानों पर लिखा हुआ देखा है। (व्यवधान)

श्री उपाध्यक्ष—यह कौन सा तरीका है इस तरह से आपस में बातचीत करने का। यह नहीं होना चाहिए।

चौधरी चरण सिंह—इन्दिरा जी के बीस-सूत्रीय कार्यक्रम के सिलसिले में तथा उनकी हुकूमत के दस साल पूरे होने पर एक उत्सव मनाया गया। किसी भी लोकतांत्रिक देश में ऐसा हुआ ? डिवेलरा सोलह वर्ष तक आयरलैंड के प्रधान मंत्री रहे, ग्लैडस्टन भी दस साल तक लीडर रहे, लेकिन कहीं भी इस तरह का कोई उत्सव नहीं हुआ। नौजवान धर्मवीर जी या कौन हैं, वे नाराज न हों, वे इस बात को सोचें। अगर प्राइम मिनिस्टर के अपने निजी तौर से या पार्टी की तरफ से वह दिन मनाया जाता, तो इसमें कोई हर्ज नहीं था। लेकिन आपने सार्वजनिक उद्योगों को, गवर्नमेन्ट को और प्राइम मिनिस्टरों को एक बना दिया, क्यों ? आखिर आप किधर जा रहे हैं ?

एक आवाज—उसमें हर्ज ही क्या है ?

चौधरी चरण सिंह - हर्ज है। यह कोई डेमोक्रेसी नहीं है। राजा की वर्षी मनायी जाती है, रानियों की वर्षी मनायी जाती है, कि उन्होंने दस साल तक राज्य किया। किसी भी डेमोक्रेटिक कन्ट्री में आज तक यह सुनने को नहीं मिला है कि इस तरह से कोई दिन मनाया गया हो। इस बारे में आप माननीय नारायण दत्त जी से ही पूछ लें। इसमें कोई हर्ज नहीं है। आपने स्टेट और पार्टी को एक बना दिया इन्दिरा जी के साथ। इसको आप सोचें। जेल में मुझे पढ़ने को मिला मिल्क प्राइस कट ऑन दि ऑकेजन ऑफ प्राइम मिनिस्टर इन्दिरा गांधी बर्थडे (प्रधान मंत्री इन्दिरा गांधी के जन्म दिन के शुभ-अवसर पर दूध के मूल्य में कमी)। इसका मतलब यह हुआ कि किसी राजा के लड़का पैदा हो गया, तो इसलिए छुट्टी रहेगी। मैं पूछता हूं कि क्या इसमें हर्ज नहीं है ? और फिर आप मुझसे बहस करते हैं (व्यवधान)।

श्री उपाध्यक्ष—श्री धर्मवीर जी, आप तो एक जिम्मेदार सदस्य हैं; सदन की मर्यादा कायम रखें, और बैठने की कृपा करें।

श्री उपाध्यक्ष—आप लोग बैठने की कृपा करें। आप बोलेंगे, तो कैसे काम चलेगा ?

चौधरी चरण सिंह—मैं मिल्क प्राइस के बारे में कह रहा था।

"Milk-price cut on P.M.'s Birth day. Banglore-Nov. 18th : the state owned Banglore Dairy today further reduced the price of milk from Rs 1.90 to Rs 1.80 per litre to mark the birth day of Mrs. Indira Gandhi tomorrow !

प्रधान मंत्री के जन्म-दिन पर दूध के मूल्यों में कमी।

बंगलौर नवम्बर 18 : कल श्रीमती इन्दिरा गांधी के जन्म दिन की प्रतिष्ठा में सरकारी बंगलौर डेरी ने आज दूध के मूल्यों में और कमी करके रुपया 1.90 से रुपया 1.80 प्रति लीटर कर दिया।

यह टाइम्स ऑफ इण्डिया में निकला है। सुन लीजिए। इस तरह की प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए। लेकिन दिया जा रहा है। किया यह जा रहा है कि एक आदमी है, जो हिन्दुस्तान का मालिक है। यह लोकतन्त्र नहीं है, इस सिलसिले में मेजर जनरल हबीबुल्ला खां का, उनकी धर्मपत्नी यहां मेम्बर भी थीं, एक पत्र उस सिलसिले में पढ़ना चाहता हूं, सुन लीजिए।

श्री ऊदल—अब लगता है कि वह समय नहीं आने वाला है।

श्री चौधरी चरण सिंह—यही मुझको भी लगता है। लेकिन बात अपनी कहे देता हूं।

श्री ऊदल—आप कहिये।

चौधरी चरण सिंह—मैं यह बता दूं, जो इसका मजमून है।

एक माननीय सदस्य—ऐसे ही बता दीजिए, मान लेंगे।

चौधरी चरण सिंह—मान लेंगे तो बड़ी भलमनसाहत है, आपकी।

मैं कह रहा था कि लेटर लिखा है मेजर रणजीत सिंह को जो बस्ती के हैं। हमारी पार्टी के मेम्बर हैं। उन्होंने यह मूलपत्र मुझको दिया हुआ है। मैंने उसको साई-क्लोस्टाइल्ड कराया था। दो कापी मैं लाया था, पर कहीं रह गयी हैं। उसमें जो लिखा था वह यह है कि एक सेल बनायी गयी, नाम है एक्स सर्विसेज यू० पी० कांग्रेस कमेटी सेल। मैं इसका कन्वीनर (संयोजक) मुकर्रर हुआ हूं, प्रदेश भर के लिए। मैं चाहता हूं कि आप गोरखपुर डिवीजन के संयोजक हो जांय और इस सिलसिले में मुझसे बात कर लें। इसमें जो प्वाइंट्स लिखे हुए हैं, वह हैं, जी० ओ० सी० इन सी०, सेन्ट्रल कमाण्ड और फिर हैं, ए० ओ० सी० इन-सी० सेन्ट्रल एअर कमाण्ड, जो सर्विस आफीसर हैं। आप अपने इलेक्शन के ख्याल से उनका (अवकाश प्राप्त सैनिकों का) एक संगठन बना रहे हैं। नाम है एक्स सर्विसेज यू० पी० कांग्रेस कमेटी सेल। एक सेल बनाकर आमन्त्रित कर रहे हैं उन उच्चाधिकारियों को, जो आज सर्विस में हैं। अगर सेल किसी राजनीतिक दल से वास्ता नहीं रखती, तो कोई उसमें हर्ज़ नहीं था। लेकिन नहीं, वह सेल है कांग्रेस पार्टी सेल। मेजर हबीबुल्ला खुद कांग्रेसी हैं। यह कैसे मुमकिन हुआ। आप प्रशासन और आर्मी से फायदा उठाना चाहते हैं पोलिटिकल पावर में आने के लिए। जो गलत है। आप राज्य और पार्टी को एक कर देना चाहते हैं और एक पार्टी का रूल (शासन) देश में लाना चाहते हैं।

अब यहां प्रेसीडेंट (राष्ट्रपति) की भी कोई इज्जत आपने नहीं छोड़ी है। प्रेसीडेंट ऐसा बनायेंगे, जो अत्यन्त विवादास्पद आदमी हो। बड़े-बड़े पदों पर ऐसे आदमी होने चाहिए जो विवाद के ऊपर के हों या जिनके विरुद्ध व्यक्तिगत कोई बात न कह सके या कम कह सके। लेकिन नहीं, ऐसे को बनायेंगे जो अपनी मुट्ठी या जेब में हो। चाहे किसी कमीशन की रिपोर्ट ही उसके खिलाफ क्यों न रखी हो और चाहे जैसे कागज पर उससे दस्तखत करा लेंगे। दुनिया में किसी राज्य के अध्यक्ष के जरिये ऐसी इमरजेंसी स्वीकृत नहीं हो सकती थी, जो हमारे यहां हुई। इसके पहले पार्लियामेंट से एक विधेयक नामंजूर हुआ। उसी समय एक अध्यादेश भेज दिया जाता है, हवाई जहाज से, प्रेसीडेंट के पास, जो दिल्ली से बाहर थे और तुरन्त उस पर मोहर लग जाती है राष्ट्रपति की। इस तरह जो प्रतिष्ठा प्रेसीडेंट के पद की है वह आप स्वयं गिराते हैं।

संविधान सभा में जब संविधान के अनुच्छेद 357 पर, जिसमें किसी प्रदेश के शासन को अपने हाथ में लेने और विधान सभा तथा मन्त्रि-परिषद् को बर्खास्त करने का प्राविधान है, बहस हो रही थी, तो डॉक्टर अम्बेडकर ने कहा था कि—

'If they are at all brought into practice, I hope the President,

who is endowed with these powers, will take proper precautions before actually suspending the administration of the province."

"यदि यह प्राविधान कभी प्रयोग में आते हैं, तो मुझको आशा है कि राष्ट्रपति, जो इन अधिकारों का धारक है, किसी प्रदेश के शासन को निलम्बित करने के पहले पर्याप्त सावधानी बरतेगा।" परन्तु व्यवहार में ऐसी कोई सावधानी बरती नहीं जा रही है। तमिलनाडु की गवर्नमेंट ने कहा था कि वह विधान-सभा का चुनाव लोक सभा के साथ कराना चाहते हैं। लोक सभा का चुनाव अगर मुल्तबी होता है, तो विधान सभा का भी होना चाहिए, परन्तु श्रीमती गांधी को यह मंजूर नहीं था और प्रदेश की गवर्नमेंट को आनन-फानन में बर्खास्त कर दिया।

इसी प्रकार इमरजेंसी की बात है। संसार भर में कदाचित् इमरजेंसी का प्राविधान केवल ब्रिटेन में है, सो भी किसी युद्ध के दौरान। युद्ध का अन्त हुआ और उसके एक या दो-तीन महीने के अन्दर आपातकालीन स्थिति स्वयं ही समाप्त हो जाती है। इसके सम्बन्ध में डॉक्टर अम्बेडकर ने कहा था—

"Emergency provision will be a dead letter in practice."

आपातस्थिति का प्राविधान व्यवहार में नहीं के बराबर होगा। परन्तु आज अपने देश में इमरजेंसी को लगे हुए नौ महीने हो गये।

इलेक्शन कमीशन का भी यही हाल है। दो-दो साल तक किसी क्षेत्र में इलेक्शन नहीं करवायेगा। जिला बिजनौर में डेढ़ साल से नहीं हुआ। लेकिन जहां चाहेंगे, वहां दो महीने में करवा देंगे। सॉलीसिटर एण्ड एटार्नी जनरल भी इसी तरह हैं। जो चाहें परामर्श ले लें, चाहे चीनी के कारखानों के राष्ट्रीयकरण की बात हो या और कोई बात हो। वाइस चांसलर से भी यही उम्मीद करते हैं। कांग्रेस का लड़का शान्ति भंग करे, तो निकाला नहीं जायेगा। लेकिन जनसंघ का लड़का करे, तो निकाल दिया जायेगा। बहुत विवरणपूर्ण मैं दिल्ली की बात बतला सकता हूं, लेकिन इतना समय नहीं है। आपकी क्या इज्जत है धर्मवीर जी ? और मुख्य मंत्री जी की क्या इज्जत है; क्या पार्टी चुनती है लीडर को ? मुख्यमंत्री आपके द्वारा बनाये या हटाये नहीं जाते। चीफ मिनिस्टर बनते या बिगाड़े जाते हैं दिल्ली में। हमारे माननीय बहुगुणा जी गये दिल्ली में। एक दिन विधान सभा में मुझसे कह रहे थे कि हमने आपका इन्तजाम कर दिया कि आप वहीं (विरोध में) बैठे रहेंगे। कोई हर्ज नहीं। जो पद्धति है, वैसी है, उसमें अगर हम बैठे रहेंगे, तो कोई हर्ज नहीं। अगले दिन मलिक साहब (भारतीय लोक दल के विधायक) ने उत्तर दिया कि बहुगुणा जी आप नौकर हैं, जिस दिन मालिक चाहेगा निकाल देगा। उनके साथ हमदर्दी है। नहीं था प्राइम मिनिस्टर को अधिकार कि दबाव डालकर उनसे इस्तीफा ले लें। नहीं है अधिकार कि पोलिटिकल पार्टी को कठपुतली की तरह चलायें। हरियाणा में बनारसी

दास हो गये और यहां नारायण दत्त तिवारी हो गये चीफ मिनिस्टर। तो आप नामज़द किये गये हैं; जिस तरह से सूबेदार हुआ करते थे। नेशनल हेराल्ड अखबार को हम सभी जानते हैं। कांग्रेस का ही कायम किया हुआ है। कांग्रेस वालों ने जिलों से पैसा इकट्ठा करके उसको बनाया। उसमें अब तक शीर्षक था "फ्रीडम इज़ इन पेरिल, डिफेन्ड इट विद ऑल योर माइट" अर्थात् "आजादी खतरे में है, इसकी शक्ति भर रक्षा करो" आज यह शीर्षक नहीं रह गया है।

यह कह रहा हूं। आपके लीडर ने इसको निकलवा दिया। क्यों निकलवा दिया, आज क्या मौका था इसको निकलवाने का ! कारण यह था कि पढ़े-लिखे लोग यह अर्थ न लगा लें कि "ओइंग टू दिस इमरजेंसी फ्रीडम इज़ इन पेरिल, डिफेन्ड इट विद ऑल योर माइट।" (आपातस्थिति के कारण आजादी खतरे में है, इसकी शक्ति भर रक्षा करो।) जो दिमाग-परिवर्तन की कोशिश की जा रही है, इस शीर्षक को हटवाना उसी का अंग है।

दो दिन तक अगर कोई अखबार श्रीमती जी का फोटो नहीं निकालेगा, तो उसका इलेक्ट्रिक कनेक्शन कट हो जायेगा। 'ईस्टर्न इकोनामिस्ट' मशहूर अखबार है। उसने एक तस्वीर महात्मा जी की निकाली। वह महात्मा जी के नोआखाली की यात्रा की तस्वीर है। वह सेंसर हो गई। सेंसर-बोर्ड ने उसको निकाल दिया, इसलिए कि इट इज़ लाइकली टू बी मिसइण्टरप्रेटेड (इसका अनुचित अर्थ लिया जा सकता है।) अर्थात् अब गांधी जी का अपने देश में कोई स्थान नहीं रह गया है और अपनी लकुटिया लेकर अब विदेश जा रहे हैं। परन्तु सम्पादक ने इसका विरोध किया और सुनते हैं कि उसने इस्तीफा दे दिया। इस प्रकार से देश का मस्तिष्क बनाया जा रहा है। अभी पायनियर में एक खबर निकली है कि वह कोई व्यक्तिगत बात नहीं है, मैं केवल देश के हित में कह रहा हूं। इंदिरा जी की माता जी पर केस चला सन् 1931 में और वह जजमेंट अब निकाल कर प्रदर्शित किया जा रहा है, स्टेट एक्जीबिशन (सरकारी प्रदर्शनी) में। वही परिवार, जो अब तक हुकूमत करता आया है, वही आगे भी करेगा। देश के लिए लाखों लोगों ने बलिदान किया। सन् 1931 की बात है। कितने लोग जेल गये होंगे। गरीब औरतें, गरीब आदमी और कितने देशभक्त, लेकिन नहीं, जो प्रदर्शित किया जाय, वह केवल एक लेडी का, प्रधानमंत्री की माता जी का। मैं जानना चाहता हूं और लोगों के नाम व काम का प्रदर्शन सरकारी प्रदर्शनी में क्यों नहीं किया गया ? ऐसे भी व्यक्ति होंगे, जिन्होंने कमला नेहरू से भी अधिक त्याग किया होगा। इस प्रदर्शनी में इंदिरा जी की माता जी के खिलाफ जो जजमेंट शायद सन् 1931 में हुआ था। वह भी रखा गया है, वह जजमेंट 12.3.76 के पायनियर में सारा ही दे दिया गया है, परन्तु इसका आखिरी वाक्य ही रेलेवेन्ट (प्रासंगिक) है—

'Right below this and bracing Kamla Nehru is another small item conveying Pt. Moti Lal Nehru's concern over the development and the arrangements made by him for looking after his young grand daughter, Indira.'

आप देखेंगे नेहरू जी के संदेश के पहले पंडित मोती लाल नेहरू का भी मैसेज है, ठीक उसके नीचे। ये सब एक्जीबिशन (प्रदर्शनी) में रखे गये है—अखबार के ये शब्द इस प्रकार हैं—

ठीक उसके नीचे और कमला नेहरू के चित्र से लगा हुआ एक और चित्र हैं, जिसमें पण्डित मोतीलाल नेहरू की अपनी अल्पायु पौत्री इंदिरा की देखभाल करने के लिए जो प्रबंध उन्होंने किये उनकी प्रगति के संबंध में चिन्ता व्यक्त की गई है। दादा को इतनी फिक्र थी और आप लोगों को भी फिक्र करनी चाहिये। हमारी प्रधानमंत्री जी का तप व तपस्या कितनी भारी है!

अध्यक्ष महोदय! मैं अब मुख्यमंत्री जी पर चार्ज लगाता हूं। क्यों चीफ मिनिस्टर संजय गांधी का स्वागत करने जा रहे हैं? संजय गांधी हमारी बहिन जी के लड़के हैं। 25-30 वर्ष की उम्र होगी। मैंने फोटो देखा उससे वह ऐसे लगते हैं। मालूम नहीं कैसे वह एकदम आसमान में पहुंच गये। इतना ऊपर पहुंच गये जैसे कि प्रधानमंत्री के बाद वही दूसरे नेता हों। कितनी खबरें उनके बारे में निकलती हैं, उनकी कोई सीमा नहीं है। क्यों? यह सच्ची डेमोक्रेसी है कि प्रेस पर इतना जबर्दस्त नियंत्रण हो। क्या प्रेस खुश हो कर ये खबरे देता है? ऐसा नहीं है, उसे छापना पड़ता है, आर्डर उसे दिया जाता है। संजय हो गये यूथ-कांग्रेस के नेता। यूथ-कांग्रेस की मेम्बरशिप का कोई बाकायदा रजिस्टर नहीं होगा। रोज यह व्याख्यान देते फिरते हैं। वरिष्ठ कांग्रेसमैनों को डांटते फिरते हैं। यू० पी० के विधायकों को चण्डीगढ़ में कांग्रेस मीटिंग में बुरी तरह डाटा कि क्यों फिरते हो इधर-उधर, गांवों में जाकर काम करो। गांव के बड़े एक्सपर्ट (विशेषज्ञ) हो गये हैं रातों रात। सबको उपदेश देते फिरते हैं, भले ही खुद गांव में कभी न गये हों। जो आदमी मिलता है, उससे कहा जाता है कि गांव जाइये। गांव जाइये और वह फटकार भी लगाते हैं कि बातें कम कार्य ज्यादा करो। यू० पी० वालों से कहा कि मिनिस्ट्री बनती रहेगी, गांव में जाकर काम करो। उस वक्त तक नारायणदत्त तिवारी की नियुक्ति नहीं हुई थी, स्वतन्त्र भारत में दूसरे पृष्ठ पर खबर छपी। मुख्यमंत्री नारायण दत्त तिवारी द्वारा संजय गांधी के आगमन पर तथा स्वागत के बारे में यह खबर छपी थी। संजय जी आ रहे हैं और 28 तारीख को फलां-फलां प्रोग्राम होगा। मुख्यमंत्री नारायण दत्त तिवारी ने यह वक्तव्य दिया, जबकि यह काम चीफ मिनिस्टर का नहीं है। आप किसी से कह देते अथवा किसी कांग्रेसमैन से कहला देते।

लेकिन हमारे यू० पी० का चीफ मिनिस्टर एक नौजवान के लिए जिसकी कोई कानूनी या सरकारी हैसियत नहीं है, उसका विज्ञापन भोंपू बजाता फिरे कि वह आ रहा है, तो कहां तक उचित है ? क्या मतलब है इसका ? एक 25-30 वर्ष का आदमी बजट पर व्याख्यान दे जो कि इतनी गुप्त चीज है। जवान और बूढ़े सभी कांग्रेस मैनों को उपदेश दे। बल्कि मैंने यहां तक सुना है कि प्रधानमंत्री जी बड़े-बड़े कांग्रेसियों से, जो उनसे मिलने जाता है, कह देती हैं कि पहले संजय गांधी से बात कर लो। चीफ मिनिस्टरों तक से यह कह जाता है। यह सम्पूर्ण सार्वजनिक जीवन की बेइज्जती है। तिवारी जी मैं आप से पूछना चाहता हूं कि संजय और आपका क्या मुकाबला ? यह क्या बात हुई, कोई गैरत है या नहीं ? आप लोगों को कोई गैरत हो, तो डूब मरना चाहिए। मुझे मालूम हुआ कि मिनिस्टर नारे के ऊपर नारे लगाते रहते हैं। यह भी मैंने सुना है कि यह नारा लगाया जाता है, "आज की नेता इंदिरा गांधी, युवकों का नेता संजय गांधी और कल का नेता राहुल गांधी।" मैंने यह भी सुना है कि गवर्नमेंट की ओर से एक आर्डर दिया गया है कि 27 तारीख को जब संजय गांधी आ रहे हैं, तो उस दिन हवाई अड्डे से गवर्नमेंट हाउस तक स्कूल के बच्चों और उनकी अध्यापिकाओं की 15 कि० मी० तक लाईन उनके स्वागत के लिए बनायी जायेगी और बच्चे खड़े कर दिये जायेंगे। क्यों, आपने आर्डर क्यों दिया और अफसरों ने दिया है, तो उनसे पूछिये कि क्यों दिया ? क्या सीखेंगे बच्चे संजय साहब से ? मैं नहीं कहना चाहता। संजय से तिवारी जी, आप क्या सीखेंगे ? मीलों तक बच्चों को खड़ा किया जाये, वे क्या सीखेंगे उनसे ? बच्चों को उस व्यक्ति के स्वागत के लिए खड़ा किया जाता है, जिनसे कुछ सीख मिले। ट्रांसपोर्ट अफसर को हुक्म हुआ कि वह 5-5 हजार आदमियों को लाये। आर० टी० ओ० को आर्डर हुआ कि पैसे का इन्तजाम उन्हें करना है। इन्तजाम करके वे देंगे। बहुगुणा जी ने भी यही रिवाज़ चलाया था। बादशाह अकबर जैसा। आपने भी दिल्ली से आने पर वैसे ही कोशिश की और अब संजय का जुलूस आ रहा है। आर० टी० ओ० पांच-पांच हजार रुपया और आदमी लायेंगे। मैं पूछना चाहता हूं, क्यों सब गवर्नमेंट की तरफ से खर्च होगा ?

बीस-सूत्री प्रोग्राम की उपलब्धियों का एक जिक्र चल रहा है। यह कौन सी उपलब्धि है साहब ? दुनिया में जो किसी भी योग्य गवर्नमेंट के मातहत कार्य होने चाहिए उसे आप इमरजेंसी (आपातस्थिति) की उपलब्धियां कहते हैं। इस प्रोग्राम में सिंचाई बढ़ाने का सूत्र भी है। जिसे हम भी करने को कहते थे और अन्य लोग भी कहते हैं, कहते थे।

एक बात और आप कहते हैं कि मीसा में तस्करों के खिलाफ सख्त कार्यवाही हो रही है, तो यह इंदिरा जी ने कौन सी नयी बात कर दी, जिसका आप ढोल पीट

रहे हैं। यह कानून पहले से बना हुआ था। सन् 1971 में कोल कमीशन ने तस्करों के बारे में रिपोर्ट दी थी कि बहुत जोरों से यह अपराध बढ़ रहा है, तो उस वक्त क्यों नहीं कार्यवाही की गयी ? लेकिन उस वक्त इलेक्शन होने वाले थे, तस्करों से रुपया लेना था, इसलिये कुछ नहीं किया गया और जब देखा कि जनता की नाराजगी बढ़ रही है, तो आपने यह कानून बनाया। यह बीस प्वाइन्ट प्रोग्राम क्या हो गया है, कोई जैसे नयी गीता लिख दी हो, तो क्या इन सब बातों के लिए इमरजेंसी की जरूरत थी ? अखबारों में निकलता है कि जब से इमरजेंसी लागू हुई, तो रेलों में बिना टिकट यात्रा कम हो गयी है। टिकट लेकर पहले लोग नहीं चलते थे और जब से इमरजेंसी लागू हुई, लेने लगे हैं। तो साहब ! जैसे पहले से कुछ सम्वत् चलते आये हैं, वैसे ही आप भी अब 26 जून ने इंदिरा सम्वत् चलाइये। बिना टिकट यात्रा के संबंध में एक खबर सुनिये—

"P. T. I. 2 August—More than seven thousand persons have been apprehended for travelling without ticket in Ratlam Division of Western Railway Service after the promulgation of emergency."

(पी० टी० आई० 2 अगस्त—आपातस्थिति की घोषणा के बाद से पश्चिम रेलवे रतलाम डिवीजन में सात हजार से अधिक व्यक्ति बिना टिकट यात्रा के जुर्म में गिरफ्तार किये गये हैं।)

रतलाम डिवीजन में सात हजार व्यक्ति बिना टिकट यात्रा करते हुए पकड़े गये, तो पहले क्यों नहीं पकड़े जाते थे ? क्या कोई कानून नहीं था ? इसी तरह से टैक्स क्लेक्शन (कर-वसूली) के बारे में है। 2 अगस्त की खबर है—

"The Union Minister of State for Finance Mr. Pranab Mukherji today said, there was an unprecedented buoyancy in tax realisation during the last 40 days.

In a brief interview to the Bombay television he said, "Collection of excise revenue, direct taxes and other taxes improved considerably during the period of emergency, which ended the sluggishness from which it had been suffering."

"केन्द्र के वित्त राज्य मंत्री श्री प्रणव मुखर्जी ने आज कहा कि गत चालीस दिनों में करों की जितनी वसूली हुई है, वह अभूतपूर्व उल्लास का विषय है।

बम्बई टेलीविजन के एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा कि "आपातस्थिति के दौरान आबकारी की आमदनी और प्रत्यक्ष कर तथा अन्य करों की वसूली में पर्याप्त उन्नति हुई है। इस आपत स्थिति ने हमें पीड़ित करने वाले आलस्य को समाप्त कर दिया है।"

यह है आपका प्रोपेगैण्डा। इससे किसी आफिसर की कुशलता नहीं बढ़ेगी,

इससे बिना टिकट यात्रा नहीं रुकेगी। यह तो जैसा आपका चरित्र होगा, वैसा ही काम कर्मचारी करेगा। इस इमरजेंसी से आप कुछ लोगों को जेल भेज देंगे। मानो हमने अर्थात् विरोध पक्ष ने, आदेश दिया था कि बिना टिकट वालों को न पकड़ो, हमने कहा था स्मगलिंग चलने दो, हमने यह कहा था कि स्थित क्षेत्र में न बढ़ाना, हमने कहा था कि लड़कों को लूटने दो, चाकू-छूरे चलाने दो और उन्हें नकल करने दो ? लोगों को गुमराह करने के लिए देखो—कितना फायदा हुआ है, इन कांग्रेस के विरोधियों को बन्द करने से, इसलिए इनको जेल में रहने दो, जेल में रहना इनका ठीक है, यह सब प्रचार हो रहा है।

एक 'शिशु-मन्दिर' की बात है। शिशु-मन्दिर एक छोटी सी संस्था है, जो जनसंघ के लोगों के हाथ में थी। आर० एस० एस० से उसका कोई मतलब नहीं था, उसको आपने जब्त कर लिया। उन लोगों ने हाईकोर्ट में एक दावा दायर कर दिया। यह रिपोर्ट गवर्नमेंट के खिलाफ थी। चूंकि फैसला होने वाला था, इसलिए आर्डिनेंस (अध्यादेश) द्वारा उसे जब्त कर लिया। यह कोर्ट का अपमान है, बहुत बड़ा अपमान है। जब वह मीसा या किसी में नहीं आये, तो आर्डिनेंस लागू करके उनका हरण कर लिया। उसके चार सौ अध्यापक हैं : उनकी तनख्वाह अब नहीं मिल रही है। आप सोचें, उन बेचारों का क्या होगा ? पूरे इस मीसा में कितने ही ऐसे हैं, जिनको उनकी तनख्वाहें नहीं मिल रही हैं। मैं चाहता हूं कि माननीय मुख्यमंत्री जी उनको नोट कर लें। कानून में मीसा के बन्दी के लिए प्राविधान है। लोगों के बच्चे भूखों मर रहे हैं, उनके घर पर कोई जीविका कमाने वाला नहीं है, किन्तु ऐसे तमाम लोगों को कानून होते हुए भी कोई एलाउन्स नहीं दिया जा रहा है। आप जुर्म बताते नहीं हैं, हाईकोर्ट का अधिकार ले लिया तानाशाह की तरह से और लोगों को जेलों में ही नहीं डाल दिया, किन्तु उनके लिए जो प्रोवीजन (प्राविधान) है, एलाउन्स का, उसको भी नहीं दिया, तो उन्हें जेल में नहीं रखा जा सकता है। आप विचार कर लीजिए, इस पर भी रिपोर्ट होने वाली है। जेल में नहीं रखा जा सकता है, जो कारागार कानून के अन्दर आता है, अर्थात बन्दी रखा जा सकता है, जिस पर कोई आरोप हो या जिसकी अदालत से सजा हो गयी हो, उसको ही आप जेल में रख सकते हैं। आप उनको अन्दर या बाहर, मुझे कुछ नहीं कहना है, लेकिन उनके बच्चों का प्रबंध करना आपका फर्ज है, उस पर आप पूरा ध्यान दें।

एक बात और। डी० आई० आर० में कुछ एम० एल० ए० बन्द हैं, उनको विधान परिषद् व राज्य सभा के चुनावों में वोट देने का अधिकार होना चाहिए। जो इलेक्शन कमीशन के यहां से आया है, उसमें केवल विरुद्ध शब्द लिखा हुआ है। मेरी समझ में नहीं आता कि लोग डी० आई० आर० में बन्द है, उनको राइट आफ वोट क्यों नहीं है ? मेरे दो चार दोस्तों से आपकी बातचीत हुई थी। आपने कहा कि यह

लोग जमानत के लिए प्रार्थना पत्र दे दें। मैंने कहा था कि होम सेक्रेटरी (गृह सचिव) से कह कर डी० एम० से कहना होगा कि यदि जमानत देना चाहें, तो गवर्नमेंट की तरफ से उसका विरोध न किया जाय। अब मसलन मेरे पास सुबह टेलीफोन आया बनारस से कि दो हमारे साथी थे, उसमें से एक की तो जमानत मंजूर हो गयी, परन्तु दूसरे नौजवान थे शतरुद्ध प्रकाश, उनकी जमानत नहीं हुई। उनको भी आप दिलवा दीजिए, चाहे कन्डीशनल (सशर्त) दिलवा दें। वह वोट देकर फिर चले जायेंगे।

एक बात और है, जिसको कह कर खत्म करता हूं। पं० नेहरू सन् 1936 में यहां आये। सन् 1936 में कांग्रेस हुई थी, तो उस वक्त उन्होंने जो बात कहीं थी, वह इस मौके के लिए बहुत उपयुक्त है; क्योंकि पंडित नेहरू इत्तिफाक से हमारी प्रधान मंत्री के पिता जी थे। वह अनेक बार कह चुकी हैं कि "हमारे पिता जी तो साधु थे, राजनीतिज्ञ तो मैं हूं" और यह भी कहती हैं कि "पालिटिक्स नोज नो मोरेलिटी।" राजनीति में कोई नैतिकता नहीं होती। अच्छा देखिए पं० नेहरू ने क्या कहा ? उस सिलसिले में उनका व्याख्यान है, ऑल इण्डिया कांग्रेस सेशन में—

"Comrades, being interested in psychology, I have watched the process of moral and intellectual decay and realised even more than I did previously, how autocratic power corrupts, degrades and vulgarises."

"साथियो ! मनोविज्ञान में दिलचस्पी होने के कारण मैंने नैतिक और बौद्धिक पतन की प्रक्रिया को गौर से देखा है और पहले से अधिक महसूस किया है कि किस प्रकार निरंकुश सत्ता किसी को भ्रष्ट करती है, पतित करती है और असभ्य बनाती है।" वे आगे कहते हैं—

"A government that has to rely on the Criminal Law Amendment Act and similar laws that suppress the press and literature, that bans hundreds of organisations, that keeps people in prisons without trial and that does so many things that are happening in India today, is a government that has ceased to have even a shadow of justification for its existence."

"जो सरकार फ़ौजदारी कानून और उसी प्रकार के अन्य कानूनों पर निर्भर करती है, प्रेस तथा साहित्य का दमन करती है, बिना मुकदमा चलाये लोगों को जेल में बन्द करती है तथा इसी प्रकार की अन्य कार्यवाहियां करती है, जैसी कि आज भारतवर्ष में हो रही हैं, तो ऐसी सरकार को सत्ता में रहने का लेशमात्र भी अधिकार नहीं रह जाता है।"

यह उस समय समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुआ था, किन्तु तत्कालीन प्रशासन

ने किसी व्यक्ति या समाचार-पत्र के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की। किन्तु आज मेरी बात को प्रकाशित करने की किसी की हिम्मत नहीं है। मैंने एक किताब लिखी इसी बीच में, पहले से लिख रहा था। अब मैं उसको प्रकाशित करने की सोच रहा हूं। परन्तु मुझे मालूम हुआ है कि किताबों पर भी सेंसर है। तो पंडित जी कहते हैं कि जो सरकार प्रेस को दबाती, जो अनेक संगठनों पर पाबन्दी लगाती है, अर्थात् जैसा यहां हो गया है, जो जेलखाने में आदमियों को बिना मुकदमा चलाये हुए रखती है, इस प्रकार की बहुत सी बातें जो इस समय भारत में हो रही हैं। हमारी चीजें ऐसी हो रही हैं, जो इनको नहीं मालूम हैं और न किसी को मालूम हैं, ऐसी सरकार को कोई हक नहीं है एक मिनट भी रहने का।

यह पंडित जी ने सन् 1936 में कहा था। आज के हालात में यह ठीक उतरता है। एक बात मैं अपने दोस्तों से और कहूंगा कि अपना दिल टटोलें, देश की बात सोचें। मेरी बात गलत हो सकती है और मेरे से कोई गलत शब्द निकल गया हो तो माफी चाहता हूं। इन सब बातों को भूल जायें। जो देश की स्थिति है, उसको निष्पक्ष होकर देखें। जाने-अनजाने में भूल हो गयी हो, उससे कैसे देश को निकालें, या आप निकालें।

मुझे इस सिलसिले में एक महत्त्वपूर्ण वाकिया याद आता है, महाभारत का। (शासन पक्ष की ओर से हंसन की आवाजें आयीं) इसमें हंसने की क्या जरूरत है? दुर्योधन की बात कहने जा रहा हूं। श्रीकृष्ण की नहीं। दुर्योधन से कहा गया कि अगर घोरतम युद्ध हुआ, जिसके कारण देश बरबाद हो गया, तो यह तुम्हारी गलती है। दुर्योधन ने कहा कि मैं जानता हूं कि अधर्म क्या है, मगर मैं उससे अपने को दूर नहीं रख सका। अपने आप को बचा नहीं सका। मैं जानता हूं कि धर्म क्या है, लेकिन मैं उस पर आचरण नहीं कर पाया। मानों किसी देव ने मेरे हृदय को ग्रस लिया हो। दोस्तों, यही हाल आपका है। यह देव आपका अपना स्वार्थ है, अपना हित है, जो हर मनुष्य का होता है। दुनिया में कोई व्यक्ति नहीं है, जिसका स्वार्थ न हो, बिना उसके संसार का व्यवहार नहीं चलेगा। लेकिन जब अपने हित का देश के हित से टकराव होता हो, उससे देश को खतरा हो, तो कम से कम उन लोगों को, जो देश की सेवा का व्रत ले चुके हों, अपना स्वार्थ छोड़ देना चाहिए और देश की बात करनी चाहिए। सोचो और विचार करो। कोई मनुष्य अमर नहीं है। देश अमर है।

इन शब्दों के साथ, अध्यक्ष महोदय! मैंने जो संशोधन पेश किया है, मैं चाहता हूं कि सदन उसे स्वीकार करे और जो मुझसे गलतियां हो गयी हों, तो मैं उधर के लोगों से माफी चाहता हूं। (तुमुल हर्षध्वनि)।

राजनीतिक भ्रष्टाचार

—चौधरी चरण सिंह

राजनीतिक भ्रष्टाचार के कई रूप हैं। नगद धन हासिल करने के अलावा उद्योग लगाने, आयात-निर्यात व आर्थिक-लाभ के अन्य उद्देश्यों के लिए लाइसेंस पाने के इच्छुक व्यापारिक और औद्योगिक प्रतिष्ठानों में मंत्रियों के संबंधियों की नियुक्तियों के जरिये भी भ्रष्टाचार फैल रहा है।

भ्रष्टाचार का एक और रूप सार्वजनिक परियोजनाओं व सुविधाओं को इस तरह आवंटित करने में पद का दुरुपयोग है, जिससे उस क्षेत्र या वर्ग-विशेष को लाभ पहुंचे, जिसे मंत्रियों का समर्थन है। समुदाय व समाज-कल्याण परियोजनाओं और सिंचाई की सुविधाओं व सड़कें बनाने या सरकारी उद्योग कायम करने में राजनीतिक भ्रष्टाचार को बढ़ावा दिया गया है। कर्ज और आर्थिक मदद ज्यादातर राजनीतिक आधार पर तय की जाती है, जिस कारण न सिर्फ आर्थिक मदद बेकार जाती है, कर्ज की बकाया रकम भी बढ़ती जाती है।

सामान्य नियम और कानून लागू न करना भी भ्रष्टाचार है। जो व्यक्ति किसी दल को या चुनाव के लिए चन्दा देते हैं, वे आयकर न देने के कारण हुए जुर्माने से बच जाते हैं। ग्रामीण विकास सरकारी और स्वशासी संस्थाओं को आर्थिक मदद स्वार्थ के कारण निजी फैसले पर की जाती है।

चुनाव के लिए धन

राजनीतिक शक्ति पाने के लिए सत्ता के भूखे राजनीतिक नेता को हर पांच साल में एक बार चुनाव जीतना पड़ता है, जिसमें काफी धन खर्च होता है। इसलिए वह बेईमान व्यापारियों से सम्बन्ध जोड़ता है। राजनीतिक नेता को धन देने के लिए व्यापारी काला-बाज़ारी करेगा और उस व्यापारी की रक्षा राजनीतिक नेता करेगा, जिससे उसे धन मिलता रहे। इस तरह भ्रष्ट व्यापारी या उद्योगपति और भ्रष्ट राजनीतिक नेता के बीच संबंध कायम हो जाता है और भ्रष्टाचार बढ़ता जाता है।

स्टैनली कारले ने 'वाशिंगटन पोस्ट' में लिखा—"व्यापारियों को लाइसेंसों के लिये धन देना पड़ता है। सरकारी एजेंसियों के निदेशक किसी तरह धन में हेरा-फेरी कर देते हैं। तटकर निरीक्षकों की तस्करों से मिली-भगत रहती है। कोई व्यापारी

बिना धन दिये अपना काम कराने की उम्मीद नहीं रख सकता, क्योंकि वह ठीक तरह नहीं जानता कि उसे कितनी अदायगी करनी है और किसे करनी है।"

भ्रष्टाचार के मामले में भारत बदनाम है। एक अमेरिकी पत्रिका ने लिखा कि भारत में अब बच्चे को विद्यालय में भर्ती करने, दूध का कार्ड पाने, यहां तक कि रेल का टिकट पाने के लिए भी घूस देनी पड़ती है।

भ्रष्टाचार बढ़ने से प्रशासन पर जनता का विश्वास उठ गया और ईमानदारी की कोई मिसाल न मिलने से वह निराश हो गयी। उसके दिल में भ्रष्ट अधिकारियों की इज्ज़त खत्म हो गयी, जो अपनी या अपने रिश्तेदारों की भलाई करने में जुटे थे। राजनीतिक नेताओं के भाषणों का उस पर कोई असर नहीं पड़ता।

चरित्रहीनता

देश में राजनीतिक जीवन में चरित्र और निष्ठा की कमी आ गयी। सत्ता हथियाने या एक बार सत्ता पाकर उसे कायम रखने की लालसा ने राजनीतिक ढांचा खत्म कर दिया, जिसे महात्मा गांधी के नेतृत्व में नेताओं ने विकसित किया था।

एक व्यक्ति के अनुसार, जिसने छठे दशक में भारत का सर्वेक्षण किया, शायद ही कोई मंत्री ऐसा था, जिसने अपना कम से कम एक रिश्तेदार सरकारी या निजी प्रतिष्ठान में नौकरी पर न रखाया हो, जो वहां रहने का हकदार नहीं था। दस बड़ी फर्मों के उच्च अधिकारियों का विश्लेषण करने से पता चला कि उनमें करीब 20 फीसदी संसद सदस्यों, 14 फीसदी सरकार के सचिवों और 25 फीसदी अन्य महत्त्वपूर्ण सरकारी अधिकारियों के रिश्तेदार थे। निजी प्रतिष्ठान, अधिकारियों के कृपा पात्र बनने का, यह सबसे अच्छा साधन मानते थे।

पश्चिमी देशों में सत्ता में रहते निजी लाभ उठाने का लालच आम तौर पर खत्म-सा हो गया है। कोई मंत्री जरा भी नैतिकता भंग करे, तो उसकी तुरन्त आलोचना की जाती है और सजा दी जाती है। अमेरिका में 'वाटरगेट कांड' ने समूचे अमेरिकी जनमत को झकझोर दिया।

चरित्र में कमी क्यों है ? दिशा-विहीनता और पतन क्यों है ? स्वार्थ की शिक्षा कहां से मिलती है ? भ्रष्ट व्यक्ति शर्मिन्दा क्यों नहीं होता ?

भ्रष्टाचार खत्म करने के लिए क्रांति चाहिए, जो उत्पादन के साधनों या इन्सानों के आर्थिक संबंधों में बदलाव कर लायी जा सकती है।

मेरा पक्का विश्वास है कि सबसे पहले भ्रष्ट मंत्रियों और अधिकारियों को सजा दी जानी चाहिए। व्यापारिक क्षेत्र में बड़ी-बड़ी रिश्वतें देने वालों को भी सजा मिलनी चाहिए।

भारत के गृहमंत्री चौधरी चरण सिंह से एक साक्षात्कार

('परंतप' से साभार)

ऐसा तो कभी नहीं सोचा था कि मैं कभी गृहमंत्री बनूंगा। राजसत्ता केन्द्र में अपने हाथ में आये, यह कुछ धुंधला-सा विचार, कल्पना या उद्देश्य, कुछ भी कह लीजिए, मेरे मन में था। लेकिन गृहमंत्री की बात तो मैंने सोची नहीं थी। न मेरी इस संबंध में किसी से कोई वार्ता ही हुई थी।

पटेल का आदर्श

प्रश्न—गृहमंत्री के रूप में आपका आदर्श राजपुरुष कौन है और इस संबंध में आपकी क्या मान्यतायें हैं?

सरदार पटेल एक सफल गृहमंत्री थे। उनकी समूची नीति ने, उनकी प्रशासनिक क्षमता ने, विचारों की उनकी दृढ़ता ने, उनकी साफगोई—स्पष्टवादिता ने मुझे प्रभावित किया है। आजादी के बाद जिस तरह से देशी रियासतों का उन्होंने विलीनीकरण किया और सारे देश के मानचित्र को अखण्डता और सार्वभौमिकता प्रदान की, वह कोई साधारण काम नहीं था। एक युग के काम को दो-तीन वर्ष में ही निपटाकर वे चले गये। यह हमारे देश का दुर्भाग्य था कि वे अधिक दिनों तक देश को नेतृत्व नहीं दे सके। सफल प्रशासन के लिए आवश्यक है कि स्पष्ट नीति हो, दृढ़ता से उसका कार्यान्वयन करते हों, जो लोग कार्यान्वयन करते हैं उनका आचरण संदेह-रहित हो, वे किसी प्रलोभन और दबाव से समझौता न करने वाले हों।

दयानन्द और गांधी

प्रश्न—व्यक्तिगत जीवन में आपका आदर्श-पुरुष कौन रहा है, जिसने आपको प्रभावित किया हो?

यों देखें तो गुजरात मेरे लिए पुण्य-भूमि है। जहाँ तक सामाजिक और धार्मिक प्रभाव का ताल्लुक है, वह तो स्वामी दयानन्द का ही रहा, किन्तु राजनीतिक और आर्थिक प्रश्नों पर मैंने गांधी जी को ही अपना आदर्श माना है और उन्हीं की नीतियों और विचारों ने मुझे प्रभावित किया है।

स्थिति नियन्त्रण से बाहर नहीं

प्रश्न—क्या इमरजेंसी के बाद शान्ति और व्यवस्था की स्थिति ज्यादा बिगड़ी है ?

नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है कि स्थिति नियन्त्रण से बाहर हो। इतना जरूर है, इमरजेंसी के कारण सारा देश एक घुटन महसूस कर रहा था। जबान पर ताले थे। अखबार वही छाप सकते थे, जो सेंसर के बाद छापने को दिया जाता था। प्रदर्शन का कोई सवाल ही नहीं था। अब जब सब तरह की आजादी लौट आयी है, तो स्प्रिंग की तरह, कमानी की तरह प्रतिक्रिया हो रही है, इसलिए चारों ओर कुछ न कुछ हलचल है। मैं मानता हूं कि कुछ अवांछनीय तत्त्व भी उभर आये हैं, किन्तु उनसे निपटने के लिए हमारे उपलब्ध कानून बहुत ही सक्षम हैं।

प्रश्न—लगता है कि गांवों में असुरक्षा की भावना कुछ अधिक दिखायी पड़ती है ?

ऐसा तो नहीं है। गांव में कभी-कभी यह हो जाता है कि जैसे परिस्थितिवश कोई व्यक्ति डाकू बन जाये और डाका डालना शुरू कर दे। वह आतंक तो कुछ दिनों के लिए पैदा कर ही देता है, लेकिन वह जैसे ही पकड़ा जाता है, शान्ति स्थापित हो जाती है। लेकिन यह कोई असाधारण बात है, ऐसा नहीं है। समाज में अच्छाइयां, बुराइयां दोनों ही हैं। प्रशासन की उपयोगिता इसी में होती है कि बुराइयों को दबाया जाये और अच्छाईयों को पनपाया जाये।

प्रश्न—प्रशासनिक सुधार के लिए गृहमंत्री बनने के बाद आपने कुछ महत्त्व-पूर्ण कदम उठाये हैं, उन पर कुछ प्रकाश डालें ?

सबसे बड़ा कदम तो यह है कि कमीशन बैठाये हैं। उन कमीशनों की फाइंडिंग आने पर आगे कार्यवाही की जायेगी। देवराज अर्स के खिलाफ फाइंडिंग आ गयी है और दूसरे कमीशनों का काम चल रहा है।

फिर हमने एक अखिल भारतीय पुलिस-आयोग बैठाया है। सन् 1902 के बाद, 75 वर्ष के बाद, ऐसा कमीशन बैठा है, जिसमें पुलिस की समस्याओं पर विचार होगा। छोटी-मोटी तो बहुत सी चीजें की हैं प्रशासन में। जैसे आई० ए० एस० और पी० सी० एस० में एक चौथायी ही प्रोमोशन पर ऊपर जाते थे, हमने एक तिहायी कर दिया है।

शाह-कमीशन क्यों ?

प्रश्न— आप यह बतलायें कि जांच के लिए शाह-कमीशन को ही क्यों उपयुक्त समझा गया ? युद्ध-अपराधियों की जांच जैसी पद्धति क्यों नहीं अपनायी गयी ?

हमारे संविधान में उसके लिए कोई कानून नहीं था। वह तो लड़ाई में

जीते हुए लोग अपना निजी एक मार्शल लॉ की तरह कानून बना लेते हैं, किन्तु प्रजातान्त्रिक प्रणाली में संविधान ही सबसे बड़ा होता है, उसी के मुताबिक चलना था। हमारे संविधान में इस तरह का कोई प्राविधान नहीं है। दूसरी बात यह है कि "सबवर्शन आफ कान्स्टीट्यूशन इज़ नाट एन ऑफेन्स" संविधान में तोड़-मरोड़ स्वयम् अपराध की गिनती में नहीं आता। हां, ऐसा कुछ देशों में माना जाता है और एक देश ऐसा भी है, जहां इस तरह का मुकदमा चलाकर प्रधानमन्त्री को फांसी की सजा भी दी जा चुकी है। हमारे देश के संविधान में ऐसा नहीं है और न हम उस रास्ते पर जा सकते हैं।

प्रश्न—लोगों की धारणा है कि गृह-मन्त्रालय की असावधानी के कारण श्रीमती गांधी को साफ छूट-निकलने का मौका मिला है ?

लोग ऐसा कह सकते हैं। गृहमन्त्री होने के नाते जिम्मेदारी भी मेरी ही ठहरायी जा सकती है। लेकिन मैं पूछता हूं कि क्या उन्हें गिरफ्तार करना गलत था ? क्या सारा देश यह नहीं चाहता था कि अपराधी को सजा दी जाये ? लेकिन गलती तो हमसे यह हुई कि वे छोड़ दी गयीं। सिर्फ एक यही गलती मेरे नाम के साथ जोड़ी जायेगी। शायद फौजदारी कानून के इतिहास में यह एक अनोखी घटना थी, जिस ढंग से श्रीमती गांधी को रिहा किया गया।

प्रश्न—आप सफल नहीं हो पाये, एक ऐसा अवसर आप चूक गये, जिसमें श्रीमती गांधी के राजनीतिक-जीवन का पटाक्षेप हो सकता था ?

सवाल श्रीमती गांधी के राजनीतिक-जीवन को समाप्त करने का नहीं था—बल्कि एक ऐसी परिपाटी डालने का था, जिसके अनुसार सभी को सबक मिल सके कि सार्वजनिक जीवन में पद और सत्ता का दुरुपयोग करना एक अपराध है और चाहे जितनी बड़ी हस्ती हो, उसे भी अपराध की सजा दी जा सकती है। श्रीमती गांधी के खिलाफ ठोस सबूत थे। ये प्रमाण अकाट्य हैं। सी० बी० आई० ने जांच करके उन्हें गिरफ्तार किया, लेकिन मजिस्ट्रेट ने छोड़ दिया।

प्रश्न—अच्छा तो अब आपका क्या कहना है ? श्रीमती गांधी एक हीरो बनकर सारे देश में घूम रही हैं। उनके राजनीतिक-भविष्य के बारे में आपका क्या ख्याल है ?

श्रीमती गांधी उसी जगह हैं, जहां वे पिछले वर्ष चुनाव के समय थीं। उनके बारे में जनता की मानसिक-धारणा में कोई फर्क नहीं आया। गिरफ्तारी और रिहाई के बाद मैं दिल्ली से ट्रेन द्वारा लखनऊ गया था। हर स्टेशन पर हजारों लोग इकट्ठा होकर यही नारे लगा रहे थे कि "क्यों रिहा किया गया उन्हें ?" साधारण लोग यही कहते पाये गये— "उसे गिरफ्तार करने के लिए दिलेरी चाहिए। कानून उससे दुबारा निपटेगा, मगर यही शख्स उसे दुबारा पकड़ेगा।"

प्रश्न—अब तो इन्दिरा जी आपके और आपकी पार्टी के खिलाफ धुआंधार प्रचार कर रही हैं ?

बस यही तो हमारी सभ्यता और संस्कृति में औरत होने का अनुचित लाभ है। हम पुरुष इस मामले में अधिक सहनशील हैं। वे तो ड्रामा करने की आदी हैं। मैं उनसे दो ही मामलों में हार खा जाता हूं—एक तो उनकी ड्रामा-कला से ; आंसू बहाने से, चिल्लाने से कि "चरण सिंह तो मेरे खून का प्यासा है" और दूसरी यह कि वे कभी सच नहीं बोलती। मैं पहले भी यह कहा करता था कि "किसी दूसरे देश का प्रधानमंत्री कभी झूठ नहीं बोलता और हमारी प्रधानमंत्री कभी सच नहीं बोलती।" आखिर हिटलर का बोलबाला इसी आधार पर ही तो था। एक झूठ को सैकड़ों बार जोर-जोर से बोलते रहने पर वह एक दिन सच मान लिया जाता है। लेकिन मुझे अपने देश की जनता पर पूरा यकीन है। आखिर जनता ने ही तो इतनी बड़ी क्रान्ति अभी की है ; वह उन्हें कभी माफ नहीं करेगी, न कभी बर्दाश्त ही करेगी।

प्रश्न—क्या इन्दिरा गांधी पर संविधान की हत्या करने के अभियोग पर 'ओपन इम्पीचमेन्ट' की कार्यवाही भी नहीं की जा सकती थी ?

जी नहीं, प्रधानमन्त्री का 'ओपन इम्पीचमेन्ट' कैसे हो सकता है ? उसे तो संसद जब चाहे निकाल सकती है। इम्पीचमेन्ट होता है राष्ट्रपति का, सुप्रीमकोर्ट के जजों का। अमरीकी संविधान में जैसे राष्ट्रपति का 'इम्पीचमेन्ट' हो सकता है। लेकिन यहां तो भूतपूर्व प्रधानमंत्री ने जो कुछ उल्टा-सीधा किया, उसको संसद से पास करा लिया और मोहर लगवा ली।

प्रश्न—पद और ख्याति का घृणित दुरुपयोग करके संजय गांधी को आगे बढ़ाकर क्या इन्दिरा जी ने देश के साथ विश्वासघात नहीं किया ?

किया तो है, लेकिन यह सिद्ध करने के लिए कि यह अपराध हुआ है, कोई संवैधानिक प्रक्रिया तो अपनानी ही पड़ेगी। जैसे शाह-कमीशन एक स्वतन्त्र कमीशन है और संजय गांधी के मामले में 'किस्सा-कुर्सी-का' और मारुति के मामले में जांच का काम हो ही रहा है। इन जांच-आयोगों का काम जैसे ही समाप्त होगा, वैसे ही उनकी रिपोर्टों पर सरकार विचार करेगी और आगे की कार्यवाही भी उसी पर निर्भर होगी। हमारे यहां के कानून का आधार यह है कि चाहे सौ गुनहगार छूट जायें, मगर किसी बेगुनाह को सजा न मिले।

भ्रष्टाचार

प्रश्न—देश में व्याप्त भ्रष्टाचार के विषय में आपके क्या विचार हैं ?

मेरा पक्का विश्वास है कि बिना भ्रष्टाचार मिटे कोई भी शासन सफल नहीं हो सकता है और न कोई मुल्क ही ऊंचा उठ सकता है। भ्रष्टाचार हमेशा नीचे की ओर फैलता है। इसे नेस्तनाबूद करने के लिए मूलरूप से वहीं आघात करना पड़ेगा,

जहां से यह शुरू होता है। तप, बलिदान और जनसेवा के संस्कार हमारे देश में ऊपर से ही चलकर फिर नीचे सारे समाज में फैलते आये हैं। ठीक यही बात भ्रष्टाचार के सम्बन्ध में लागू होती है। यदि समाज के नेता, सरकार के बड़े अफसर भ्रष्टाचारी आचरण छोड़ दें या जब पकड़े जायें तो कड़ी से कड़ी सजा मिले, तो उसका प्रभाव सारे देश और समाज पर पड़ेगा। अजीब हालत हो गयी है—यहां ईमानदार आदमियों को उंगली पर गिनाया जाता है—कहा जाता है कि ये ईमानदार हैं, जबकि विदेशों में भ्रष्टाचारी पर उंगली उठायी जाती है कि यह कैसे भ्रष्टाचारी हो गया।

प्रश्न—भ्रष्टाचार का जब जिक्र चला है, तो एक सवाल यह भी पूछना चाहूंगा कि जनता पार्टी के सन्दर्भ में पहले की और आज की देश में व्याप्त भ्रष्टाचार की स्थिति के बारे में आपका क्या ख्याल है ?

मुझे तो स्थिति पहले से कुछ बेहतर ही लगती है। कम से कम कोशिश तो इस ओर शुरू हो गयी है।

प्रश्न—क्या आपके विचार से इस देश की स्थिति आगे चलकर ऐसी भी हो सकती है, जब जनता समझे कि देश से भ्रष्टाचार जड़मूल से उखाड़ फेंका जा चुका है ?

क्यों नहीं हो सकती ? इसमें असम्भव नाम की चीज मैं नहीं देखता किन्तु इसके लिए सत्ता और जनता दोनों को ही मिलजुल कर पूरी ईमानदारी से कोशिश करनी होगी।

प्रश्न—क्या इसके लिए आप लोगों ने कुछ कार्य प्रारम्भ किया है ?

हमने कुछ कार्य तो शुरू किया ही है। जांच आयोग का गठन, सी० बी० आई० द्वारा छानबीन और लोकपालों की नियुक्ति आदि। हमारा देश घनी जनसंख्या वाला देश है और भ्रष्टाचार कैंसर का रूप ले चुका है। ऐसी स्थिति में बिना निराश हुए लगातार योजनाबद्ध रूप में कार्य करने से ही सफलता मिल सकती है।

प्रश्न—क्या आप ऐसा कुछ अनुभव करते हैं कि भ्रष्टाचार में किसी खास वर्ग का ज्यादा हाथ है या उसकी जिम्मेदारी ज्यादा आती है ?

इसकी सारी जिम्मेदारी है 'पोलिटिकल लीडरशिप' पर। दरअसल जड़ तो यही है।

प्रश्न—अगर यह जिम्मेदारी आपके शब्दों में "पोलिटिकल लीडरशिप" पर है, तो इन्हीं लोगों का कर्त्तव्य भी इस मामले में सबसे अधिक होना चाहिए ?

कर्त्तव्य इन लोगों का नहीं तो और किसका है ? "महाजनो येन गतः स पन्थाः।" दरअसल, गलती तो नेहरू के जमाने से हुई है। जहां तक भ्रष्टाचार का सवाल है, नेहरू जी अत्यन्त शुद्ध और पवित्र थे। लेकिन उनके सहयोगी दूसरे लोग जो भ्रष्टाचार करते थे, उन पर उन्होंने कभी गुस्सा नहीं किया। लिहाजा भ्रष्टाचारी लोगों को एक तरह से 'शाह' मिलती गयी, नतीजा सामने है।

प्रश्न—क्या चरित्र के आम-संकट से भी भ्रष्टाचार पर असर पड़ता है ?

क्यों नहीं, असर तो हर चीज से पड़ता है, सरकार के हर कानून से, हर फैसले से ; लेकिन दूसरे तत्त्वों का भी बहुत असर पड़ता है।

राष्ट्रीय चरित्र

प्रश्न—देश के कोने-कोने से खास तौर से ग्रामीण अंचलों से आप से भेंट करने वालों का तांता लगा रहता है। आप इन लोगों के बीच स्वयं को कैसा अनुभव करते हैं ?

मैं जानता हूं कि खास तौर से गांव वाले भाई बड़ी दूर-दूर से काफी उम्मीदें लेकर मेरे पास आते हैं। उन्हें यकीन है कि चलो, चरण सिंह अपना आदमी है, उसके पास चलो। मगर आप यकीन मानिये, काफी वक्त उनकी फरियादें सुनने में लग जाता है। एक बार तो पिछले दिनों साढ़े तीन घंटे तो महज उनकी परेशानियां सुनने में लग गये। अब इस दरमियान मैं कुछ ऐसा काम करूं, जिससे लोग कहें, अच्छा काम करने वाला है। समय का देश के लिये सदुपयोग करूं या डाकखाने का ही काम करता रहूं। यह एक बड़ी दिक्कत है। बस उन्हें तो यह है कि चरण सिंह हमारा आदमी है, चलो हर बात उसे सुना दें।

प्रश्न—बस यही आस्था है उनकी, जिसकी वजह से वे आप के पास दौड़े चले आते हैं ?

सो तो ठीक हैं, पर सबके मन की बात कैसे पूरी हो ? काश मैं उनके दर्द को बांट सकता।

प्रश्न—आपके दिल में देश के लिए इतना दर्द, इतनी तड़प है, तो पूरी भी होगी। प्रशासन चुस्त हो तो ...

असल में प्रशासन ठीक होना चाहिये। प्रशासन ठीक करने के लिए सबसे बड़ा कारण 'पोलिटिकल लीडरशिप' ही है। अफसरों के चरित्र साफ-सुथरे होने चाहिए। चरित्र तो अफसरों का, जजों का, मुन्सिफों का, लेखपाल का, गांव-पंचायत के पंचों का, सभी का ठीक होना चाहिए। आम नागरिक का चरित्र भी ठीक रहना चाहिए।

हमारे देश में एक कहावत है—"यथा राजा तथा प्रजा।" मगर यह कहावत राजशाही के जमाने की है, लोकशाही जमाने की नहीं। इसलिए हमारे नेताओं को पहले खुद मिसाल पेश करनी चाहिए। जनता का चरित्र इतना ऊंचा होना चाहिए कि नेता बेईमानी करें, तो सामान्य जनता पर उसका असर ही न पड़े ; तब कहीं जाकर जनतंत्र की सच्ची कामयाबी हासिल होगी। होना तो यह चाहिए कि यदि प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री या अन्य कोई मंत्री बेईमानी करे, तो जनता खुद इसके खिलाफ

एकजुट होकर उसका पर्दाफाश करे, बजाय इसके कि मंत्री बेईमानी करे तो जनता भी उसका अनुकरण करने लगे। फिर भला चरित्र ऊंचा कैसे होगा ?

जापान का उदाहरण

मैं आपको मिसाल दूं जापान की। मेरे दोस्त चौधरी अवतार सिंह तीन महीने जापान में रह आये हैं। गजब का राष्ट्रीय चरित्र है जापानियों का। सबसे प्रमुख चीज तो वे पुरुषार्थी हैं। दूसरे, अव्वल दर्जे के देशभक्त हैं। तीसरे, सबसे ज्यादा किफायतसार हैं। चौथे, उनका राष्ट्रीय चरित्र बहुत ऊंचा है। चौधरी अवतार सिंह ने मुझे वहां का एक वाकिया बतलाया कि एक लड़की सड़क पर जा रही थी, तो उसे रास्ते में एक छोटा सिक्का जैसे अपने यहां की अठन्नी हो, मिली। उसने वह सिक्का सिपाही को उठाकर दे दिया। सिपाही बोला कि चूंकि यह सिक्का तुमने पड़ा पाया है, इसलिए तुम्हारा है। लड़की ने कहा नहीं, मेरा नहीं है। जब लड़की ने अठन्नी नहीं ली तो उसे सिपाही ने एक सिगरेट ले आने को कहा। सिगरेट आई छः आने की, फिर भी बाकी दो आने बचे। जिससे सिपाही बचे हुए दो आने भी लड़की को देने लगा। पर उस लड़की ने लेने से इन्कार कर दिया। जब सिपाही ने उसे समझाया कि दो आने वह उसे सिगरेट लाने की एवज में बतौर इनाम दे रहा है। लड़की ने फिर इन्कार कर दिया। जब यह खबर उच्च अधिकारियों तक पहुंची, तो उस सिपाही को नौकरी से बर्खास्त कर दिया गया और उस ईमानदार लड़की की फोटो उक्त घटना के विवरण के साथ टोकियो के प्रमुख समाचार-पत्रों के मुख-पृष्ठ पर छापी गयी। ऐसा ही विकास होना चाहिए हमारे देश में राष्ट्रीय चरित्र का। ऐसा ही ठोस और चुस्त शासन भी होना चाहिए। जब तक यह नहीं होगा, तब तक भला नहीं होगा।

एक और मिसाल दूं आपको जापान की। एक हिन्दुस्तानी सज्जन यहां से जापान गये और वहां एक होटल में ठहरे। वहां से किसी दफ्तर में उनको किसी से मिलने जाना था। रास्ता करीब तीन मील का था। टैक्सी वाले से तय हो गया कि अमुक दूरी तक जाना है और इतने पैसे लगेंगे। वे साहब जब टैक्सी में सवार होकर कुछ दूर चले तो टैक्सी वाला रास्ता भूल गया और काफी चक्कर लगाने के बाद गन्तव्य स्थान तक पहुंचा। उक्त हिन्दुस्तानी सज्जन ने मीटर के हिसाब से टैक्सी का किराया अदा करना चाहा। उस जापानी को बुरा लगा और उसने उतनी राशि लेने से इन्कार कर दिया। ड्राइवर कह रहा था कि जितना तय किया है, उतना ही लूंगा, ज्यादा नहीं। इधर हिन्दुस्तानी महाशय मीटर के हिसाब से भरपूर किराया देना चाहते थे। हिन्दुस्तानी समझ रहा था कि शायद यह और ज्यादा पैसे मांग रहा है। वह जापानी न अंग्रेजी जानता था न हिन्दी और ये महाशय जापानी समझ नहीं पा रहे थे। बड़ी देर बाद कोई दुभाषिया आ गया और उसने समझाया कि ड्राइवर कह रहा

है कि दरअसल रास्ता तीन ही मील का था, गलती उसकी थी कि वह बड़ा चक्कर लगाकर पहुंचा। उसे वही किराया चाहिए, जो तय हुआ था। अधिक नहीं लेगा वह।

जापान के राष्ट्रीय चरित्र के बारे में यह घटना कितना जबरदस्त उदाहरण पेश करती है। हमारे देश में तो जानबूझ कर चक्कर लगाकर पहुंचाने की कोशिश की जाती है और अधिक पैसा लेना होशियारी मानी जाती है।

मेरे सपनों का भारत

प्रश्न—आपके सपनों का भारत कैसा है ?

मेरे सपनों के भारत पर तो कई किताबें लिखी जा सकती हैं। कहां तक बतलाऊं ? महात्मा जी ने एक दफे कहा था—मेरे सपनों का भारत तो वह होगा, जहां हर एक को जीवन की मूलभूत आवश्यकताएं सुलभ होंगी। मैं भी वही बात दुहरा रहा हूं कि प्राथमिक आवश्यकताएं सबकी पूरी हों, ऐशो-आराम की चीजें नहीं। दूसरे, सबको रोज़गार मुहैया हो। तीसरे, अमीरों और गरीबों में अन्तर कम से कम होता जाय। चौथे, यह कि हर आदमी ईमानदार हो अर्थात् देश में भ्रष्टाचार न हो और हर आदमी रोटी कमाने के काम में स्वतंत्र रहे ; अपने कर्त्तव्य का ईमानदारी से पालन करता रहे। पांचवे, यह कि हर आदमी अपने मुल्क को तरक्की की बुलन्दियों तक पहुंचाने का स्वप्न देखे और एक यह कि भारत में ऊंच-नीच का भेदभाव बिल्कुल न रहे।

यदि गांधी जी प्रधानमंत्री होते

प्रश्न—क्या आपके विचार में समाज का नेतृत्व राजनीतिज्ञों के ही हाथ में रहना चाहिए ?

मेरे विचार से समाज का नेतृत्व अलग-अलग होना चाहिए। राजनीति का क्षेत्र तो राजनेताओं के हाथ में ही रहेगा। मेरे ख्याल से इस सवाल की तह में आपके मन में शायद एक शंका यह है कि राजनीति एक ऐसा क्षेत्र है, जो भले लोगों के लिए नहीं है। मेरे भी मन में कभी-कभी यह सवाल उठता है कि मैं कहां आकर फंस गया। लेकिन आप ही जरा सोचिये, ऐसी भावना रखनी क्या देश के लिए हितकर है ? राजनीति तो हमेशा रहेगी ही, कोई न कोई किसी न किसी रूप में राजसूत्र तो संभालेगा ही। भले लोग नहीं चलायेंगे, तो बुरे लोग चलायेंगे, तब तो आखिर देश बिगड़ेगा ही। अगर गांधी जी आज हमारे पहले प्रधानमंत्री हो जाते, तो यह समस्याएं, जो आज हमारे सम्मुख खड़ी हैं, इस तरह से खड़ी ही न हो पाती। भारत का स्वरूप ही कुछ और होता।

प्रश्न—आपका यह महत्त्वपूर्ण विचार शायद देश के सामने पहली बार आया

है। आज तक किसी ने यह बात नहीं कही। हां, तो गांधी जी शुरू में यदि प्रधानमंत्री होते, तो क्या-क्या मर्यादाएं निर्धारित करते ?

देखिए, नेहरू जी पैदा तो भारत में ही हुए, मगर भारत की ज़मीन से पैदा नहीं हुए। महात्मा जी सन् 1919 में ही देश के राजनीतिक मंच पर आ गये थे। उस समय हमारे सामने दो प्रकार के आदर्श थे। एक तो सम्पूर्ण जीवन के विषय में जैसे स्वामी रामतीर्थ, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द जी, ये तीनों संन्यासी थे। दूसरे, लोकमान्य तिलक, गोखले, क्रान्तिकारी खुदी राम बोस। महात्मा जी दोनों आदर्शों से प्रभावित हुए। सबके मन में उस जमाने में एक ऊंची भावना थी अपने गुलाम देश को किसी तरह आजाद कराने की। उस जमाने में लोग मोटा कपड़ा पहनते थे, गर्म कपड़ा पट्टू पहना जाता था और अब इस जमाने में कोट, पतलून, टाई और न जानें क्या-क्या पहनते हैं। आज के जमाने में किसका आदर्श है ? हमारे बच्चों की जो मौजूदा पीढ़ी है, उनके सामने कौन सा आदर्श है ? अब किसका अनुसरण करें वह ? सबसे बड़ी समस्या तो यही हो गयी है। आज कोई भी बच्चा देश के लिए कोई स्वप्न देखता ही नहीं। क्यों नहीं देखता ? इसलिए नहीं देखता कि कोई आदर्श नहीं है उसके सामने। भटकाव की स्थिति में ही उसकी आधी उम्र बीत जाती है।

अनुशासनहीनता क्यों ?

प्रश्न—आजकल खासतौर से शिक्षकों और विद्यार्थियों में अनुशासनहीनता क्यों बढ़ रही है ? इसके कारण क्या हैं ?

देखिए, अनुशासनहीनता का सबसे बड़ा कारण यह है कि हमारे घरों में जो मान्यताएं थीं, जो परम्परायें थीं, जो जीवन था, उसके पैमाने बिल्कुल बदल गये हैं। पहले घरों की मान्यताएं थीं, सबसे पहले मां के पैर छुओ, फिर ताई के, दादी के ; मतलब यह कि बड़ों का आदर करो। बड़ों में गुरु भी आ जाते हैं, संन्यासी भी। माता-पिता, गुरु और संन्यासी सब पूज्य माने जाते थे। समाज में आदर की भावना होगी, तो अनुशासनहीनता कहीं नहीं होगी, न शिक्षकों में, न विद्यार्थियों आदि में ही। पर अब सब समाप्त हो गया। सब जगह अनुशासनहीनता दिखाई देती है। अंग्रेजों के ज़माने में जो लोग रिश्वत नहीं लेते थे, वे हमारे सामने लेने लगे। देश की नैतिकता तो पूरी तरह से चौपट हो गयी है। कुल मिलाकर देश पीछे गया है। शहर की सभ्यता बदली और लोग बदले, तो गांवों पर भी इसका बुरा असर पड़ रहा है और अब थोड़ी बहुत जो सभ्यता गांवों में बची है, वह भी सब चौपट होती जा रही है।

आशा की किरण

प्रश्न—चौधरी साहब, इस अंधेरे की स्थिति में क्या आपको कहीं कोई प्रकाश की किरण (सिलवर लाइनिंग) नज़र आती है ?

बेशक, वह यह कि "कुछ बात है हस्ती मिटती नहीं हमारी।" इतिहास में कितनी सभ्यताएं उठीं और मिट गयीं, मगर हमारी सभ्यता आज तक कायम है। आखिर कोई बात है, तभी तो यह चमत्कार है। कुछ सनातन जीवन मूल्य हैं हमारे, और हमारे देश भारत के। अपनी सभ्यता और संस्कृति से ही वह महान् है। बहुत सी चोटें झेली हैं इसने, इस चोट को भी बर्दाश्त करेगा। हमारी सभ्यता शाश्वत है, वह कभी नहीं मिटेगी।

बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक

प्रश्न—चौधरी साहब, समाज को बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक में बांटने की जरूरत थी ?

यह चालाकी अंग्रेजों ने की थी और अब इसे स्वार्थ-परक लोग कर रहे हैं, जिनके सामने केवल अपना स्वार्थ है, देश का स्वार्थ नहीं है। अंग्रेजों ने अपने स्वार्थ के लिए बांटा, जिसका कुफल आज तक हम भोग रहे हैं। हद है कि सिख तक अलग कर दिये गये। "हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई"—सुनने में तो कितना कर्णप्रिय लगता है, मगर यह अलगाव क्यों ? अब हिन्दू और हरिजन की भी बात होती है, इस बेवकूफी की भी कोई सीमा है ? असल में हिन्दू और कोई नहीं। मैं आपसे कहता हूं कि हिन्दू होने का कोई अभिमान नहीं करता, यह बदकिस्मती है, इस देश की !

जनता पार्टी के निर्माण की भूमिका

प्रश्न—जनता पार्टी के निर्माण में आपकी बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका है, विशेष रूप से उस समय जब आपने "देश बड़ा है और व्यक्ति उसके बाद आता है" यह स्वीकार किया और अपने को प्रस्तुत किया। इस सम्बन्ध में बतायें कि कैसे यह विचार आया, कैसे यह भूमिका बनी ?

यह विचार सबसे पहले आया उस समय जब हमने यह महसूस किया कि कई पार्टियां यदि प्रतिपक्ष में रहेंगी, तो संविद सरकार बनेगी और संविद सरकार चल नहीं सकेगी। दो या तीन पार्टियां होती, तो शायद कुछ तालमेल होना सम्भव होता—किन्तु उसकी शक्ति में फिर भी कुछ न कुछ कमी बनी ही रहेगी। इंग्लैण्ड में प्रतिपक्ष की अनेक पार्टियां है। 18वीं और 20वीं दो शताब्दियों तक संयुक्त सरकारें रहीं, लेकिन लोकतंत्रीय ढांचे में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। संयुक्त सरकारें भी लोकतंत्र में होती हैं।

इसलिए हमारे यहां विचार आया कि एक पार्टी होनी चाहिए—डेमोक्रेटिक अपोजीशन। उसी ख्याल से बनाया था—भारतीय क्रान्ति दल। उसमें ज्यादातर कांग्रेसी ही थे दरअसल। जब सन् 68 में इस्तीफा हुआ था, तब कोशिश की थी हमने।

क्रान्ति दल तो पहले ही बन गया था। वह शायद 11 नवम्बर सन् 1967 को बना था इन्दौर में। भारतीय क्रान्तिदल बनने के बाद जनवरी या फरवरी सन् 1968 में राजा जी से भी हमारी बातचीत हुई थी। राजा जी भी चाहते थे कि इस प्रकार की पार्टी बने, लेकिन बन नहीं पायी और फिर बात टल गयी और उन्होंने कहा कि चुनाव के बाद देखेंगे। फिर सन् 1969 के चुनाव के बाद मई में हम लोग इकट्ठा हुए, जनसंघ के नेता और स्वतंत्र पार्टी, प्रजा समाजवादी और हम तीनों एक हो जायें। लेकिन पी० एस० पी० वाले बोले कि स्वतन्त्र पार्टी को नहीं लेना चाहिए, यह तो राजा-महाराजाओं की पार्टी है या रिटायर्ड आई० सी० एस० वालों की है। हमने कहा जो हमारे उसूलों से सहमत होगा वह आ जायेगा; तुम क्यों पाबन्दी लगाते हो, चाहे राजा-महाराजा हो या कोई हो। लेकिन उनकी समझ में नहीं आया। इसलिए उस समय एक पार्टी नहीं बन पायी। हमने भी केवल स्वतंत्र पार्टी के लिए अपने अस्तित्व को मिटाना मुनासिब नहीं समझा। बात इस तरह फेल हो गयी सन् 1969 में। फिर जुलाई, सन् 1973 में नये सिरे से कोशिश हुई बहुत गम्भीर, उसमें भी कोई नहीं चाहते थे। हम और बीजू पटनायक ही चाहते थे। चुनाव आ रहा था सन् 1974 में विधान सभाओं का। तो मोरारजी भाई बोले, "आधी सीट उनकी होनी चाहिए।" हम चाह रहे थे कि सब मिलकर लड़ लें, तभी ये एस० एस० पी० वाले आ गये। एस० एस० पी० के दो हिस्से हो चुके थे। बड़ा ग्रुप तो राजनारायण जी का ही था, जो हमारे साथ आ गया। मुस्लिम मजलिस के लोग भी हमारे प्रोग्राम पर हमारे निशान पर चुनाव लड़े। इसलिए उस समय 107 सीटें लाये हम।

उस समय सारा हमला हम पर ही था। बी० बी० सी० ने कहा था कि 200 कांग्रेस की सीटें आयेगी, हमने कहा कि 100 मुश्किल से आयेंगी। लेकिन क्या करिश्मा हुआ, कैसे हुआ, उस चीज को मैं अभी तक नहीं भूल पा रहा हूं। हद हो गयी, डेमोक्रेसी कैसे चलेगी ? इलेक्शन के बाद हमने फिर कोशिश की। उसमें एस० एस० पी० तो पहले से ही थी, स्वतंत्र पार्टी भी आ गयी थी, बीजू पटनायक की उत्कल कांग्रेस और एक छोटा सा ग्रुप मधोक का। एक छोटी सी पार्टी चांदराम ने बना रखी थी हरियाणा में, वह कम्युनिस्टों में जाने की सोच रहा था। जब हमारा कुछ बनता देखा तो हमारे साथ आ गया। इस तरह 5-6 ग्रुप्स अप्रैल में इकट्ठे हुए, सन् 1974 में। फिर 29 अगस्त, 1974 को बी० एल० डी० बन गयी, भारतीय क्रान्ति दल की जगह। उस समय भी यह तीन ग्रुप अलग ही रह गये। जनसंघ, कांग्रेस और एक छोटा सा सोशलिस्ट ग्रुप, जो राजी नहीं था। इनकी बुद्धि में ही नहीं आया। मैंने जयप्रकाश नारायण जी से भी कहा था कि आप कहिए इनको, ये तो आपके नाम के पीछे चल रहे हैं, आप इन्हें समझाइये; फिर नहीं राजी हुए। इमरजेंसी में जाकर राजी हुए।

संविद और जनता का अन्तर

प्रश्न—जैसा संविद में आपको जो अनुभव हुआ था, क्या वही अनुभव आज जब कई पार्टियों से मिलकर सरकार चल रही है, आपको हुआ है अथवा उससे कुछ भिन्न स्थिति है ?

नहीं उससे तो अच्छा है । जब अलग-अलग पार्टियां कायम थीं, अपने निर्णयों के लिए, वे अलग बैठती थीं, अलग निर्णय लेती थीं । अब स्थिति यह है कि चाहे अन्दर कुछ भी फ़ीलिंग हो, लेकिन पार्टियां न अलग बैठती हैं, न अलग फैसले ही कर सकती हैं । अलग कोई संगठन नहीं रहा, वह अलगाव मिट चुका है । हम पुरानी स्थिति से कहीं अधिक अच्छी स्थिति में हैं । हां वैचारिक एकता में कभी-कभी कुछ कमी महसूस होती है । वह भी जैसी होनी चाहिये थी, वैसी नहीं । हम आसानी से निर्णयात्मक स्थिति तक पहुंच जाते हैं । अपनी पार्टी में बैठ कर अपने स्वतन्त्र मत प्रकट करना फिर एक स्वर से एक निर्णय लेना ही तो प्रजातन्त्र की सार्थकता है ।

राष्ट्रभाषा और उर्दू

प्रश्न—जनता पार्टी आने के बाद राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर यद्यपि आप स्वयं हमेशा से हिन्दी के पक्षधर रहे हैं, क्या पहले की सरकार या पूर्व परिस्थितियों और आज में कुछ अन्तर है ?

दरअसल, यह झगड़ा शब्दों का नहीं है, झगड़ा लिपि का है । यों, तो फारसी अरबी के शब्द हमारी लिपि में बहुत इस्तेमाल हो रहे हैं । आजकल तो इसका चलन और बढ़ता जा रहा है । उठाइए कोई हिन्दी की पत्रिका, देखिए हिन्दी और उर्दू में अलगाव नहीं है । प्रश्न सारा है लिपि का । अब मैंने यही कह दिया कि लिपि बाहर से आई है, तो इसी पर सब नाराज हो रहे हैं । पागलों जैसी गलतफहमी है उन्हें अगर उस वक्त राज न होता पठानों का और मुगलों का, तो देवनागरी लिपि ही चलती । अंग्रेज आये, अंग्रेजों ने अपनी अंग्रेजी लाद दी । निज़ाम ने उर्दू वहां लाद दी, तेलगू पर । आजकल तो नहीं लादी जा सकती । लोकतन्त्र है, लोग चाहेंगे, जिसको, वही होगी । अगर लिपि का झगड़ा नहीं होता, तो दो लिपि रहती इस वक्त हिन्दुस्तान में । गांधी जी कह रहे थे हिन्दुस्तानी करो । पार्टीशन के और भी कारण थे, लेकिन यह उर्दू का मामला भी एक बड़ा कारण था । अब याद कीजिए आपको याद ही होगा ।

यह सरकारी भाषा का झगड़ा है । वैसे तो उर्दू में बहुत सी खूबी हैं । उर्दू बहुत अच्छी भाषा है, इसमें कोई शक नहीं है । मैं जो कुछ बोलता हूं या लिखता हूं, वह अधिकतर उर्दू ही है ? लेकिन सारे भारत में बोली जाने वाली अनेकों भाषाएं संस्कृत से निकली होने के कारण हिन्दी से बहुत नज़दीक है । इसलिए हिन्दी ज्यादा लोगों की समझ में आ सकती है । और यदि दो लिपियां हो गई तो सरकारी काम में

बड़ी दिक्कत आएगी। सच तो यह है कि साम्प्रदायिक तत्वों ने राजनीतिक कारणों से उत्तर-भारत में हिन्दी और उर्दू का झगड़ा खड़ा कर दिया है और दक्षिण भारत में, खास तौर से तमिलनाडु में, हिन्दी और तमिल के बीच। हिन्दी फिल्मों का बहिष्कार भी ऐसे ही झगड़े का एक ढंग था।

तमिलनाडु में वे तमिल चाहते हैं, बंगाल में बंगला चाहते हैं। मेरे विचार से इसका धर्म से कोई वास्ता नहीं है। अगर धर्म से वास्ता होता तो बंगला देश अलग नहीं होता पाकिस्तान से। उर्दू अगर मज़हब की भाषा होती तो पश्चिमी पाकिस्तान और बंगलादेश क्यों बंटते? क्या बंगला देश के मुसलमान, मुसलमान नहीं हैं? मैं यह बात फिर से दोहराता हूं कि हिन्दी उर्दू के बीच लिपि को छोड़कर कोई अन्तर नहीं है।

प्रश्न—सुना है आप उर्दू भाषा के उत्थान के लिए विशेष प्रयास कर रहे हैं?

मैं हिन्दी की बात केवल इसलिए कहता हूं क्योंकि सारे राष्ट्र को एक सूत्र में बांधने के लिए एक भाषा चाहिए। मैं उर्दू की शिक्षा के हर तरह से पक्ष में हूं। जहां चालीस लड़के-लड़कियां उर्दू सीखना चाहते हैं, वहां उर्दू शिक्षक की व्यवस्था की गई है।

हम तैयार थे कि त्रिभाषा फार्मूले पर सख्ती से अमल हो। जो हिन्दी भाषी क्षेत्र हैं, उनमें आधुनिक भारतीय भाषाओं—बंगला, तमिल, तेलगू आदि के साथ उर्दू को भी शामिल किया जाये। जो उर्दू सीखना चाहें, शौक से सीखें। उर्दू को पूरा प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। यदि उर्दू को प्रश्रय न दिया गया, तो हमारे साहित्य का एक बहुमूल्य अंश हम से अलग हो जाएगा। उर्दू भाषा की लज्जत और नज़ाकत की अपनी शान है उसे हर हाल में बरकरार रहना ही चाहिए।

समाजवाद का प्रश्न

प्रश्न—समाजवाद को लेकर आपके विचारों की बड़ी चर्चा हो रही है।

इसमें कोई शक नहीं कि समाजवाद सचमुच एक मन को लुभाने वाला विचार है।

यही है न कि अर्थव्यवस्था एक व्यक्ति के लाभ के लिए न हो, बल्कि सारी जनता के लाभ के लिए हो। यह बहुत अच्छा है। लेकिन उसके लिए जरूरी है कि सारी जनता या स्टेट उसकी मालिक हो। उत्पादन का ढांचा भी ऐसा हो जिससे स्टेट जमीन की, फैक्टरियों की मालिक हो और मकान की मालिक हो तथा तिजारत भी करे। यह इस देश की संस्कृति और परम्पराओं के अनुसार सम्भव नहीं है। इसलिए हम चाहते हैं कि गांधी जी वाली बात हो, छोटी यूनिट हों, काम करने में स्वतन्त्र हों, इससे लोकतंत्र मजबूत होता है, उत्पादन बढ़ता है, चाहे वह कृषि के क्षेत्र में हो, चाहे

उद्योग के क्षेत्र में हो और व्यक्ति का विकास भी समाज के विकास के साथ-साथ होता है।

जवाहर लाल और इन्दिरा

प्रश्न—नेहरू परिवार को लेकर आपके विचारों की बड़ी चर्चा हुई है ?

दरअसल नेहरू की आलोचना करना उद्देश्य नहीं है और न उनकी कमजोरियां ढूँढने का। अभी कामथ की लिखी एक छोटी सी पुस्तक निकली है—'लास्ट डेज आफ नेहरू।' उन्होंने कहा कि हमने हजार बार कहा कि चीन के खिलाफ तैयारी करो। अनर्गल स्पीच देते रहे। उनके उद्धरण भी दिये हैं। जब आक्रमण हो गया, तो बस हम देखते रह गये। चीन के मुकाबले में हम बहुत कमजोर साबित हुऐ। वे यथार्थ-वादी व्यक्ति नहीं थे। उन पर पाश्चात्य सभ्यता का पूरा असर था और इसलिए उनकी नीतियां भारतीय जमीन पर अधिक कारगर नहीं हो पायीं।

प्रश्न—नेहरू और इंदिरा के विचारों में आप कोई अन्तर पाते हैं या एक जैसा ही मानते हैं ?

नेहरू जी के कुछ तो स्तर थे, इनका तो कुछ भी नहीं है। वे मूलभूत प्रजा-तंत्रीय प्रणाली पर विश्वास करते थे, ये तो प्रजातन्त्र को समाप्त कर एकतन्त्र कहिए या परिवारवाद कहिये या अधिनायकवाद कहिये, कायम करना चाहती थीं।

प्रश्न—इंदिरा-शासन के ग्यारह वर्षों की कोई उपलब्धि मानी जा सकती है ?

उपलब्धि कुछ नहीं, केवल हानि ही हानि हुई है और संवैधानिक परम्पराओं को ऐसी ठेस लगी है, जिन्हें सही दिशा देने में बड़ा समय और परिश्रम लगेगा।

कुछ संस्थाएं

प्रश्न—आनन्द-मार्ग के विषय में आजकल काफी बातें प्रकाश में आ रही हैं। क्या उस पर प्रतिबन्ध लगाने की कोई बात है ?

वैसे कोई इरादा नहीं है। आनन्द मार्गियों ने जो कुछ किया है, अभी हाल में वह देश के बाहर किया है। अभी उसे अवैध करार देने की बात विचाराधीन नहीं है। लेकिन चाहे जो गुट या संस्था हो, अगर हिंसा को अपनाती है, तो सख्ती से पेश आया जायेगा।

प्रश्न—लेकिन क्या यह निश्चित हो गया है कि विदेशों में आनन्द-मार्गियों ने ही विध्वंसक कार्यवाहियां की हैं ?

बाहर तो आनन्द-मार्गी ही ऐसा दावा कर रहे हैं, ब्रिटेन में, आस्ट्रेलिया में। वैसे यह भी कह रहे हैं कि हमसे सम्बन्ध नहीं है, लेकिन जो पकड़े गये हैं, वे कहते हैं कि हम आनन्द-मार्गी हैं।

प्रश्न—आर० एस० एस० वाले अलग संस्था के रूप में रहना चाहते हैं और उसका अलग अस्तित्व रखना चाहते हैं। क्या आप इससे सहमत हैं ?

मेरी सहमति का क्या है ? उनकी बातों का यकीन करना पड़ेगा।

केन्द्र-राज्य सम्बन्ध

प्रश्न—आपके विचार से राज्यों को अधिक स्वायत्तता प्रदान करनी चाहिए या नहीं ? क्या ऐसा करना देश के लिए हितकर है ?

इसमें कोई हर्ज नहीं है। केन्द्र की शक्ति को कोई हानि नहीं पहुंचनी चाहिए। इतने बड़े देश की एकता और शक्ति के लिए केन्द्र का मजबूत रहना बहुत आवश्यक है। लेकिन प्रान्तों के पास ऐसी शक्ति होनी चाहिये, जो उसका विकास करने में सहायक हो।

प्रश्न—क्या आप कोई विशेष विचार देना चाहते हैं ?

क्या दें ? अभी कल ही कुछ लोग पूछ रहे थे, राज्यों की शक्ति ज्यादा बढ़ जायेगी, तो केन्द्र कमजोर हो जायेगा। मैंने कहा कमजोर नहीं होता है। राज्य तो केन्द्र को मजबूत करने के लिए हैं। केन्द्र मजबूत होगा, तो राष्ट्रीय एकता बढ़ेगी।

भारत का व्यक्तित्व

प्रश्न—भारत का अपना व्यक्तित्व कैसा हो, मौलिक व्यक्तित्व किस प्रकार का हो ? क्या भारत एक महान् राष्ट्र बनेगा ?

मेरा सपना तो यही है, परन्तु इस देश में मौलिकता का अभिमान नहीं रह गया है। बच्चे, औरतें सब पश्चिमी सभ्यता की नकल करते हैं, अंग्रेजी बोलने में शान समझते हैं। नक्काल भला किसी को क्या दे सकते हैं ?

समाजघाती फिल्में

प्रश्न—राष्ट्रीय-चरित्र के निर्माण में फिल्मों की क्या भूमिका होनी चाहिए ?

अच्छा प्रश्न किया। मैंने सोचा एक हिटलर था, जिसने फिल्मों के माध्यम से राष्ट्र को मजबूत बनाया, राष्ट्र का निर्माण किया और कहां हमारे देश की यह फिल्में !

कल ही मैंने अपने घर में किसान के नाम पर एक फिल्म देखी। पहले तो उसमें महल दिखाया, फिर एक खूबसूरत लड़की दिखलायी गयी। लड़की का बाप महल में उसे खोज रहा था। इतने में महल का मालिक आ गया, जिसने आते ही लड़की को बांहों में भर लिया। उसकी इज्जत लूटी। लड़की मर गयी तो उसे गंगा में डलवा दिया। इसके साथ ही दो और प्रेम के किस्से चल पड़े। उफ़ ऐसा बेहूदापन, हमने फौरन फिल्म बन्द कर दी। यह सिनेमा तो हमारे देश को चौपट कर देगा।

रूखा व्यवहार ?

प्रश्न—आपके बारे में लोगों का ऐसा विचार है कि आपका व्यवहार बड़ा सख्त और रूखा होता है ?

मैं इसका क्या उत्तर दूँ ? मैं बेईमान और भ्रष्टाचारी लोगों को सजा देना चाहता हूं, क्या इसीलिए मेरे बारे में इस तरह का आरोप है और क्या इसीलिए भी कि मैं सिफारिशें नहीं मानता और मैं पूंजीपतियों से दूर रहता हूं ?

प्रश्न—शायद आपसे लोग इसलिए दूर रहते हैं, क्योंकि आपको किसी प्रकार भ्रष्टाचार में शामिल नहीं किया जा सकता ?

यह ठीक है कि मैं लोगों की गलतियों के लिए उनको डांटता हूं या समझाता हूं, फिर भी लोग बड़ी संख्या में मेरे पास आते हैं। मैं जानता हूं कि मेरे बारे में बहुत सी बातें लोग क्यों कहते हैं।

प्रश्न—विचित्र बात है कि आप जमींदारी विरोधी आन्दोलन में अग्रणी रहे हैं, फिर भी आपको लोग हरिजन-विरोधी कहते हैं।

कुछ भ्रष्टाचारी राजनीतिज्ञ मुझसे डरते हैं, इसीलिए मेरे बारे में भ्रान्तियां फैलाते हैं, मेरे लिए हरिजन विरोधी होने का आरोप तो बहुत ही हास्यास्पद है। सन् 1932 में मेरा खाना बनाने वाला लड़का हरिजन था। बाद में भी लखनऊ में मेरा रसोइया हरिजन ही था। मैं तो जाति-पांति का विरोधी हूं और मैंने हमेशा इसके लिए संघर्ष किया है। जन्मना जात-पांत तभी टूट सकती है, जब लोग अन्तर्जातीय विवाह करें। मैंने तो सन् 1954 में नेहरू जी को एक पत्र लिखा था, उसमें सलाह दी थी कि संविधान में इस आशय का संशोधन होना चाहिये कि कुछ समय के बाद केवल उन युवकों को गज़ेटेड सेवा में लिया जायेगा अथवा विधान मण्डलों में प्रवेश दिया जाएगा, जो दूसरी जातियों में शादी के लिए तैयार होंगे। नेहरू जी इससे सहमत नहीं हुए। सन् 1967 में जब मैं उत्तर प्रदेश की संविद सरकार का मुख्यमंत्री बना, तब भी मैं इस प्रकार का कानून बनाना चाहता था। लेकिन मेरे मंत्रिमंडल के साथियों ने ही इसका विरोध किया। फिर भी एक निर्णय मैंने यह लिया कि शिक्षा संस्थाओं के ऐसे नाम समाप्त कर दिये जायें, जो कि जाति के आधार पर हों। सन् 1967 में मैंने प्रदेश लोक सेवा आयोग में एक हरिजन को सदस्य बनाया। भारतीय क्रांति दल के घोषणा-पत्र में तो एक ऐसी धारा रखी गयी थी, जिसमें कहा गया था कि निजी और सार्वजनिक उद्योगों या कारखानों में बीस प्रतिशत मजदूरों के स्थान अनुसूचित जातियों के लिए सुरक्षित रहें।

प्रश्न—मुसलमानों के बारे में आपके क्या विचार हैं ?

आजकल मुसलमानों के लिए जो कुछ विपक्ष द्वारा कहा जा रहा है, वह राजनीतिक उद्देश्य को लेकर ही है। सन् 1967 में जब भारतीय क्रांतिदल बना और दो

साल के बाद जब उत्तर प्रदेश में मध्यावधि चुनाव हुए, तो हमारे विजयी 99 सदस्यों में से 11 मुसलमान थे और कांग्रेस के 210 विजयी सदस्यों में केवल 13 मुसलमान थे। सन् 1977 में जो मुसलमान संसद-सदस्य उत्तर प्रदेश से जीते, वे सभी पुराने लोक दल के ही थे।

प्रश्न—शुरू में कांग्रेस छोड़ने वाले इनेगिने व्यक्तियों में आप भी हैं। इसका क्या कारण है?

मैं उत्तर प्रदेश का राजस्व मंत्री था और यह बड़ा महत्त्वपूर्ण विभाग था। पंडित नेहरू सहकारी खेती शुरू करवाना चाहते थे। मैं उनसे सहमत नहीं था। इस पर वे मुझसे नाराज हुए। इसी कारण कुछ ही वर्षों में उत्तर प्रदेश की राजनीति में व्यापक परिवर्तन आया। उन्होंने एक ऐसे व्यक्ति को मुख्यमंत्री बना दिया जो दो बार चुनाव हार गया था, क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि मैं मुख्यमंत्री बनूं। तभी से मुझ पर अत्यधिक महत्त्वाकांक्षी और प्रतिक्रियावादी होने का आरोप लगाया गया। मेरी भी महत्त्वाकांक्षाएं हो सकती हैं, किन्तु ऐसी व्यवस्था और प्रशासन में कुछ बनने की जहां सभी लोग सुख और शान्ति से रह सकें।

प्रश्न—देश की उद्योग नीति के बारे में कुछ बताइए।

मैं पहले ही कह चुका हूं कि देश में जितना जरूरी हो उतने ही बड़े उद्योग होने चाहिए और उनमें ऐसी वस्तुएं बनाई जायें जो लघु अथवा कुटीर उद्योगों में न बनाई जा सकती हों। इस आशय का प्रस्ताव जनता पार्टी की कार्य समिति में पारित भी हो चुका है।

बड़े कारखानों के कारण न तो कीमत सस्ती हो रही है और न सही अर्थों में औद्योगीकरण हो रहा है। और फिर जनाब, इन कारखानों में मैनेजर हैं, डिप्टी मैनेजर हैं, जनरल मैनेजर, डायरेक्टर हैं, डिप्टी डायरेक्टर हैं, ओवरसियर हैं, इंजीनियर हैं, इस तरह जाने कितने-कितने टेकनीशियन और अफसर हैं। तो यह एक नयी क्लास है, जो बड़े कारखानों से पैदा हुई है और मालिक के मुनाफे का अधिकांश हिस्सा यही लोग ले जाते हैं। इन लोगों की क्या जरूरत है? यदि बड़े कारखानों से देश मालदार होता तो बिहार कभी का मालदार हो गया होता। खेती की पैदावार बढ़ने से ही देश मालदार होता है। हमारी असल समस्या फी आदमी पैदावार बढ़ाने की नहीं है, हमारी समस्या फी इकाई पूंजी यानी फी रुपया और फी एकड़ जमीन की पैदावार बढ़ाने की है।

प्रश्न—जिन क्षेत्रों का राष्ट्रीयकरण हो गया है, उनके बारे में आपकी क्या नीति होगी?

अब जिनका राष्ट्रीयकरण हो गया है तो हो गया है। जापान में भी यही

हुआ था। लेकिन बाद में वहां की दूसरी सरकार ने वहां के कारखाने निजी क्षेत्र के लोगों को बेच दिये। फल यह हुआ कि जापान में उत्पादन एकदम बढ़ गया।

प्रश्न—सार्वजनिक क्षेत्र की अपेक्षा निजी क्षेत्र को बहुत ज्यादा बढ़ावा दिये जाने पर फिर उनमें हड़तालें होंगी, असन्तोष बढ़ेगा और उत्पादन कम होगा। इससे एक विरोधाभास की स्थिति पैदा होगी।

मेरे नक्शे में तो हड़ताल का काम ही नहीं है, भैया! जब छोटी इकाइयां होंगी तो हड़तालें कहां से होंगी? जितने कारखाने आज बढ़ रहे हैं, वे भी कम हो जायेंगे और आधे तो उसमें बन्द ही हो जायेंगे। और यदि चलते रहेंगे तो बाहर माल बेचेंगे, इससे फॉरेन एक्सचेंज कमायेंगे।

प्रश्न—आपके विचार को सुनने के बाद हमें लगा कि उद्योग के क्षेत्र में बहुत बड़ी क्रान्ति होने जा रही है।

हां, अगर मेरी चल गयी तो जरूर क्रान्ति होगी और आप सारा नक्शा बदला पायेंगे।

प्रश्न—विदेशी संबंधों के बारे में आपके क्या विचार हैं? रूस और अमेरिका आदि से आप कैसे सम्बन्ध रखना चाहते हैं?

हम सभी देशों से सम्बन्ध रखना चाहते हैं, परन्तु वहां की व्यवस्था से नहीं। रूस से हमारी मित्रता है, किन्तु वहां की साम्यवादी व्यवस्था से नहीं। हम अमेरिका से भी अच्छे सम्बन्ध रखना चाहते हैं। इस दृष्टि से हमारे सभी मित्र समान हैं। किसी देश से कोई विशेष या अतिरिक्त सम्बन्धों की आवश्यकता नहीं है। ऐसे संबंध तो हमारे अपने देश से ही हो सकते हैं। विदेशी सम्बन्धों में राष्ट्रहित का विचार सर्वोपरि होना चाहिए।

प्रश्न—दक्षिण में जनता पार्टी की हार और इन्दिरा कांग्रेस की जीत के बारे में आपको क्या कहना है?

लोगों की किसी कमी के कारण ऐसा नहीं हुआ, बल्कि इसकी जिम्मेदारी जनता पार्टी के संगठन पर है। वहां कोई संगठन ही नहीं था। चुनाव से कुछ ही दिन पूर्व वहां राज्य स्तर पर कुछ संगठन बना था, किन्तु जिला स्तर पर नहीं। इसलिए हम मतदाताओं के निकट पहुंच ही नहीं सकते थे। यही कारण है कि उन्होंने हमारी नीतियों को समझा ही नहीं। यह असफलता पार्टी के असंगठित स्वरूप के कारण हुई। फिर जनता पार्टी के बहुत से उम्मीदवार ऐसे थे, जो पहले कांग्रेसी रह चुके थे और इमरजेंसी के दौरान उनकी बदनामी थी और उस समय जो कुछ अत्याचार अनाचार हुआ उसमें वे सहयोगी थे। जनता पार्टी का जन्म ही इमरजेंसी की इन ज्यादतियों के विरुद्ध हुआ, अतएव इस पार्टी के ऐसे लोग कैसे जीत सकते थे, जिनका सम्बन्ध उन दिनों के अन्याय और अत्याचार से रहा हो। आश्चर्य की बात है कि आन्ध्र में जनता

पार्टी के 260 उम्मीदवारों में 120 भूतपूर्व कांग्रेसी थे; जिनमें केवल आठ ही जीत सके।

प्रश्न—क्या इस सम्बन्ध में आप श्रीमती इन्दिरा गांधी की लोकप्रियता को भी महत्त्व देते हैं?

महाराष्ट्र की अनेक सभाओं में श्रीमती गांधी ने रोना रोया और देर से पहुंचने का कारण यह बताती थीं कि जनता सरकार उनके आने-जाने में तरह-तरह की बाधाएं उपस्थित करती है। कई जगह उन्होंने अपने कथित अभावों का भी रोना रोया। किन्तु दक्षिण में कुछ आंशिक सफलता के बावजूद मैं नहीं समझता कि इन्दिरा गांधी अब कोई राजनीतिक शक्ति रह गई हैं। वे भले ही इधर-उधर जाती हैं, तो लोग उनके पास लोकप्रियता के कारण नहीं, बल्कि उत्सुकता के कारण आते हैं। वे फिर से कभी सत्ता में नहीं आ सकती और यदि सत्ता में आने के प्रयास में वे या उनकी पार्टी कोई अनुचित कार्यवाही करेगी तो हम उसका हर स्तर पर मुकाबला करेंगे। अगर यह कानून और व्यवस्था का सवाल हुआ तो उससे भी सख्ती से निपटेंगे। लेकिन मेरी सख्ती का मतलब यह नहीं कि जो अत्याचार उनके समय में हुए, उसकी पुनरावृत्ति हो। हमारे सामान्य कानून सभी परिस्थितियों का सामना करने के लिए समर्थ हैं।

प्रश्न—कुछ लोग तीसरी राजनीतिक शक्ति की बात करते हैं।

यह तथाकथित शक्ति तब तक नहीं उभर सकती, जब तक जनता पार्टी नहीं टूटती और मैं नहीं समझता कि जनता पार्टी टूटेगी। फिर भी अगर कुछ लोग इसे तोड़ने की कोशिश करते हैं, तो वे स्वयं समाप्त हो जाएंगे।

लखनऊ-2

चरण सिंह

मई 22, 1954

प्रिय पंडित जी !

एक लम्बे अन्तराल और हार्दिक ऊहापोह के बाद मैं यह पत्र आपको लिख रहा हूं।

जैसा कि आपने अपने भाषणों में कई बार जोर देकर कहा है भारत विदेशी आक्रमण के सामने केवल अपनी सामाजिक दुर्बलताओं के कारण पराजित होकर गुलाम बना। किसी भी विदेशी शक्ति की बहादुरी, संख्या, ऊंची सभ्यता या संस्कृति के कारण ऐसा कदापि नहीं हुआ। एक अंग्रेज इतिहासकार ने भी अपनी पुस्तक 'इंग्लैंड का विस्तार' में इसे स्वीकार किया है। उक्त सत्य आम लोगों पर उजागर हो या नहीं, उन लोगों को जो सार्वजनिक महत्त्व का काम करते हैं इस तथ्य का प्रतिदिन एहसास होता है। हमारी सभी दुर्बलताओं में जो धार्मिक तथा भाषाजनित विषमताओं एवम् हमारी जन्म पर आधारित वर्ण व्यवस्था पर आधारित हैं मेरी राय में हमारी राजनैतिक पराधीनता और पतन की जिम्मेदारी अन्तिम दुर्बलता, वर्ण व्यवस्था पर, सबसे अधिक है। यह सबसे अधिक खतरनाक साबित हुई है। इसी से हमारे देश का विभाजन भी सम्भव हुआ। जब उच्च वर्ग के हिन्दू अपने सम धर्मावलम्बियों से समानता और आदर का व्यवहार नहीं कर पाते तब मुसलमानों के इस भय को उचित मानना पड़ेगा कि अंग्रेजों के चले जाने के बाद उन्हें हिन्दुओं के विराट् बहुमत से सद्व्यवहार और सद्भाव नहीं मिलेगा। अब यह सब अतीत की बातें हैं।

दुःख तो इसका है कि हमने इस सबसे कुछ भी सीखा नहीं। जाति की भावना कम होने के बदले बढ़ती ही गयी। ऐसा प्रजातंत्र की आकांक्षाओं तथा नौकरी और रोजगार पाने के लिए अधिक हो रहा है। इसका प्रकोप सार्वजनिक जीवन की उच्चतम शिराओं तक ही सीमित नहीं। इसका प्रशासकीय सेवाओं पर भी काफी असर है। इससे पक्षपात और अन्याय को ही प्रश्रय नहीं मिला है बल्कि व्यक्ति का मस्तिष्क और हृदय भी संकुचित बन कर दोषारोपण-प्रत्यारोपण, सामाजिक अविश्वास और संदेहों के घेरे में जा फंसता है। सम्प्रति यह राजनैतिक द्वेष का शस्त्र बन गया है।

सवाल यह है कि इसका अन्त कैसे किया जाय? धर्मवेत्ताओं तथा महिलाओं ने गौतमबुद्ध के समय से इस विषय में प्रयत्न किया है मगर उसका कोई सफल हल नहीं मिल पाया है।

मैं साहसपूर्वक (इस विषय में) एक सुझाव प्रस्तुत करना चाहता हूं। उसे

पिछले छः वर्षों से अपने कार्य के विविध क्षेत्रों में क्रमोवेश अपनाया है। व्यक्ति के जीवन में विवाह के अवसर पर जाति-पांति का बखेड़ा आ खड़ा होता है। अतः अगर इस बुराई का निराकरण करना है तो ऐसे कदम उठाने पड़ेंगे जिससे विवाह के लिए जाति का महत्त्व न रहे। अर्थात् बुराई की जड़ पर कुठाराघात करना है। हमने विभिन्न सेवाओं में अभ्यर्थियों के चयन के लिए कितने मापदंड निर्धारित कर रखे हैं, जिसके अनुपालन से कार्य विशेष के लिए सक्षम और उपयुक्त व्यक्ति मिले। अब तक इन मापदंडों का लक्ष्य व्यक्ति का मस्तिष्क और शरीर ही रहा है। उसके हृदय को आंकने के लिए कोई योग्यता निर्धारित नहीं की गयी है जिससे उसकी अभिरुचि, सहन शीलता और संवेदनाओं को सही-सही जाना जा सके कि वह अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के साथ सहानुभूति का सद्व्यवहार करने में निपुण होगा या नहीं।

मेरी राय में हमारे देश के संदर्भ में उपरोक्त योग्यता बहुत समीचीन होगी अगर हम शुरू में कम से कम राजपत्रित अधिकारियों के लिए अन्तर्जातीय विवाह की शर्त आवश्यकीय कर दें। उक्त शर्त का आशय इच्छा के विपरीत किसी से विवाह करना नहीं होगा। हम किसी का स्नातक होना आवश्यकीय नहीं कर सकते यद्यपि सरकारी पदों के लिए वह निर्धारित योग्यता है। ऐसे युवकों को पर्याप्त संख्या में पाना मुश्किल भी नहीं होगा। आज कालेजों की शिक्षा पाये हुए युवक युवती इसके लिए तैयार हैं। मेरी राय में अन्तर्जातीय विवाह की शर्त किसी एक निश्चित तारीख जैसे 1 जनवरी 1955 से लगायी जा सकती है। अविवाहित युवक को भी सेवा में अथवा विधान सभा में प्रवेश करने का पूरा अधिकार होगा। मगर बाद में (विवाह के समय) अगर वह अन्तर्जातीय विवाह न करे तो उसे त्यागपत्र दे देना पड़ेगा। भारतीय संघ की सेवाओं के लिए हम यह भी निर्धारित कर सकते हैं कि अन्तर्जातीय विवाह करने वालों को सेवाओं में विशेष सुविधाएं दी जायेंगी। चूंकि भाषावार राज्य स्थापित होने वाले हैं इसलिए उपरोक्त शर्त बहुत श्लाघ्य होगी। कट्टर व्यक्तियों को भी इस पद्धति से कोई विरोध नहीं होना चाहिए क्योंकि हमारे शास्त्रों में अनुलोम विवाहों का प्राविधान है। तो यह होगा कि इस तरह जातियां गोत्र बन जायेंगी जहां पिता के सगोत्र में विवाह वर्जित है।

अगर संविधान में इस आशय की एक धारा जोड़ दी जाय तो हिन्दुस्तान की वह बुराई जो राजा जी के शब्दों में भारत की दुश्मन नम्बर एक है दस वर्षों में मिट सकती है। यह देश, जब तक जाति-पांति का समूल नाश न कर दिया जाय, शक्तिशाली नहीं बन सकता। और शासन के सक्रिय रूप में उक्त बुराई के मूल पर प्रहार किए बिना उसे सुधारा नहीं जा सकता। ऐसा यदि नहीं किया गया जो जाति प्रथा के कारण व्याप्त आपसी संदेह और घृणा देश को जला कर राख कर देगा। यह उतना ही सत्य है जितना दिन के बाद रात का आना।

आशा है कि आपको मेरे ये सुझाव अतिरंजित नहीं लगेंगे। मेरे जैसे व्यक्ति का अनुभव है कि ऊंची कही या मानी जाने वाली जातियों से इतर वर्ण में जन्म लेने का क्या असर होता है। उनके प्रति जो अपमानजनक व्यवहार किया जाता है या समाज में जो उन्हें कठोर भर्त्सना मिलती है उससे वे प्रायः सामूहिक रूप में दूसरे धर्मों को ग्रहण कर लेते हैं। यह केवल निम्नतम वर्ग के लिए सच नहीं है यह उच्च लोगों पर भी लागू होता है। उदाहरणार्थ सन् 1897 से 1931 के बीच में हिन्दू जाट अपने को हीन माने जाने के कारण अपने पूर्वजों के धर्म छोड़कर उससे बाहर चले गये।

प्रस्तावित संशोधन का कड़ा विरोध होना अवश्यम्भावी है। मगर उतनी ही कड़ाई से अगर आप उसे लागू कर सकेंगे तो विरोध क्रमशः (मोम सा) गल जायेगा। मेरी राय में शिक्षित हिन्दू वर्गों में प्रस्ताव का हिन्दू कोड बिल की कतिपय (लोकप्रिय) धाराओं से कहीं अधिक स्वागत होगा।

अगर उक्त संशोधन के मार्ग में (संवैधानिक) रुकावटों को पार कर संशोधन स्वीकृत हो जाय तो वह देश की स्वराज प्राप्ति की तरह ही महत्त्वपूर्ण सेवा होगी। और तभी हमारे देश के शक्तिशाली अस्तित्व की नींव पड़ सकेगी, अन्यथा नहीं।

शुभ कामनाओं सहित,
आपका,

चरण सिंह

पंडित जवाहर लाल नेहरू
भारत के प्रधान मंत्री
नई दिल्ली

चरण सिंह

विधान सभा
लखनऊ
मार्च 13, 1959.

प्रिय पंडित जी,

मैं यह पत्र आपको निराशा भरे हृदय से लिख रहा हूं। उस दिन यद्यपि आपने मुझसे बात करने के लिए घंटे भर से अधिक समय दिया तथापि जो सच्चाई मैं व्यक्त करना चाहता था वह अपूर्ण रही।

पहला तथ्य यह है कि डाक्टर सम्पूर्णानंद का प्रशासन के विषय में ज्ञान शून्य की चरम सीमा का है। उन्हें यह भी नहीं मालूम कि कौन-कौन विषय किस विभाग के अन्तर्गत आते हैं। वास्तविकता तो यह है कि वह विभिन्न विभागों की कार्य प्रणाली से सर्वथा अपरिचित हैं। उनकी विशेषता यह है कि ग्राम स्तर पर शासकीय कार्यकर्त्ताओं की कार्य पद्धति को वे बिलकुल नहीं जानते। सन् 1957 के आम चुनावों के बाद आपके पत्र के उत्तर में बिना मुआवजा दिए किसानों की जमीन का सिंचाई विभाग द्वारा अधिग्रहण करने का उनका सुझाव कई उदाहरणों में से एक ज्वलंत उदाहरण है। ग्रामीण क्षेत्रों और वहां के हालात से परिचित कोई भी मंत्री या मुख्य-मंत्री उन कारणों और आधारों पर विश्वास ही नहीं करता जिन पर उनका उत्तर आधारित था।

दूसरे उदाहरण के रूप में मैं उनके विधान सभा में दिए गये दिनांक 12 अगस्त 1957 के बयान की ओर ध्यान दिलाऊंगा जिसमें उन्होंने यह कहा है कि जिला-धिकारी के पद को रखने या न रखने के बारे में सरकार विचार कर रही है। वास्त-विकता यह थी कि जिला बोर्ड या काउन्सिल बोर्ड की बिल पर मंत्रिमंडल विचार कर रहा था जिसमें जिलाधिकारियों का पद तोड़ने के विचार की बात ही नहीं थी। उक्त पद को तोड़ना हमारे देश में कम-से-कम आगामी पच्चीस वर्षों तक सार्वजनिक हित में है ही नहीं।

वे सन् 1938 से मंत्रिमंडल के सदस्य रहे हैं और सन् 1954 से मुख्यमंत्री। उन्हें यह भी नहीं मालूम कि बाढ़ की सहायता देना राजस्व विभाग का काम है न कि सिंचाई विभाग का। उसी तरह मालगुजारी में छूट माल विभाग का काम है न कि कृषि विभाग का। तथा गन्ना कर उद्योग विभाग के अन्तर्गत आता है न कि कृषि विभाग के। उन्हें यह भी नहीं मालूम कि अस्सी लाख लागत की पीलीभीत व लखीम-पुर खीरी कालोनी की परियोजना जिस पर 1955 से काम हो रहा है माल विभाग की नहीं प्रत्युत कृषि विभाग की जिम्मेदारी है।

इन परिस्थितियों में इस तथ्य कि कल्पना ही की जा सकती है कि वे विभागीय अधिकारियों का कितना पथप्रदर्शन कर सकते हैं और उनसे क्या सम्मान पा सकते हैं।

इन सबका विशेष प्रभाव नहीं पड़ता अगर उनमें जानकारी प्राप्त करने की और तथ्यों को समझने की इच्छा होती। वह मुख्य सचिव द्वारा प्रेषित प्रस्तावों तथा दूसरे अधिकारियों के सुझावों पर ध्यान ही नहीं देते। जिलाधिकारियों से जब वे उनसे मिलने आते हैं या जब वे उनके जिलों में जाते हैं, कोई सवाल ही नहीं पूछते। विधान सभा में हो रहे महत्त्वपूर्ण विषयों पर बहस की बैठकों में वे उपस्थित ही नहीं होते। अविश्वास के प्रस्ताव तथा फौरी स्थगन की बहसों में उन्हें एक से, अधिक बार कोई पुस्तक पढ़ते पाया गया है। अपने आफिस में भी वह यदा-कदा ही आते हैं जबकि विधान सभा का सत्र चालू रहता है। दोपहर के बाद तो वह विधान सभा का सत्र होते हुए भी आफिस नहीं लौटते।

जून 1958 से खाद्य स्थिति बिगड़नी शुरू हो गयी थी। मध्य जुलाई तक वह स्थिति खतरनाक हो गयी थी। लेकिन दो बार जुटी मंत्रिमंडल की बैठकों में, दिनांक 26 जून और 18 जुलाई को, उसकी कोई चर्चा नहीं हुई। मेरे आग्रह पर 21 जुलाई को (खाद्य स्थिति का) सवाल मंत्रि परिषद् में विचार के लिए रखा गया। अगस्त के अन्तिम सप्ताह में मेरे कहने पर वह दुबारा मंत्रि-परिषद् के समक्ष रखा गया यद्यपि खाद्य विभाग मेरा चार्ज नहीं था। खाना मनुष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता है। इसलिए किसी भी सरकार के लिए यह सर्वोपरि महत्त्व का विचारणीय विषय है। लेकिन जीवन के यथार्थ से सर्वथा अपरिचित तथा अलौकिक विषयों के छिद्रान्वेषण में संलग्न हमारे मुख्यमंत्री को इस बात की किंचित् मात्र भी चिन्ता नहीं थी।

मैंने मई 1957 से अब तक कई बार यह अनुरोध किया है कि वह विशेषज्ञों और सम्बन्धित अधिकारियों से कृषि की उपज बढ़ाने के बारे में सांगोपांग विचार विमर्श करें, लेकिन इसके लिए उन्होंने कोई समय नहीं निकाला। बहुत बार निवेदन करने पर भी उन्हें किसी तहसील का, जहां चकबन्दी योजना का काम चल रहा है, दौरा करने का समय नहीं मिला।

सच्चाई तो यह है कि उनकी दिलचस्पी कहीं और है तथा उन्हें शासन अथवा राज्य के आर्थिक विकास से कुछ भी सरोकार नहीं। विभिन्न अखबारों तथा पत्रिकाओं में पिछले बीस महीने में ज्योतिष, क्षितिज में आकाश-यात्रा, उड़न तश्तरियों और बद्रीनाथ पर प्रकाशित उनके लेख मेरे वक्तव्य के साक्षी हैं।

आम जनता से उनका कोई सम्पर्क नहीं है। वह न उनकी मानसिकता से परिचित हैं न ही वे उनकी आवश्यकताओं को समझना चाहते हैं। मुझे याद नहीं कि ग्रामीण अंचलों में उन्होंने सर्वसाधारण की एक भी सभा को आधे घंटे तक भी संबोधित

किया हो। मार्च 1957 से हमारे राज्य में ग्यारह उपचुनाव हो चुके हैं। वे इन क्षेत्रों में एक बार भी किसी सार्वजनिक सभा में भाषण करने नहीं गये। उन्होंने कभी यह भी जानने की कोशिश नहीं कि किस कांग्रेसी उम्मीदवार के विरुद्ध क्या ताकतें काम कर रही थीं। यही नहीं, किसी को इस बात पर आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि उनकी अक्षमता को जानते हुए हमारे कार्यकर्ताओं ने भी उन्हें बुलाने को महत्त्व नहीं दिया। इस तरह कांग्रेसी उम्मीदवार की विजय या हार से उन्हें कोई सरोकार नहीं। उनका मुख्यमंत्रित्व आगामी तीन सालों के लिए, उनके विचार से, सुरक्षित है। पंडित जी, आप मुझे क्षमा करेंगे अगर मैं यह कहूं कि वे और चाहे जो कुछ हों उनमें नेतृत्व की क्षमता नहीं।

उनकी आम जनता में विश्वास की कमी के कारण ही वाराणसी क्षेत्र का एक उपनिर्वाचन जो श्रीमती सज्जन देवी की मृत्यु के कारण जनवरी में हो जाना चाहिए था अब आगामी नवम्बर के लिए स्थगित किया जा रहा है। और उसके सही कारण को अप्रकट रखने के लिए एक या दो दूसरे उपनिर्वाचन भी स्थगित किए जा रहे हैं। लेकिन इस प्रकार उत्तर प्रदेश में कांग्रेस की दिक्कतों को बहुत दिनों तक टाला नहीं जा सकता।

उनमें पार्टी का प्रदेश कांग्रेस कमेटी में सामना करने का साहस नहीं। जुलाई 1957 में जब सरकारी कर्मचारियों की सेवा निवृत्ति की उम्र पर प्रदेश कांग्रेस की बैठक में सरकार के निर्णय के बारे में कुछ आलोचनात्मक सवाल पूछे गये तो उन्होंने कोई जवाब ही नहीं दिया। वे मौन रहे क्योंकि प्रदेश कांग्रेस को वह निर्णय के न्यायोचित होने का विश्वास दिलाने में अपने को असमर्थ अनुभव कर रहे थे। दुबारा दिनांक 3 नवम्बर की प्रदेश कांग्रेस कमेटी की बैठक में उन्होंने 58 सदस्यों के इस प्रस्ताव पर कि जिला काउन्सिल बनने तक जिला बोर्ड को जिलाधिकारी की अध्यक्षता में कोई 'एडहाक' कमेटी बनाकर समाप्त न कर दिया जाय उन्होंने दो बार जोरदार शब्दों में यह घोषित किया कि सरकार ने उक्त अस्थायी कमेटी पर अभी कोई निर्णय नहीं लिया है। अत्यन्त संकोच के साथ मैं यही कह सकता हूं कि यह अस्तव्य घोषणा थी और दिनांक 6 अक्तूबर को मंत्रि-परिषद् द्वारा किये गये निर्णय के प्रतिकूल थी। उन्होंने उक्त बयान स्पष्ट ही इसलिए दिया कि उन्हें विश्वास नहीं था कि वह प्रदेश कांग्रेस कमेटी का सहयोग प्राप्त कर सकेंगे।

इस आत्म-विश्वास की कमी के कारण वे कांग्रेसी विधायकों के खिलाफ कोई कार्यवाही करते ही नहीं, चाहे वह अनुशासनहीनता अथवा भ्रष्ट आचरण के दोषी हों। उनके ध्यान में कई उदाहरण लाये गये हैं। उन सब पर उन्होंने आंखें बन्द कर लीं।

वह सच्चे अर्थों में पलायनवादी हैं। विधान सभा के सत्र को किसी भी बहाने से स्थगित कर देते हैं जिससे कि असुविधा उत्पन्न करने वाले विरोधी सदस्यों की

उपस्थिति यथासम्भव होने ही न पाये। कांग्रेस पार्टी की बैठक तो अब असाधारण बात हो गयी है।

आम जनता से सम्पर्क के अभाव में उत्पन्न आत्म-विश्वास की कमी से वह विरोधी दलों से समीचीन व्यवहार करने में संकोच का अनुभव करते हैं। उन्होंने जून 1957 में समाजवादी सत्याग्रहियों को गिरफ्तारी से मुक्त कराने का आदेश दिया। तब तक उनका प्रस्तर मूर्तियों को हटाने तथा हिन्दी का व्यवहार सम्बन्धी आन्दोलन निष्प्राण हो चुका था। बाद में, दिसम्बर 1957 में उन्होंने डाक्टर राम मनोहर लोहिया को मुक्त कर दिया जब हाई कोर्ट द्वारा उनकी गिरफ्तारी वैधानिक करार दी गयी थी और उन्होंने सुप्रीम कोर्ट में उसकी अपील की थी। सुप्रीम कोर्ट ने राज्य सरकार के विरुद्ध इस विषय में भर्त्सनात्मक टिप्पणी दी।

एक बार प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के विधायक श्री गेंदा सिंह ने यह चुनौती दी कि अगर उनकी कतिपय मांगें नहीं स्वीकार की गयीं तो वे अनिश्चितकालीन (मृत्यु पर्यन्त नहीं) भूख हड़ताल करेंगे। मुख्यमंत्री ने मांगों को तत्परता से अस्वीकार कर दिया। जब भूख हड़ताल एक सप्ताह तक चली तब उन्हीं मांगों को स्वीकार कर लिया।

हाल के एक उदाहरण में उन्होंने विरोधी दल के नेताओं से खाद्य समस्या पर बातचीत करने से इन्कार कर दिया (किसी भी मुख्य मंत्री को बात करना स्वीकार कर लेना चाहिए था) और किसी भी सत्याग्रह आन्दोलन को कुचलने की घोषणा की। लेकिन सत्याग्रह अभी एक सप्ताह तक भी नहीं चल पाया था कि उन्होंने विरोधी दल के नेता भी त्रिलोकी सिंह से समझौता वार्ता शुरू की और उनकी मुख्य मांग खाद्य कमेटियों के गठन को मान लिया। इसका यह अर्थ निकला कि एक दो दिन समझौता वार्ता किए बिना ही एक अर्ध-शासकीय कमेटी गठित कर दी गयी। फलस्वरूप 9,000 (सत्याग्रह में) जेल गये विरोधियों को विरोधीदल को विजयी कार्यकर्ताओं के रूप में भेंट कर दिया गया। राजनैतिक हलचलों और जनता की मानसिकता का उनका मूल्यांकन बहुत कम ही सत्य साबित होता है।

वह विरोधी दलों से तालमेल बैठाने की हर कोशिश करते हैं। प्रजा सोशलिस्ट पार्टी दल में एक मजाक प्रचलित है कि उनके नेता श्री त्रिलोकी सिंह डाक्टर सम्पूर्णानन्द के अधिक निकट हैं बनिस्बत उनके कई सहयोगियों के। वह कितनी दूर तक विरोधी दलों से सामंजस्स स्थापित करने के लिए जा सकते हैं उसका एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा। गोंडा के एक विधायक श्री बलदेव सिंह कत्ल के अपराधी थे। उन्हें एक महीने तक गिरफ्तार नहीं किया गया। कांग्रेस के अध्यक्ष श्री ढेबर ने जब जून 1957 में सम्बन्धित जिले का दौरा किया। तब उनको वस्तुस्थिति बतायी गयी। श्री ढेबर ने गृहमंत्री को इस विषय में कहा। तब श्री बलदेव सिंह गिरफ्तार किये

गये। नीचे की अदालतों से उनकी जमानत नहीं हुई। हाई कोर्ट ने भी पहले जमानत अस्वीकृत कर दी। लेकिन उसी दिन दोपहर बाद सरकारी वकील ने उच्च न्यायालय को सूचित किया कि राज्य सरकार से उन्हें जमानत का विरोध न करने की सूचना मिली है। उच्च न्यायालय ने तब अभियुक्त को मुक्त करने का आदेश देते हुए राज्य सरकार के प्रति भर्त्सनात्मक टिप्पणी की। सरकारी वकील को उक्त सलाह मुख्यमंत्री के स्पष्ट आदेश पर दी गयी थी।

जन समूह के आर्थिक उत्थान के लिए कड़ा परिश्रम और सेवा की समर्पित भावना में जो किसी भी मुख्यमंत्री से अपेक्षित है डाक्टर सम्पूर्णानन्द ने ऐसे प्रचारात्मक कदम उठाये जो समस्याओं का कोई गम्भीर निराकरण नहीं। उसके कई उदाहरण हैं। समाज कल्याण विभाग और वृद्ध जनों को पेन्शन की योजना दो ऐसे उदाहरण हैं। लखनऊ में राज्य सरकार के खर्च पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन आम बात हो गयी है। इसके बारे में जितना कम कहा जाय उतना ही अच्छा है। हमारे मुख्यमंत्री के ये भावनात्मक लगाव हैं। उनके इसी दृष्टिकोण के कारण कार्यालय में काम करने के समय में आधा घंटा कम कर दिया गया है।

उनके लिए केन्द्रीय सरकार राज्य सरकार की हर अक्षमता और अभाव की ढाल है। शायद जब से वे मुख्यमंत्री बने हैं उन्होंने एक भी भाषण ऐसा नहीं दिया है जिसमें केन्द्र सरकार पर उन्होंने सीधे या परोक्ष से आक्रमण नहीं किया है।

मुख्यमंत्री को प्रशासन में दिलचस्पी हो या नहीं शासकीय मशीन को चालू हालत में तो रखना ही है। अतः सरकारी कर्मचारियों के हाथ में निदेशन का काम आ अटका है। किसी भी कांग्रेसी विधायक से अगर आप यह जिज्ञासा करें तो वह निस्संकोच उत्तर प्रदेश में पिछले चार वर्षों से व्याप्त इस स्थिति का निस्संकोच उल्लेख करेगा। एक वर्ष ही पहले जब श्री ए० एन० झा मुख्य सचिव थे प्रदेश का हर अधिकारी ही नहीं सार्वजनिक कार्यकर्त्ता भी समस्याओं के निर्णय के लिए उन्हीं का मुंह जोहते थे। सरकारी कर्मचारियों के प्रति उनके दृष्टिकोण का एक उदाहरण विचित्र है। विधान परिषद् के एक सदस्य ने उक्त अधिकारी के विरुद्ध एक बहस में कई आरोप लगाये। डाक्टर सम्पूर्णानन्द जो विधान परिषद् की बैठक में अपवाद स्वरूप ही जाते थे परिषद् में गये और वहां उन्होंने श्री झा से बड़ी विनम्रता से क्षमा की प्रार्थना की यद्यपि आरोप निराधार नहीं थे और कतिपय आरोपों को सम्बन्धित अधिकारी भी अस्वीकार नहीं करता।

उन्होंने इस तरह नौकरशाही की शक्ति और विशेषाधिकारों को बढ़ावा ही नहीं दिया है बल्कि भ्रष्टाचार के मामलों में भी सम्यक् जांच करने का साहस नहीं दिखाया है। गृह निर्माण के 'स्कैन्डल' में अफसरों ने नगर महापालिका नियमानुसार प्लैन स्वीकृत कराये बिना ही मकानों का निर्माण नहीं कराया, उसकी जमीन की

खरीद में भी भ्रष्टाचार किया और उसी तरह सीमेंट, लोहा आदि को प्राप्त करने में अनियमितताएं कीं। उच्चतम अधिकारियों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के मामले उनके (मुख्यमंत्री के) नोटिस में लाये गये। वे या तो बिलकुल आरोप मुक्त कर दिये गये या उन्हें हल्की सजा के साथ दोष-मुक्त कर दिया गया। शायद इन मामलों में उनका दृष्टिकोण नैतिकता की कमी के कारण है या वे स्वयं अपने में नैतिक साहस जुटा नहीं पाते।

पक्षपात के मामलों की लिस्ट लम्बी है। तथ्य इतने ज्वलंत हैं कि वे हर व्यक्ति की दृष्टि में आ जाते हैं अथवा उन्हें अनायास आकर्षित कर लेते हैं। एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा। एक भूतपूर्व विधायक श्री रामेश्वर सहाय प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में विशेष अधिकारी, उनके द्वारा, जब सन् 1946-51 में वह शिक्षा मंत्री थे, नियुक्त किये गये थे। उनके कार्य क्षेत्र में पाठ्यपुस्तकें भी थी। इस सम्बन्ध में उनके खिलाफ भ्रष्टाचार के गम्भीर आरोप लगे जिससे उन्हें पद से हटा दिया गया और 1952 में विधान सभा के लिए चुनाव लड़ने का उन्हें कांग्रेस का टिकट भी नहीं दिया गया। वही श्री सहाय डाक्टर सम्पूर्णानन्द के मुख्यमंत्री बनते ही राजनैतिक पेंशनों के विशेष कार्याधिकारी नियुक्त किए गए। प्रशासन का स्तर उक्त नियुक्ति के दिन ही गजों नीचे गिर गया। मैं दूसरे उदाहरण इसलिए प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं कि उनमें नामों का उल्लेख होगा जो सर्वथा शिष्ट बात नहीं मानी जायेगी।

जांति-पांति पर उनके दृष्टिकोण अत्यन्त पुराने हैं यद्यपि जांति-पांति हमारे राष्ट्रीय और सार्वजनिक जीवन का सबसे बड़ा कलंक रहा है। एक उदाहरण ही पर्याप्त होगा। सन् 1954 में जब पंत जी मुख्यमंत्री थे कांग्रेस पार्टी की कई उपनिर्वाचनों में लगातार हार हुई थी। मंत्रियों की एक बैठक उनके कारणों के विश्लेषण के लिए की गयी। डाक्टर सम्पूर्णानन्द ने एक नोट प्रस्तुत किया जिसमें उनके विचार उल्लिखित थे। उस नोट में सामाजिक और आर्थिक समस्याओं पर ऐसे विचार और दृष्टिकोण प्रस्तुत किये गये थे जो किसी भी सार्वजनिक कार्यकर्त्ता के लिए प्रतिष्ठा-जनक नहीं थे। मार्च 1957 में जाति का उपयोग उनके अपने चुनाव में किस प्रकार किया गया वह वाराणसी के लोगों को अभी भी याद होगा।

मुख्यमंत्री अपने सहयोगियों से भी उचित व्यवहार करना नहीं जानते। उनसे वह अपवाद रूप में कभी कदा ही सलाह मशविरा करते हैं और हमेशा उन्हें गलत ताड़ना देते हैं। उनके सहयोगियों और उनके बीच सद्भावना या सौहार्द्र का वातावरण है ही नहीं। वह न उन्हें प्रेम से या सार्वजनिक महत्त्व के प्रश्नों पर अपनी जानकारी से आकृष्ट कर पाते हैं। वह न उन्हें कड़ा परिश्रम करने की प्रेरणा दे पाते हैं न ही साधारण कार्यकर्त्ताओं को उत्साहित कर पाते हैं।

वह क्या चाहते हैं इसे स्वयं नहीं जान पाते हैं और अपने निर्णय से भी मुकर

जाते हैं। मंत्रिमंडल के निर्णय भी इसी तरह बिना उनकी सहमति के उलट दिए जाते हैं। कई उदाहरण ऐसे हैं जिनमें बिना सहयोगियों से राय लिए ही उन्होंने फैसले कर लिए। सोशलिस्ट सत्याग्रहियों को छोड़ना, श्री गेंदा सिंह की मांगों को स्वीकार कर लेना तथा डाक्टर लोहिया की रिहायी में उन्होंने किसी से भी सलाह नहीं की। खाद्य कमेटियों के गठन के बारे में उन्होंने पार्टी को आश्वस्त किया था कि उक्त विषय पर कोई समझौता वार्ता नहीं हो रही है और न विचार हो रहा है। फिर भी समझौता वार्ता हुई और एक खाद्य कमेटी का गठन किया गया। प्रान्तीय रक्षा दल को तोड़ देने के मंत्रिमंडल के निर्णय को, जो समाचार पत्रों द्वारा घोषित भी कर दिया गया था, उन्होंने विधान सभा में अपने एक बयान से पलट दिया। विधान सभा की बैठकों की तारीखें बिना मंत्रि-परिषद् की सहमति के अनेक बार बदल दी गयीं। पंत जी के समय मंत्रिमंडल द्वारा पंचायत सेक्रेटरी और लेखपाल के संबंध में नवम्बर 1953 में लिये गये एक निर्णय को अब तक अमल में नहीं लाया गया है। पंत जी के समय में उसे इसलिए नहीं कार्यान्वित किया गया था कि पंचायतों के चुनाव नहीं हुए थे। वह ग्रामस्तर पर इससे उत्पन्न भ्रम तथा वितन्डा को समझ ही नहीं पाते।

हाल ही में 9 फरवरी को वह बिना किसी नोट या प्रस्ताव के मंत्रिमंडल से मौखिक रूप से बिरला की अलम्यूनियम फैक्टरी को रिहांड से 51,000 किलोवाट बिजली देने की स्वीकृति चाहते थे। यह बैठक की विषय सूची में भी नहीं था। मैं बिजली का मंत्री हूं मगर मुझसे भी परामर्श नहीं किया गया था। रिहांड दाम की लागत 68 करोड़ रुपये होगी। यह कुल 1,03,000 किलोवाट बिजली का उत्पादन करेगा। इस तरह लगभग 23 करोड़ रुपये का उपहार एक व्यक्ति को मुख्यमंत्री अपनी ओर से मंत्रिपरिषद् की मौखिक स्वीकृति पर देना चाहते थे। इस बारे में यह जानना जरूरी है कि 40,000 किलोवाट रेलवे के लिए और 10,300 किलोवाट मध्य प्रदेश के लिए पहले से ही स्वीकृत था। इस तरह कुल 1,500 किलोवाट बिजली ही सर्व साधारण के इस्तेमाल के लिए बाकी रहती। (यह स्थिति कम से कम तीन साल रहती जब 15,000 किलोवाट रेलवे से वापिस मिलता)। ऐसी स्थिति तब उत्पन्न की गयी जबकि मुख्यमंत्री ने रिहांड डैम को योजना आयोग और केन्द्र से सर्वसाधारण की उन्नति के लिए एक विशेष वाद बिन्दु बनाया था।

राज्य की वित्तीय स्थिति प्रायः दिवालिया है। बिना काम के पदों का इतना सृजन हो रहा है कि नौकरशाही की संख्या अचानक बेहद बढ़ गयी है। मेरा मन्तव्य इससे साफ हो जाएगा कि सन् 1959-60 के लिए 121 करोड़ रुपये के बजट प्राविधान में से पिछले अनुभवों से इसमें 118 करोड़ से अधिक खर्च होने की सम्भावना नहीं— 46.80 करोड़ रुपया वेतन और भत्ता आदि में व्यय होगा। 2.43 करोड़ पेन्शन में,

19.19 करोड़ ऋण 'चार्जेज' में खपेगा। कन्टेन्सी का 2.70 करोड़ कार्यालय भवनों और उनके रखरखाव तथा फर्नीचर आदि पर बढ़ते हुए सरकारी कर्मचारियों के कारण व्यय होगा। इस तरह (118—71) 47 करोड़ अथवा कुल धन का 40 प्रतिशत राज्य के विकास कार्यों पर खर्च किया जा सकेगा।

नौकरशाही की संख्या में वृद्धि और अनुमानित खर्च की यह स्थिति इसलिए सम्भव हुई है कि मुख्यमंत्री सरकारी धन को लुटाने की मानसिकता में पड़ गये हैं। वित्तीय विभाग के सुझावों पर ध्यान नहीं दिया जाता है और उसे अधिकतर 'बाई पास' किया जाता है। वित्तीय साधनों पर मुख्यमंत्री की दिलचस्पी का इससे अन्दाजा लग जायेगा कि खर्च में मितव्ययिता के तरीकों की जांच की एक कमेटी ने, जो सन् 1954 में श्री हाफ़िज़ मुहम्मद इब्राहीम की अध्यक्षता में गठित की गयी थी, अपनी रिपोर्ट नहीं प्रस्तुत की। मेरे इस विषय में सवाल करने पर सन् 1957 में वह रिपोर्ट आयी। न मुख्यमंत्री, न ही वित्त मंत्री को, इस अनावश्यक देरी की कोई चिन्ता थी।

राज्य तथा प्रशासन और कांग्रेस की प्रतिष्ठा, मुख्य कार्यकारी सभासद तथा नेता के वक्तव्यों पर जनता का जो विश्वास होता है, उस पर आधारित रहती है। लेकिन यह कहने के लिए मुझे माफ किया जाय कि डाक्टर सम्पूर्णानन्द की कार्य पद्धति से वह प्रतिष्ठा दिनों-दिन गिरती जा रही है। डिस्ट्रिक्ट काउन्सिल के एक उदाहरण का पहले उल्लेख किया जा चुका है। वस्तुतः यही मेरे सन् 1957 में दिए गये त्यागपत्र का तात्कालिक कारण था।

फिर जिस प्रकार श्री अलगू राय जी शास्त्री को विधान परिषद् का चेयरमैन होने के मामले का निस्तारण किया वह विचित्र था। शास्त्री जी को अपने पूरे समर्थन का उन्होंने विश्वास दिलाया था, कार्यकारी चेयरमैन के लिए उनका नाम भी राज्य-पाल को भेज दिया था। शास्त्री जी उनके शब्दों और व्यवहार से आश्वस्त हो गए थे। उसके बाद जिस प्रकार उन्होंने इस मामले को निपटाया वह शायद शास्त्री जी आपको बता ही चुके हैं। एक साधारण राहगीर भी अपने किसी दोस्त को उस प्रकार नीचा नहीं दिखाता जैसा डाक्टर सम्पूर्णानन्द ने शास्त्री जी के साथ व्यवहार किया।

सवाल उठता है कि श्री एस० पी० जैन के लिए इतनी सदाशयता किस तरह उत्पन्न हुई। भिन्न-भिन्न प्रकार की बातें कही जा रही हैं, उनसे मेरा कोई सरोकार नहीं। उसी प्रकार मैं दूसरे लोगों के बारे में कही जा रही बातों का भी जिक्र नहीं करूंगा। वह बातें हर एक की जीभ पर हैं और ऐसी हैं कि हर कांग्रेसमैन को गर्दन नीचे कर लेनी पड़ती है।

मैंने मुख्यमंत्री के दृष्टिकोण, दिलचस्पी और योग्यताओं का ही जिक्र किया है। मैंने उस दशा को नहीं अंकित किया है जिसमें प्रशासन की भयंकर अधोगति हो गयी है। लेकिन केवल पुलिस विभाग के संदर्भ से सब स्पष्ट हो जाएगा। शान्ति और

सुव्यवस्था इतनी खराब कभी नहीं थी। पिछले चार पांच वर्षों में चार विधायकों का कत्ल हो चुका है। आज की अपेक्षा अंग्रेजों के दिनों में सुरक्षा कहीं अधिक थी। उसके कारण बिलकुल साफ हैं। ऐसा डाक्टर सम्पूर्णानन्द के कारण हुआ जो 1951 से 1961 तक गृह मंत्री रहे। उसके बाद उन्होंने यह चार्ज पंडित कमलापति त्रिपाठी को सौंपा। एक कनिष्ठ अधिकारी श्री एम० एम० माथुर को छः डी० आई० जी० के ऊपर आई० जी० बनाया गया। एक ऐसे अधिकारी को भी डी० आई० जी० बनाया गया जिन्हें पहले उस पद के लिए आयोग्य ठहरा कर उनके नीचे वालों को ऊपर किया जा चुका था। इन परिस्थितियों में कड़ी मेहनत और ईमानदारी की बाबत अपील पर पुलिस कर्मचारी कोई ध्यान ही नहीं देते।

मैंने आपको ये पंक्तियां बहुत भावनात्मक उद्वेग से लिखी हैं। लेकिन मेरे द्वारा लिखे गये हर बयान की पुष्टि उदाहरण सहित आप जब चाहेंगे आपके समक्ष प्रस्तुत की जायेगी।

उत्तर प्रदेश की दशा आज यही है। सम्भव है कि मेरे एकाध उदाहरण अक्षरशः सत्य न साबित हों, यह भी हो सकता है कि मैंने उन पर अनावश्यक जोर दिया है। लेकिन आम तौर पर सही स्थिति यही है। कांग्रेस और उसकी सरकार की शोहरत आज उत्तर प्रदेश में मिट्टी में मिल गयी है। आंख मूंद लेने से इनका सुधार सम्भव नहीं होगा। राज्य में (कुशल) नेतृत्व की नितान्त कमी है। मैं आप पर—आप जिस पर पूरे देश के शासन और कांग्रेस की पूरी जिम्मेदारी है—यह छोड़ता हूं कि जो भी आप समीचीन और सार्वजनिक हित में समझें, वह करें।

दो बातें और। उस दिन आपने संयमित स्वर से यह कहा था कि आपको हर मंत्री के विरुद्ध शिकायतें मिली हैं। शिकायत झूठ भी हो सकती है और सच भी। वह निर्णय की असावधानी से भी हो सकती है अथवा सार्वजनिक आचरण के उचित स्तर से बहुत नीचे की हो सकती है। मैं केवल यह कह सकता हूं कि व्यक्ति विशेष को (आरोपों के खिलाफ) अपने बचाव का, निर्णय के पहले, अवसर देना समीचीन होगा। राजनीति में प्रशासन की तरह हर सुधार की चेष्टा को सत्ता हथियाने का संघर्ष बताया जा सकता है। मैं यह ही कह सकता हूं कि जब 1957 में मैंने त्यागपत्र दिया तब मेरे मन में व्यक्तिगत लाभ हानि का ध्यान ही नहीं था। (मैंने अपना त्यागपत्र वापस नहीं लिया था; केवल डाक्टर सम्पूर्णानन्द ने उसके अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया था।) मैंने किसी से न कोई पैक्ट किया है न ही किसी से कोई हमारी साजिश (डील) है। परिस्थितियों से विवश होकर कुछ लोग हमारे मत के पक्षपाती हो गये हैं। इस मत को मैं डाक्टर सम्पूर्णानन्द के मुख्यमंत्री बनने के पहले से मानता आया हूं फिर भी अगर कांग्रेस का यह हित हो अथवा आपकी यह इच्छा हो तब मैं विधान सभा की सदस्यता भी त्यागने को तैयार हूं। एक बार भी मुझे यह विश्वास हो जाय कि हम

आजादी के पहले जैसा महल बनाना चाहते थे वैसा उत्तर प्रदेश में नहीं बना सकते और आजादी के पहले जिन सपनों को पालते थे उन्हें सच नहीं कर सकते तो सार्वजनिक जीवन के लिए मेरे मन में कोई उत्साह नहीं रह जाएगा और मैं उससे शीघ्रातिशीघ्र अलग हो जाऊंगा।

शुभकामनाओं सहित,
मैं हूं आपका,
चरण सिंह

पं० जवाहर लाल नेहरू,
प्रधानमंत्री भारत सरकार,
नई दिल्ली।

चरण सिंह

कैम्प यू० पी० निवास
नई दिल्ली
8-1-1977

प्रिय इन्दिरा जी,

यह पत्र 30 दिसम्बर को लिखा गया था किन्तु आपके पास इसे आठ (8) जनवरी को भेज रहा हूं क्योंकि मुझे इस बात में संदेह था कि आपके पास इसे भेजना लाभकारी साबित हो सकेगा।

'समाचार' एजेन्सी की एक रिपोर्ट के अनुसार आपने अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा संचालित राष्ट्रीय तथा सामाजिक शोध संस्थान के प्रशिक्षण शिविर में विगत 23 दिसम्बर को अपने भाषण में निम्नलिखित दो बातों का उल्लेख किया—

'कांग्रेस में स्वेच्छाचारी नेताओं की एकतंत्रीय कार्यप्रणाली से कई बार विभाजन हो चुका है। प्रायः हर राज्य में एक ऐसा नेता रहा है।

कतिपय राज्यों में किसी आदर्श के लिए नहीं प्रत्युत व्यक्तिगत दुराकांक्षाओं से उत्पन्न पार्टीबन्दी के कारण विभाजन हुआ है। इस बारे में श्रीमती गांधी ने उत्तर प्रदेश का नाम लिया जहाँ, उनके मुताबिक, चौधरी चरण सिंह ने बिलकुल व्यक्तिगत कारणों से कि वह मुख्यमंत्री बनें भारतीय क्रांति दल को बनाया।

उपरोक्त कदापि सच नहीं और मुझे लगता है कि आपने जान-बूझ कर मेरे साथ ज्यादती की है। सच तो यह है कि आपने पहले भी किसी विदेशी पत्रकार से (मेरे पास अभी उसका संदर्भ नहीं है) भेंट में कहा था कि मैं तथा पश्चिमी बंगाल के श्री अजय मुखर्जी सच्चे कांग्रेसी होते हुए भी कांग्रेस से इसलिए अलग हुए कि हमारे राज्यों में कांग्रेस के कर्णधार हमें काम नहीं करने दे रहे थे। कोई नहीं जानता कि आप अपनी दोनों उक्तियों में किसको सच मानती हैं लेकिन घटनाक्रम के उल्लेख से यह प्रमाणित हो जाएगा कि मैंने मुख्यमंत्री बनने के लिए कांग्रेस नहीं छोड़ी बल्कि इसलिए छोड़ी कि मेरे साथ विश्वासघात किया गया।

सन् 67 के यू० पी० विधान सभा के लिए आम चुनाव में कांग्रेस को कुल 198 सीटें मिलीं जब कि विरोधी दलों को कुल मिला कर 227 सीटें मिलीं। विरोधी दलों ने अपने बीच किसी एक को नेता बनाने पर सहमति न होने के कारण मुझसे उस उत्तरदायित्व को संभालने के लिए आग्रह किया। मेरे सहयोग से विरोधी दलों की संख्या 275 हो जाती। लेकिन मैंने उनका अनुरोध अस्वीकार कर दिया और उन्हें साफ बता दिया कि मेरा इरादा कांग्रेस छोड़ने का नहीं।

कुछ दिनों के बाद जब कांग्रेस विधायक दल के नेता पद के चुनाव की बैठक बुलायी गयी तब श्री सी० बी० गुप्ता के विरुद्ध मैंने भी प्रत्याशी होने की घोषणा की।

आपने अपने दो विश्वस्त सहयोगियों श्री उमाशंकर दीक्षित और श्री दिनेश सिंह को, मुझे समझा-बुझा कर नेता पद का चुनाव न लड़ने को मनाने के लिए लखनऊ भेजा। जिससे श्री गुप्त निर्विरोध नेता चुने जांय। इसका कारण बिलकुल साफ था।

उनके बहुत आग्रह करने पर मैंने नेता पद के प्रत्याशी के रूप में अपना नाम ही नहीं वापिस ले लिया मैंने श्री गुप्त के नाम को प्रस्तावित करना भी स्वीकार किया। मेरी केवल एक शर्त थी जिसे उक्त दोनों संदेशवाहकों ने कितने कांग्रेस जनों के समक्ष स्वीकार कर लिया। वह शर्त यह थी कि पिछले मंत्रिमंडल के कम से कम दो व्यक्तियों को जिनकी ख्याति अच्छी नहीं थी मंत्री नहीं बनाया जाय और उनके स्थान पर दो नये यशस्वी लोग लिए जांय। मार्च 8 को श्री सी० बी० गुप्ता का चुनाव निर्विरोध हो गया। उत्तर प्रदेश के, जहां के संसद में सर्वाधिक संख्या में सदस्य होने के नाते श्री गुप्त ने आपके और मोरारजी भाई देसाई के बीच (प्रधानमंत्री पद के लिए) समझौता कराने में सफलता प्राप्त की। 13 मार्च को आपका मंत्रिमंडल बन गया। उसके दूसरे दिन श्री गुप्त ने अपनी मंत्रिपरिषद् के सदस्यों के नाम राज्यपाल को भेजे। उनमें मेरा नाम था। लेकिन मैंने मंत्रिपरिषद् की सदस्यता इसलिए अस्वीकार कर दी कि उसमें सर्वश्री दीक्षित और दिनेश सिंह से समझौते के विपरीत दो पुराने कुख्यात लोगों का भी नाम था तथा वायदे के अनुसार उनके स्थान पर नये लोग नहीं लिए गये थे। श्री गुप्त का कहना था कि समझौते में वे भागीदार नहीं थे।

मार्च 17 को श्री दीक्षित लखनऊ में मुझसे मिले और बोले कि श्री गुप्त से बात कर वे मुझे बतायेंगे। वह दुबारा नहीं आये। श्री दिनेश सिंह ने टेलीफोन पर सूचित किया कि वह 31 मार्च को लखनऊ पहुंचेंगे। उन्होंने विश्वास दिलाया कि उनका वायदा पूरा होगा। मैंने उन्हें बताया कि विधान सभा की बैठक 1 अप्रैल से स्थगित हो जायेगी। अतः वे हर हालत में पहुंचे जरूर। मगर श्री दीक्षित की तरह वे भी वादा करके नहीं आये। उसी दिन 11.30 बजे रात को उनसे सम्पर्क स्थापित किया गया जब उन्होंने बताया कि वे लखनऊ इसलिए नहीं आये कि दूसरे पक्ष को उनका बीच में पड़ना पसन्द नहीं था। उन्होंने कहा कि मैं जो चाहूं करूं। मैंने इसलिए विधान सभा में दूसरे दिन घोषित किया कि मैं कांग्रेस छोड़ रहा हूं।

जब आपको या आपके विश्वस्तों को मेरे कांग्रेस को छोड़ने के परिणाम का आभास हुआ तब नेशनल हेराल्ड में जिसके श्री दीक्षित प्रबन्धक थे, उनके एक सह-योगी और प्रतापगढ़ के, जहां के श्री दिनेश सिंह निवासी हैं, एक प्रमुख कांग्रेसी मुझसे उसी शाम मेरे निवास पर अलग-अलग मिले। उन्होंने मुझे सुझाव दिया कि मैं कांग्रेस

पार्टी का मुख्यमंत्री बनूं और कांग्रेस में लौट आऊं। मैंने उनसे कहा कि जो हो चुका है उसमें मेरे लिए उनके प्रस्ताव को स्वीकार करना सम्भव नहीं।

अगर मनुष्य के व्यवहार से सत्य का एकदम लोप नहीं हो गया तो श्री दीक्षित और श्री दिनेश सिंह अपने रोल के बारे में मेरा समर्थन करेंगे।

यद्यपि इतने विश्वासपूर्वक दिये गये आश्वासन को पूरा न करना कांग्रेस से मेरे सम्बन्धों का तात्कालिक अति शिथिल बन्धन साबित हुआ तथापि मेरे और कांग्रेस के कर्णधारों के बीच सन् 1959 की जनवरी में हुए नागपुर सेशन से ही सैद्धांतिक गंभीर मतभेद होने लगे थे। मैंने सहकारी खेती और राज्य द्वारा खाद्यान्नों के व्यापार के प्रस्तावों का जोरदार विरोध किया था। इससे पंडित नेहरू बहुत नाराज़ हुए जिससे उत्तर प्रदेश की राजनीति में कुछ ऐसे निर्णय लिये जाये जो अन्यथा नहीं लिए जाते।

उन सिद्धान्तों के विषय में मैंने 1960 में देश की आर्थिक समस्याओं और नीति पर एक पुस्तक लिखी थी। उसका पुनरीक्षित संस्करण 1962 में दूसरी पुस्तक के नाम से प्रकाशित हुआ। अध्यक्ष कांग्रेस होने के नाते आपके पास मैंने उसकी एक प्रति भेजी थी। उसमें बड़े फार्मों के स्थान पर छोटी-छोटी फार्म इकाइयों की वकालत की थी जो सेवा सहकारिता से जुड़े हों। वही हमारी परिस्थितियों के अनुकूल और लाभकारी होंगे। यह ठीक है कि कृष्योत्तर विकास हमारे जीवन-स्तर को ऊंचा बनाने के लिए आवश्यक हैं लेकिन जीवन-स्तर को ऊंचा करना तब तक सम्भव नहीं हो पायेगा जब तक कृष्योत्तर विकासों के साथ-साथ, अगर उससे पहले नहीं, कृषि का भी सम्यक् विकास हो। इस ध्येय की पूर्ति के लिए उद्योगों में भी, चंद अपवादों को छोड़कर, घरेलू और कुटीर उद्योगों को प्राथमिकता देनी होगी। अगर जनसंख्या की वृद्धि नहीं रोकी गयी तो आर्थिक विकास के यह सभी प्रयत्न असफल हो जायेंगे। साथ ही देश की तब तक कोई उन्नति संभव नहीं जब तक हमारे सामाजिक और आर्थिक दृष्टि-कोण में गांधीवादी सिद्धान्तों और प्रक्रिया को नहीं अपनाया जाता। भारतीय क्रान्ति दल के चुनाव घोषणा पत्र में इन सबको सन्निहित किया गया है।

मुझे इस बात से उत्साहवर्धक संतोष मिला है कि हमारे बहुत कार्यक्रमों और विचारों को दूसरे राजनैतिक दलों और नेताओं ने अपने लिए स्वीकार किया है।

यहां यह उल्लेख भी असंगत नहीं होगा कि मैंने सन् 1947 से ही लगातार कांग्रेसी नेताओं द्वारा राजनीतिक तथा प्रशासनिक भ्रष्टाचारों पर रोक न लगा पाने पर क्षोभ व्यक्त किया है। मेरे लिखे अनेकानेक नोट और पत्र इसके साक्षी हैं। मेरे प्रयत्नों को किन्तु बहुत कम सफलता मिली। इसीलिए हमारे घोषणापत्र में भ्रष्टाचार के उन्मूलन और स्वच्छ प्रशासन को सर्वोपरि प्राथमिकता दी गयी है।

क्या उपरोक्त से यह प्रकट नहीं होता कि भारतीय क्रान्ति की स्थापना व्यक्ति-

गत नहीं सैद्धान्तिक कारणों से हुई। मुझे अगर मुख्य मंत्री बनने के लिए ही कांग्रेस छोड़नी थी तब मैं अपने सहयोगियों समेत, बिना कोई खतरा उठाये, महीना भर पहले ही कांग्रेस से बाहर चला गया होता।

अगर मेरे कदम सार्वजनिक हित में नहीं उठाये गये होते और अगर भारतीय क्रान्ति दल सिद्धान्तों के बल पर खड़ा नहीं हुआ होता तो साधनों के अभाव में विशेष कर चुनाव में तथा चुनाव के बाद दल बदल कराने में जो अपरिहार्य बन गये हैं तथा सन् 1970 से कांग्रेस जिसे संगठित रूप में करती चली आई है हमारा दल जीवित नहीं रहा होता।

मेरे आचरण का मूल्यांकन जो आप साधारण जनता को प्रस्तुत करना चाहती हैं वह अपूर्ण होगा अगर एक और महत्त्वपूर्ण तथ्य को ध्यान में न रखा जाय। आपको याद होगा कि आप जनवरी 3, 1968 को वाराणसी में इंडियन साइन्स कांग्रेस के वार्षिक सम्मेलन की अध्यक्षता करने वाली थीं। संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी की स्थानीय शाखा ने जो तब एक शक्तिशाली संगठन था, आपको गिरफ्तारी में लेकर जनता की अदालत के समक्ष मुकदमे की कार्यवाही करने का निश्चय किया। उन्होंने एक सार्वजनिक सभा करके तथा समाचार पत्रों में विज्ञापित करके अपने मन्तव्य की घोषणा की। संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी तब मेरी सरकार में शामिल एक घटक थी जिसके विधान सभा में 45 सदस्य थे। फिर भी गैर कांग्रेसी सरकार का अध्यक्ष होते हुए भी मैंने आपके उक्त दौरे में व्यक्तिगत दिलचस्पी ली और आपके साथ वाराणसी गया। मेरे हुक्म से श्री राजनारायण एम० पी० तथा दूसरे प्रमुख कार्यकर्ता और एस० एस० पी० के विधायक गिरफ्तार कर लिये गये तथा आपको पण्डाल तक न जाने देने पर आमादा विराट् प्रदर्शनकारी भीड़ को पुलिस ने लाठी चार्ज करके तितर-बितर किया। आपके दल के उत्तर प्रदेश के अध्यक्ष ने, जो वाराणसी के निवासी हैं और आपकी सरकार के अब सदस्य हैं, इतना नैतिक साहस भी नहीं दिखाया कि वे एस० एस० पी० की भर्त्सना प्रेस या सार्वजनिक सभा द्वारा करते।

एस० एस० पी० क्रोध से उबल पड़ी। मुझे अपनी कार्यवाही के नतीजे का शुरू से ही अन्दाजा था। मैंने विधान सभा का सत्र शुरू होने से एक दिन पहले ही 17 फरवरी को अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। मैंने प्रजातांत्रिक भारत के प्रधान मंत्री की प्रतिष्ठा सुरक्षित रखने के लिए जैसा उचित समझा वैसा किया।

कांग्रेस से मैंने इसलिए त्यागपत्र दिया कि आपने सही काम न किया न ही कराया, मुख्यमंत्री पद से मैंने इसलिए इस्तीफा दिया कि मैंने सही और उचित कार्य किया।

अगर मुख्यमंत्री पद को मैंने इतना ऊंचा समझा होता कि उसके लिए मैंने जिस कांग्रेस की छाया में काम किया उसे छोड़ दिया तो मैंने वह खतरा नहीं मोल

लिया होता जिसे मैंने उठाया। मैं इसके विपरीत, येन केन प्रकारेण उससे चिपका रहता। मैंने दो बार पहले अगस्त 1967 और दिसम्बर 1967 में भी त्यागपत्र देने को स्वीकार नहीं किया होता जब कि मुझे लगा था कि मेरे सहयोगियों ने सार्वजनिक हित के विरुद्ध काम किया। जो उच्च राजनैतिक पद को सेवा का माध्यम नहीं बल्कि स्वयं में लक्ष्य मानते हैं तथा उसे सभी सिद्धान्तों से ऊपर रखते हैं उनके आचरण निस्संदेह भिन्न प्रकार के होते हैं।

सारांश यह है कि उन दो पैराज़ का जिन पर मैंने उपर्युक्त टिप्पणी की है प्रेस में व्यापक प्रचार हुआ है। वह उसी प्रकार का चरित्र हनन है जैसा श्री अशोक मेहता को सम्बोधित अपने पत्र दिनांक 23 दिसम्बर में आपने किया है। सच्चाई से अनजान लोग बिलकुल गलत धारणाओं को पाल बैठते हैं। लेकिन मुझे मालूम है कि मेरे लिए कोई तरीका सुलभ नहीं क्योंकि प्रेस आपके वक्तव्य के प्रतिरोध में कुछ भी छापना नहीं चाहेगा। मैंने आपको केवल रिकार्ड दुरुस्त रखने के लिए लिखा है।

शुभ कामनाओं सहित,
आपका,

चरण सिंह

श्रीमती इंदिरा गांधी,
प्रधान मंत्री,
भारत सरकार,
नई दिल्ली।

लोकदल की राष्ट्रीय परिषद् में चौधरी चरण सिंह का अध्यक्षीय भाषण

प्रिय साथियो

हमारी राष्ट्रीय परिषद् (नेशनल काउन्सिल) का अधिवेशन करीब साढ़े तीन साल के बाद हो रहा है। हमें इसका खेद है कि कम-से-कम हर साल हम इसकी बैठक नहीं बुला सके। इसमें आप सम्मानित प्रतिनिधियों का व्यक्तिगत रूप से उतना नुकसान नहीं हुआ है जितना कि आपके राजनैतिक दल का हुआ है। यह कोई रस्मी बात नहीं कि आप जो कई तरह के अभाव तथा कठिन परिस्थितियों में काम करने वाले हैं उनसे विचार-विनियम करके ही संस्था प्राणवान एवं सजग रह सकती है।

हम जिन कारणों-वश अपने कर्तव्य-पालन में असमर्थ रहे हैं उनको आप अच्छी तरह जानते ही नहीं, उन्हें आपने भी हमारे साथ-साथ भुगता है। इसकी कहानी पुरानी हो गई, उसे दुहराने की कोई जरूरत नहीं है।

आपको याद है कि जब पिछली बार हम इकट्ठे हुए थे तो पृष्ठभूमि (बैक-ग्राउण्ड) उससे पहले हुए 1980 के आम-चुनावों की थी। आज हम उस समय मिल रहे हैं जब कि आगामी संसदीय चुनावों की आहट सुनायी देने लगी है। कुछ लोगों का अनुमान है कि ये चुनाव 2-3 महीने के बाद ही अगले मई-जून में होंगे परन्तु अधिक-तर लोग यह समझते हैं कि निर्धारित समय पर यानी 1985 की जनवरी के पहले पखवाड़े में ही होंगे। चाहे जो भी हो, दोनों अनुमानों में फर्क केवल 6-7 महीने का है और हमें यह मान कर काम करना है कि चुनाव अब दरवाजे पर दस्तक दे रहें हैं और हमें उनकी आगवानी के लिए अभी से बिलकुल तैयार रहना है। इस अधिवेशन की सबसे बड़ी भूमिका यही होगी कि हमारे साथी यहां से इस उत्साह एवं संकल्प को लेकर जायें जिससे हमारी संस्था लोगों की आशाओं के अनुरूप चुनावों में अपना कर्तव्य निभा सके। यह हमारी ही धारणा नहीं बल्कि अन्य लोगों की भी है कि हमारा जना-धार काफी सबल एवं व्यापक है। हमें जहां इस बात पर स्वाभाविक गर्व है वहीं हमें इसका भी कम अफसोस नहीं है कि हमारा संगठन कई जगहों में जैसा मजबूत तथा जनता की आकांक्षाओं के अनुरूप होना चाहिए, वैसा नहीं है। निस्संदेह अगर ठोस परिणाम प्राप्त करने में हम असफल रहे हैं तो उसका कारण ज्यादातर हमारी संगठनात्मक कमजोरियां ही रही हैं, न कि जनता का कोई दोष। इसलिए हमें इस

अधिवेशन में अपने विधान में कुछ बुनियादी तथा दूरगामी संशोधन के बारे में भी विचार करना पड़ेगा जिससे संस्था का आकार-प्रकार बदले और हमारे सदस्य नाम-मात्र के सदस्य न रह कर ठोस व क्रियाशील कार्यकर्त्ता के रूप में नजर आयें। इस बीच मेम्बरसाजी (सदस्यता अभियान) में शिथिलता के पीछे सदस्यता के आधार के सम्बन्ध में हमारा असमंजस रहा है। यह मामला दरअसल इतना पेचीदा है कि कई पहलुओं से बहुत गहराई में जा कर हमें इस पर निर्णय लेने पड़ेंगे। इसलिए इस पर विचार करने के बाद आप संभवतः यह चाहेंगे कि इस मामले को एक कमेटी के सुपुर्द किया जाय जो इस पर एक महीने में अपनी सिफारिशें पेश करे।

पिछली बैठक पर चुनाव में विपरीत परिणाम की कुछ काली छाया थी, जो अनिवार्य थी, किन्तु इस बैठक का वातावरण कुछ दूसरा है। हम यह तो नहीं कह सकते कि 1977 की हवा बहने लगी है और वैसा ही क्रान्तिकारी परिवर्तन अवश्यम्भावी है। किन्तु इतना तो स्पष्ट है कि संभावनायें उससे किसी प्रकार कम नहीं बल्कि अधिक हैं। और अगर उनके विकसित होने में कभी-कभी संदेह होता है तो केवल इसलिए कि विरोध पक्ष का दृष्टिकोण अभी तक 1977 की तरह नहीं बन पाया है और इसलिए वह पूर्व की भांति संगठित नहीं हो पाया है। एक प्रकार से देखा जाय तो शासक दल के प्रति जनता में असंतोष तथा आक्रोश 1977 के मुकाबले में अधिक ही नहीं, ज्यादा व्यापक भी है। 1977 की चुनावी-क्रान्ति तो बहुत कुछ विंध्याचल से हिमालय तक ही सीमित रह गई थी। इस बार इसके देशव्यापी होने के बहुत प्रबल आधार हैं। हाल में आन्ध्र प्रदेश एवं कर्नाटक के चुनाव और उनसे पूर्व हरियाणा एवं हिमाचल प्रदेश के चुनावों में इसका पूर्वाभास हमारे सामने आ चुका था। अभी हाल में हुए उप-चुनावों के परिणाम भी इस प्रवृत्ति के पोषक के रूप में सामने आए हैं और जहां उन्होंने सत्तारूढ़ दल के मनोबल को नीचा किया है वहीं पर्याप्त सफलता नहीं मिलने के बावजूद प्रतिपक्ष की आशा-आस्था को कुछ सबल तथा दृढ़ ही किया है।

हम लोगों को इस बात का संतोष है कि लोक दल प्रतिपक्ष की एकता के लिए पूरी तरह समर्पित है और तरह-तरह के लांछन तथा झूठे प्रचारों के बावजूद इस दिशा में हमारे प्रयत्न निरन्तर जारी हैं। इससे भी हमारा उत्साह बढ़ता है कि प्रतिपक्ष में पुराने वैमनस्य बहुत कुछ दूर हुए हैं और पारस्परिक कटुता बहुत कम हुई है। हम प्रतिपक्ष की एकता के लिए साफ तौर पर कहना चाहते हैं कि हमारा दल अपनी योग्यता-क्षमता से अधिक कोई आशा-आकांक्षा नहीं रखता और यह विश्वास रखता है कि सभी सहयोगी दल इसी तरह अपनी आकांक्षाओं को सीमित रखेंगे और एकता तथा सहयोग का आधार पैदा करेंगे। लोकदल की यह निश्चित राय है कि सभी लोकतांत्रिक (गैर-कम्युनिस्ट) दलों के विलय से ही वह एका पैदा होगा जो आज की

ऐतिहासिक मांग है। जनता भी यही चाहती है और उस दिन की प्रतीक्षा में आंखें बिछाये बैठी है कि जब हम एक होकर सत्तारूढ़ दल का मुकाबला करेंगे।

लोक दल ने अगर राष्ट्रीय लोकतांत्रिक मोर्चे के ढांचे को स्वीकार किया है तो केवल इसीलिए कि विलय के उसके सारे प्रयत्न विफल रहे और निराशापूर्ण गतिरोध की स्थिति में कोई उम्मीद की सूरत पैदा करनी थी। यह एक प्रकार से दूसरे दर्जे का सर्वोत्तम मार्ग था और इसकी संभावनाएं भी कम नहीं। लोकतांत्रिक मोर्चे के दोनों दलों ने जिस सहयोग, सौहार्द्र तथा विश्वास की भावना से अभी तक काम किया है उससे यह आशा बंधती है कि वह अंतत्तोगत्वा एक मजबूत शक्ति के रूप में उभरेगा। किन्तु साथ-साथ हम यह भी महसूस करते हैं कि जितना हमने अभी तक किया है वह आवश्यक तो था परन्तु पर्याप्त नहीं है।

हम इस मंच से बता देना चाहते हैं कि हमारा इस दिशा में सर्वाधिक प्रयत्न रहा है और आगे भी रहेगा। जब हमारे विरोधी हमारे खिलाफ प्रचार करते हैं तो उसी से साफ झलकता है कि वे अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिए ऐसा करते हैं।

आज हमें इन आरोपों-प्रत्यारोपों से ऊपर उठना होगा। हमारा एक ही लक्ष्य होना चाहिए कि हम देश और लोकतंत्र को कैसे बचायें। अब पानी नाव के किनारे तक पहुंच गया है। व्यवस्था (सिस्टम) दम तोड़ने पर है। चन्द श्रीमन्त लोग समझ रहे हैं कि व्यवस्था ठीक चल रही है क्योंकि आज जिस बेशर्मी से वह व्यवस्था उनके लिए काम कर रही है वैसा कभी नहीं हुआ था। लेकिन अगर हालात बिगड़ते गये तो वे कहां फेंक दिए जाएंगे इसका उन्हें अभी तक एहसास नहीं हुआ है। बाढ़ का पानी जोरों से आ रहा है, उनका छोटा टापू कैसे बचा रहेगा यह वह नहीं समझ रहे हैं। हम उनके बारे में यही कह सकते हैं "खुदा हाफिज"।

जैसी देश की हालत आज है वैसी स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से आज तक कभी नहीं हुई थी। लगता है कि इतिहास के पन्ने से निकल कर मुगल साम्राज्य के आखिरी दिनों की स्थिति आज समाज व शासन में व्याप्त हो रही है। समाज दरहम-बरहम हो रहा है, देश की एकता खतरे में है, देश बालिग होकर फिर नाबालिग हो रहा है, हम जाति-पांति में और अधिक फंसते जा रहे हैं, धर्म के नाम पर राजनीति की जा रही है, कहीं खालिस्तान की आवाज उठ रही है, कहीं धर्म के आधार पर जिलों की सीमाएं बदली जा रही हैं जैसे कि केरल में, कहीं पाकिस्तानी नारे लग रहें हैं, कहीं पाकिस्तानी नागरिक को जुर्म में सजा दी जाये तो हिन्दुस्तानी नागरिक हिन्दुस्तान में विरोध स्वरूप "बन्द" का आयोजन कर रहे हैं, कहीं धर्म के नाम पर संगठित होकर एक तरफ वोट करने का आह्वान हो रहा है और इस तरह धर्म के नाम पर समाज को विभाजित किया जा रहा है, कहीं धर्म-स्थानों में असामाजिक तत्वों को प्रश्रय देकर प्रशिक्षित तथा संगठित किया जा रहा है और धर्म-स्थानों से गोलियां चलायी

जा रही हैं, और धर्म-स्थानों में पूजा करके लौटने वाले की भी धर्म-स्थान के द्वार पर ही हत्या की जा रही है। विदेशी भाषा को अपने पुरखों की भाषा पर तरजीह ही नहीं दी जा रही है बल्कि विदेशी भाषा बोलने वाला अधिक सभ्य व विद्वान समझा जाता है। ऐसा लगता है कि न तो कोई राष्ट्रीय दृष्टिकोण रह गया है और न कोई राष्ट्रीय उद्देश्य ही रह गये हैं। सभी मसले जाति, धर्म, भाषा या क्षेत्र से ही सम्बन्ध रखते हैं। हम या तो जातिवादी हैं या सम्प्रदायवादी, भाषावादी या क्षेत्रवादी, परिवारवादी या व्यक्तिवादी—राष्ट्रवादी कभी नहीं। क्या सपना था हमारा स्वतंत्रता-संग्राम के दिनों में और क्या बना दिया हमने अपने भारतवर्ष को ?

दूर क्यों जाइये, राजधानी दिल्ली को ही देखिये। प्रत्येक 36 घंटे में डकैती हो रही है। एक बार दो दिनों में छः डकैतियां हुईं यानी प्रत्येक आठ घंटे में एक। कोई महिला मामूली गहने के साथ सड़क पर नहीं निकल सकती। न तो लोग घर में सुरक्षित हैं और न बस तथा रेल में। पुलिस कहीं तो निर्दोष लोगों का 'एनकाउण्टर' कर रही है और कहीं खुद हलाक हो रही है। देश की राजधानी में 5000 रु० की रिश्वत दिये बिना कोई कान्सटेबिल नहीं बन सकता। और देश की सेना में कोई जवान नहीं लिया जा सकता जब तक कि वह एक बड़ी रकम अफसरों को भेंट में न दे दे। फिर भी कहते हैं कि सरकार है, प्रशासन है, प्रधान मंत्री है, व्यवस्था है, संसद है, विधान सभायें हैं, वगैरह-वगैरह।

जिस किसी क्षेत्र को देखें, ह्रास, पतन तथा अवनति का आलम है। और सबकी जड़ में हमारा चारित्रिक पतन है। भोग की राजनीति ने समाज के नैतिक पर्यावरण को दूषित कर दिया है और राजनीति जब डूबती है तो अपने साथ बहुत सारी चीजों को डूबो लेती है। आज की गिरावट गिरी हुई राजनीति और गिरे हुए राजनीतिज्ञों का कारनामा है। हम जब तक राजनीति को नहीं उठाते तब तक कहीं कोई सुधार नहीं होने वाला है। हम हाय-हाय करते रहेंगे और हालत बिगड़ती जायेगी। भ्रष्टाचार के नाम पर लोग मर्सिया गाते रहें, इससे क्या होता है ? भ्रष्टाचार बढ़ता ही जायेगा, न रुकेगा, न खत्म होगा। भ्रष्टाचार ऊपर से चलता है और नीचे फैलता जाता है। जब तक हम शिखर पर भ्रष्ट व्यक्तियों को बैठाते रहेंगे तब तक भ्रष्टाचार की बाढ़ से बच नहीं सकते। जब ऊंची जगहों पर रहने वाले असत्य बोलेंगे तो कदाचार, दुराचार, भ्रष्टाचार से रक्षा कैसे होगी ? अन्तुले कांड है, स्वराज पाल कांड हैं, "कूओ" डील है—ये क्या बताते हैं ? यही तो कि भ्रष्टाचार तथा असत्य से अछूते प्रधान मंत्री तथा मुख्य मंत्री भी नहीं रहे। एक जमाना था जब दीप लेकर ढूंढने से प्रशासन में कभी-कभार कोई चोर-बेईमान मिलता था और आज यह हालत है कि दीप लेकर ढूंढने से भी शायद ही कोई ईमानदार या निष्कलंक मिले। बात यहां तक बढ़ गई है कि हमारी प्रधान मंत्री सिर्फ अपने को तथा अपने बेटे को देख रही हैं,

करोड़ों-करोड़ भूखे, नंगों के बेटे-बेटियों को नहीं—जो बेकार होकर, बेघरबार रहकर आजाद हिन्दुस्तान की वेदी पर शहीद हो रहे हैं। कुनबापरस्ती और जनतापरस्ती दोनों एक साथ नहीं चल सकती। जो व्यक्ति केवल अपने बेटे को देखेगा, वह देश के असंख्य बेटे-बेटियों को नहीं देख सकता। यह इतना बड़ा असत्य है जो किसी की आंखों से ओझल नहीं हो सकता। लेकिन लगता है कि हमने अपने लोकतांत्रिक देश की दृष्टि में कोई मोतियाबिन्द पैदा कर दिया है, या मान लिया है कि मोतियाबिन्द हो गया है, प्रधान मंत्री अपने उत्तराधिकारी राजकुमार को राज्य के तंत्र एवं साधनों के सहारे पर्दे पर बखूबी खड़ा कर रही हैं और लोग उसका विरोध नहीं कर रहे हैं। अभी हाल ही में दिल्ली में उसके हाथों 50,000 लोगों को 14-15 करोड़ राशि का कर्ज देना किस बात का द्योतक है? उस अवसर पर रामलीला मैदान जिस प्रकार राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा सजाया गया था उस प्रकार शायद ही कभी सजाया गया हो, और इन बैंकों के कर्मचारियों ने जिस प्रकार राजकुमार के स्वागत में व्यवहार किया वैसा प्रधान मंत्री निवास के घरेलू नौकर भी नहीं कर सकते। समाचार-पत्रों के विवरणों से मालूम हुआ कि यह आयोजन कोई सरकारी आयोजन जैसा नहीं, बल्कि कांग्रेस (इ) के आयोजन जैसा ही दीख रहा था और जो मंत्रिगण, अर्थ मंत्री वगैरह थे, घरेलू नौकर से भी बदतर दीख रहे थे। अब आप बताइये, यह सब क्या हो रहा है? क्या राष्ट्रीयकृत बैंक के पैसे श्रीमती गांधी के परिवार के पैसे हैं? क्या इस सरकारी अवसर का उपयोग किसी दल के फायदे के लिए होना चाहिए? क्या गरीबों के पैसे का दुरुपयोग इस तरह साज-सज्जा में होना चाहिए और क्या इस तरह का वृहद आयोजन गरीबों की गरीबी का क्रूर उपहास नहीं था? और सबसे विचारणीय बात यह है कि क्या इतनी शान-शौकत से गरीबों को नहीं बताया जा रहा था कि उन पर प्रधान मंत्री का बेटा बड़ी कृपा कर रहा है? पैसे गरीबों के और उन पर कृपा उन्हीं के पैसे द्वारा —वाह री! स्वतंत्रता और जनतंत्र।

प्रधानमन्त्री जी शायद समझ रही हैं कि उनका बेटा अब चल गया, लोगों ने उसे स्वीकार कर लिया और उनके वंश का राज्य देश ने सहर्ष मान लिया। इसीलिए तो उन्होंने हाल ही में बड़े गर्व के साथ घोषणा की कि उनका परिवार कोई राज-परिवार तो नहीं लेकिन लोग उसे राज-परिवार जैसा ही सम्मान-सत्कार देते हैं। सम्भवतः प्रधान मन्त्री जी को अपनी चतुरता और कार्य-शैली पर कुछ नाज भी होता हो कि उन्होंने अपने परिपक्व, अनुभवहीन, त्याग-तपस्या से अछूते, कल के सरकारी सेवक और आज के सांसद बेटे को अपनी संस्था में या गैर-रस्मी तौर पर सरकारी मामलों में भी अपने बाद सबसे महत्त्वपूर्ण बना दिया है, और यह उनका रौब है कि राज्यपाल तथा केन्द्रीय मन्त्री, मुख्यमन्त्री और महत्त्वपूर्ण स्थानों पर रहे 70-80 साल के बुड्ढे भी उसका तलवा सहला रहे हैं। लेकिन इससे लोकतांत्रिक व्यवस्था को

कितना आघात पहुंचा है इसे आम जनता को नहीं भुलना चाहिए, हम लोगों ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राजा-महाराजाओं के निज़ाम को खत्म करके जो संसदीय लोकतन्त्र की स्थापना की थी, उसकी परिणति क्या इसी पारिवारिक राज में होनी थी ? सरदार पटेल ने सैकड़ों आनुवंशिक राज्यों को समाप्त करके देश को एकता के सूत्र में बांधा था और उन्हें लोकतन्त्र के सांचे में ढाला था। आज एक वंश का राज देश के लोकतन्त्र को बरबाद करने पर तुला हुआ है, और यह वह चुनौती है जिसको विशेष-कर यहां के नौजवानों को स्वीकार करना है।

हमारा दल गरीबों का दल है, चाहे वे गरीब गांव के हों या शहर के, चाहे वे उच्च जाति के हों या पिछड़ी जाति के या अनुसूचित जाति के। हमारा दल किसानों और दस्तकारों का दल है, चाहे वे किसी धर्म या सम्प्रदाय के हों, चाहे वे खेत रखने वाले स्वामी हों या खेत जोतने वाले मजदूर हों। किन्तु चूंकि गरीबों में सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से ज्यादा संख्या पददलित एवं पिछड़ों की है इसलिए हमारे दल को लोग पिछड़ों का दल कहकर अन्य समुदायों या वर्गों को हमसे अलग करना चाहते हैं। कुछ हद तक पिछले दिनों वे इस प्रयासों में सफल भी रहे हैं। गलत ढंग से हमारी नीतियों को रखना ही प्रमुख रूप से इसका कारण रहा है। हमें संतोष है कि इस सम्बन्ध में बहुत कुछ भ्रम दूर हुआ है और दूसरे वर्ग के लोग भी हमारी तरफ आकृष्ट होने लगे हैं। इस प्रक्रिया को हमें बढ़ाना है और शोषक तथा उत्पीड़क को छोड़कर सभी वर्गों, जातियों, धर्मों के लोगों को लोकदल में लाना है और लोकदल की छवि को संकीर्णता के आरोप से बचाना है जिसे दूसरे विरोधी पानी पी-पीकर लगा रहे हैं।

हम जाति-व्यवस्था के खिलाफ हैं और जातियता को समाज का, देश का, लोक-तन्त्र का सबसे बड़ा दुश्मन मानते हैं। जातीयता का अर्थ है सर्वनाश—अर्थात चरित्र, योग्यता, क्षमता कोई मायने नहीं रखती। अपनी जाति का जो भी है, जैसा भी है, वह सर्वोत्तम है। जन्मगत जाति-पांति ने हिन्दू धर्म का सत्यानाश किया और आज वह लोकतन्त्र के लिए सबसे बड़ा खतरा बन रही है। हमारे मुसलमान भाइयों में भी शिया-सुन्नी के झगड़े, जो मज़हबी क्षेत्र तक ही सीमित थे आज श्रीमती गांधी तथा उनके दल द्वारा राजनीति में लाये जा रहे हैं, जिसका नग्न नृत्य हाल के काश्मीर के चुनाव में देखने को मिला।

हमारे दल पर यह भी आरोप लगाया जाता है कि हम शहर वालों के शत्रु हैं, खेती के हक में तो हैं लेकिन उद्योग के खिलाफ हैं और अगर उद्योग के हक में हैं भी तो कुटीर उद्योग या छोटे उद्योग के हक में हैं, लेकिन बड़े उद्योगों के विरोधी हैं।

ये सभी प्रचार या तो अज्ञानता में ईमानदारी से किये जाते हैं या क्षुद्र राज-नीति से प्रेरित मनोयोगपूर्वक बेईमानी से।

हमने बार-बार कहा है कि हम मूक गरीबों की वाणी बनना चाहते हैं, चाहे वे गांव की झोंपड़ी के गरीब हों या शहरों में झोंपड़पट्टी के या बड़े-बड़े महलों के साये में खुले आसमान के नीचे रात-दिन जाड़ा-गर्मी-बरसात गुजारने वाले हों।

जैसे-जैसे यह वाणी लोकदल द्वारा प्रखर एवं मुखर हो रही थी हमारे विरोधियों ने आतंक में विभाजन की नीति से दुष्प्रचार करना शुरू किया। इसी में शहरों को हमारे कार्यक्षेत्र के दायरे से बाहर बताया जाता है। परन्तु एक अर्थ में गांव एवं शहर के गरीबों का परिवार एक है। गांव के गरीब ही रोजी-रोटी की तलाश में शहर जाते हैं। इसलिए लोक दल उनको दो श्रेणियों या जातियों में विभक्त नहीं करता है। हमारे लिए गरीबी का एक रूप मूलतः एक है—बेकारी तथा कम मजदूरी वाला काम, घोर असमानता जो शोषण के आधार पर बढ़ती है, और कायम है। दरअसल गांव की समस्या का सैलाब शहरों की ओर बढ़ रहा है और वर्तमान नीतियां ही चलती रहीं तो देश को डूबो कर रहेगा।

हमें आश्चर्य होता है कि कोई प्रधान मन्त्री बढ़ती बेकारी के आंकड़ों को नजरअंदाज कर सुख की नींद कैसे सो सकता है या सो सकती है, जहां हमारे बच्चे कुत्तों के मुंह से रोटी छीनकर जिन्दा रहते हों, या रोटी मांगते हुए अपनी मां से तमाचे पाते हों, **एशियाड, नेम, चोगम** जैसे आयोजनों में अरबों रुपये लगाकर अपनी छवि का मेकअप किया जाये—क्या वहां की प्रधान मन्त्री व उसके सहयोगी और ऐसे शासन को बर्दाश्त करने वाली कौम मनुष्य और राष्ट्र कहलाने लायक हैं?

हम खेलों के खिलाफ नहीं, खेल के मैदान में ही तो अधिकतर बच्चों के शरीर तथा चरित्र का निर्माण होता है, लेकिन हम खेलों के आयोजनों में साधन के इस प्रकार दुरुपयोग के खिलाफ हैं, जिसको दिल्ली ने आज से डेढ़ साल पहले देखा था। एशियाड पर 1500-2000 करोड़ रूपये का खर्च इस गरीब देश में किया जाए जहां 66 प्रतिशत जनता गरीबी की रेखा के नीचे रहकर अपना जीवन-यापन करती है, कल्पना के बाहर है। इस राशि से हजारों सिंचाई के नलकूप लग सकते थे, अनेक नहरें बन सकती थीं, हजारों स्कूल और अस्पताल खुल सकते थे लेकिन हमारे दल ने जब सबसे पहले इसके बारे में आवाज उठाई तो कई लोग इसे हमारा पिछड़ापन बताकर आलोचना करने लगे। परन्तु हमको संतोष है कि हमारा समर्थन बाद में दूसरे दलों तथा महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों ने भी किया।

इसी तरह हम अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के आयोजनों के खिलाफ नहीं लेकिन उन पर फिजूलखर्ची के खिलाफ अवश्य हैं।

निस्संदेह भारत को अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी है, लेकिन गरिमा या महत्त्व तो शान-शौकत में नहीं, सादगी में है। महात्मा गांधी तो राउण्ड टेबिल कान्फ्रेन्स में एक गरीब के लिबास में गये थे और वायसराय के भवन

में खाने के लिए उस बर्तन को ले गये थे जिसमें उनको जेल में खाना दिया जाता था, और वही सादगी और उसके मूल्य हैं जो हमारे मुल्क को वह चरित्र दे सकें जिससे हम स्वतन्त्रता प्राप्त करने में समर्थ हुए। मगर निर्गुट सम्मेलन तथा राष्ट्रमण्डलीय सम्मेलन पर जो दिल्ली विज्ञान भवन की साज-सज्जा हुई या गोआ के प्रवास में जो रुपये खर्च हुए उन पर लोग गहराई में जाकर विचार नहीं करते। एशियाड में कुछ ही महीने पहले तो दिल्ली या विज्ञान भवन पर इतना सारा खर्च हो चुका था, फिर निर्गुट या राष्ट्रमण्डलीय सम्मेलनों पर इतनी राशि खर्चने की क्या जरूरत पड़ी ? और गोआ में एक दिन के अवकाश-प्रवास के लिए जो 45 करोड़ रुपया खर्च किया गया क्या उससे कम मेहमानों को पसन्द नहीं आता ? और फिर आज जो देश के ऐश्वर्यवान लोग उन साधनों का उपयोग करके अपनी वासना-तृप्ति कर रहे हैं, उससे क्या सांस्कृतिक पर्यावरण दूषित नहीं हो रहा है ? और क्या गरीब ऐसे साधनों का उपयोग कर पायेंगे ? हम गोआ का भी विकास चाहते हैं, जो हमारे पिछड़े इलाकों से कहीं आगे है। लेकिन यह रास्ता गोआ के स्वस्थ विकास का नहीं है। यही राशि अगर दूसरे प्रकार से लगती तो गोआ-वाले ज्यादा सुखी-सम्पन्न होते। क्या हमारी प्रधानमन्त्री व उनके सहयोगियों का ध्यान कभी हमारी जनता की अवर्णनीय गरीबी की ओर जाता है और इस कारण उनकी नींद हराम होती है ?

लेकिन विधि का विडम्बना देखिये कि हमारे ये विचार तथा सिद्धान्त जो प्रशंसा के विषय बनने चाहिए थे, हमारी तीव्र आलोचना के लक्ष्य बन गये हैं। चाहे जो हो, हम अपने इन विचारों को कुछ सुविधा-भोगी तत्त्वों के दबाव में आ कर बदल नहीं सकते और न उनके सम्बन्ध में किसी प्रकार का समझौता ही कर सकते हैं। यह असह्य गरीबी राष्ट्रीय सादगी से जायेगी, शान-शौकत या विलासिता से नहीं, कठोर नियोजन तथा कार्यक्रम से ही जायेगी, चिकनी-चुपड़ी बातों से नहीं, इसलिए हमें अपने विचारों पर कायम रहना है।

अब मैं आता हूं उस आरोप पर कि हम उद्योगों, खास तौर से बड़े उद्योगों के खिलाफ हैं और खेती के पीछे दीवाने हो रहे हैं। मुझे दया आती है उन लोगों पर जो खेती और उद्योग को अलग-अलग दो श्रेणियों में रखते हैं और दोनों के अविच्छिन्न सम्बन्ध को नहीं देखते। हमारे देश में अच्छी खेती के अभाव में किसी प्रकार के भी उद्योग नहीं हो सकते, अपेक्षित औद्योगिक विकास नहीं हो सकता, न तो उद्योगों को कच्चा माल मिल सकता है और न उद्योगों के माल की खरीद ही हो सकती है। हमारे विगत अनुभव बताते हैं कि जब भी हमारी खेती मारी गई है हमारे उद्योग भी मृतप्राय हो गये हैं। इसलिए खेती पर बल देना विस्तृत औद्योगीकरण के लिए सबल आधार निर्माण करना है जिससे खेती में लगे लोगों की अधिकांश तादाद उद्योगों में लग जाये। बार-बार दोहराने पर भी हमारे आलोचक इसको नजरअंदाज करते हैं

कि हम खेती पर जनसंख्या के बोझ को बहुत कम करना चाहते हैं और खेती में लगे लोगों को ज्यादा से ज्यादा संख्या में उद्योग में लगाना चाहते हैं। लेकिन यह तभी सम्भव होगा जब औद्योगीकरण की प्रक्रिया तेज होगी और यह प्रक्रिया तभी तेज होगी जब फी बीघे खेती की पैदावार बढ़ेगी, जिससे उद्योगों के लिए कच्चा माल मिलेगा, उद्योगों में काम करने वालों को भोजन प्राप्त होगा और खेती करने वाले लोगों की जेबों में क्रय-शक्ति अथवा रुपया आयेगा जिससे वह उद्योगों द्वारा पैदा की वस्तुओं और अन्य सेवाओं की खरीद और उपयोग कर सकेंगे।

अगर कुछ गिने-चुने पूंजीपति ही हर प्रकार के उद्योग के वाहक एवं संचालक होंगे तो जन-समुदाय इससे बाहर तथा वंचित रहेगा और गरीबी ज्यादा गहरी, व्यापक और उग्र होती जायेगी। हम औद्योगीकरण की प्रक्रिया को लोकतन्त्रीकरण या विकेन्द्रीकरण करना चाहते हैं ताकि यह कुछ श्रीमन्त लोगों का दुर्ग बनकर न रह जाये। हम आधुनिकता के दुश्मन नहीं, और न आधुनिकता के किसी की भी अपेक्षा कम हामी हैं। हमारा दावा है कि हमारा दल ही, विचार ही समाज का आधुनिकीकरण कर पायेगा। आज जो आधुनिकीकरण का सिलसिला चल रहा है वह "एलिट" (Elite) अर्थात् समाज के कुछ गिने-चुने लोगों के लिए है जिनके पास राजनीतिक सत्व है, वह इस गरीब देश के जन-समुदाय के लिए नहीं। वही औद्योगीकरण समाज के आधुनिकीकरण का माध्यम बन सकेगा जो जन-समुदाय अथवा व्यक्ति या कारीगर की स्वतन्त्रता पर आधारित हो।

इस सम्बन्ध में हमारे सुनियोजित विचार एवं कार्यक्रम हैं लेकिन उन्हें देखता कौन है, हमारे आलोचकों को तो अपने पूर्वाग्रह पर हमें गालियां देने से मतलब है। हमने साफ तौर पर कहा है कि औद्योगीकरण का स्वरूप ऐसा हो कि जो कार्य कुटीर उद्योग अथवा छोटी मशीन कर सकें उसको बड़े उद्योग न करें। इसमें कहां बड़े उद्योगों के बहिष्कार की बात आती है? इसमें सभी प्रकार के उद्योगों का यथोचित स्थान है, सबों में एक शृंखला तथा सम्बन्ध है, एक-दूसरे के पूरक एवं पोषक हैं, भक्षक नहीं। फिर भी तरह-तरह के कपोल-कल्पित अभियोग हम पर लगाए जाते हैं।

हम इसी अधिवेशन में अपने आर्थिक-दर्शन की रूपरेखा पर विस्तृत विचार करेंगे, यही हमारा मुख्य विषय होगा। मसविदा जरा बड़ा दिखायी पड़ेगा लेकिन उससे हिचकने की जरूरत नहीं। हमें अपने दिमाग में अपने आर्थिक विचारों के बारे में साफ और दृढ़ होना है इसलिए विवरणों में जाने की जरूरत है। लेकिन चाहे हम जितना भी सिर मारें और अपने विचारों को चाहे जितना भी वैज्ञानिक एवं तर्कपूर्ण ढंग से रखें, कुछ लोग हमें गालियां देते ही रहेंगे। किन्तु इसकी चिन्ता हमें नहीं करनी है।

यह एक अजीबोगरीब बात है कि प्रतिपक्ष के अधिकांश लोग बिना वैकल्पिक

दर्शन एवं विचार के राष्ट्रीय विकल्प बनाने का सपना देख रहे हैं। राष्ट्रीय विकल्प का सही अर्थ है—सत्तारूढ दल के दर्शन, विचार, कार्यक्रम एवं कार्यशैली का विकल्प। जब तक यह नहीं निर्मित होता तब तक हम आत्मा के बिना शरीर की कल्पना में लगे हैं। यह कहना शायद अतिशयोक्ति नहीं होगी कि लोकतांत्रिक दलों में लोक दल ने वैचारिक विकल्प प्रस्तुत करने की दिशा में सर्वाधिक प्रयत्न किया है।

चाहे हमारी अर्थनीति की कुछ लोग समालोचना भले ही करें, वे उसकी अवहेलना नहीं कर सकते। और न उसकी जगह पर दूसरा विकल्प प्रस्तुत कर सकते हैं। पहलवान की मां की तरह दांव बताना एक बात है, किन्तु अखाड़े पर उतरना दूसरी बात है।

हम यह नहीं कहते कि सत्तारूढ़ दल की सभी नीतियों का हमें विकल्प तैयार करना है। राष्ट्रीय सर्वानुमति के आधार पर जो नीतियां हैं—दुर्भाग्यवश वे अब नगण्य होती जा रही हैं—उनमें हमारा सहयोग रहेगा। सत्तारूढ़ दल दायें हाथ से खाये तो हम जबरन बायें हाथ से खायें, यह हमारी नीति नहीं।

इसीलिए वैदेशिक मामलों में हम उन्हीं बातों का विरोध करते हैं जो राष्ट्र की स्वीकृत नीतियों के विरुद्ध होती हैं।

मिसाल के तौर पर हम गुट-निरपेक्ष नीति में दृढ़ आस्था रखते हैं और उसमें किसी तरह के तोड़-मरोड़ के विरोधी हैं, जो उसमें विकृति पैदा करती है। हम दो सुपरपावर (महाशक्तियों) अमेरिका तथा रूस के साथ सम्बन्धों को गुटनिरपेक्षता तथा राष्ट्रीय हितों की कसौटी पर कसते हैं और किसी का पुंछल्ला बनने के विरोधी हैं। सोवियत रूस ने कई महत्त्वपूर्ण मामलों एवं क्षेत्रों में हमारी सहायता की है और हम उसके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखने के पक्षधर हैं। किन्तु हम अपने देश के आन्तरिक मामलों में उसके हस्तक्षेप के विरोधी हैं जो यदाकदा यहां की राजनीति एवं राजनीतिक दलों पर टिप्पणियों के रूप में सरकारी स्रोतों में प्रदर्शित होता रहता है, और संभवत: अन्य रूप भी धारण करता है। इसीलिए हमने प्रधान मंत्री जी के उस प्रार्थना-पत्र की तीव्र आलोचना की थी जो उन्होंने रूस के अध्यक्ष स्वर्गीय श्री आंद्रोपोव को कम्युनिस्ट पार्टी के वरिष्ठ नेता श्री योगेन्द्र शर्मा के द्वारा भेजा था, और जिसके द्वारा वे यहां के राजनीतिक ध्रुवीकरण को रूस की सहायता से प्रभावित कराना चाहती थीं। यह कदम देशहित तथा प्रधानमंत्री के पद की गरिमा के विरुद्ध था और इससे हमारा सिर अन्तर्राष्ट्रीय जगत में नीचा हुआ।

हमारी अन्तर्राष्ट्रीय नीति की गुटनिरपेक्षता इससे भी प्रमाणित होती है कि जहां हमने रूस के अफगानिस्तान में आक्रमण का विरोध सत्ता में रहते हुए किया वहां हमने सत्ता से बाहर रहकर ग्रेनेडा में अमेरिकी आक्रमण का भी उसी प्रकार डटकर विरोध किया। अमेरिका की पाकिस्तान सम्बन्धी नीति के, जिससे पाकिस्तान

की सामरिक तैयारियां बढ़कर हमारे लिए खतरा बन गयी हैं। हम प्रबल विरोधी हैं। उसी तरह डिगो गार्सिया में अमेरिकी सैनिक अड्डे के हम विरोधी हैं जिससे हिन्द महासागर के शान्तिक्षेत्र बनने में बाधा हो रही है और भारत के लिए चिन्ता का विषय बन रहा है। लेकिन साथ-साथ हम इससे भी अवगत व चिन्तित हैं कि रूस तथा अन्य बड़ी शक्तियों की गतिविधियां भी हिन्द महासागर में चल रही हैं जो किसी प्रकार वांछनीय नहीं। निस्संदेह दक्षिण एशिया तथा भारत के लिए यह चिन्ता का विषय है कि दोनों महाशक्तियों की खतरनाक उपस्थिति आज उसके बहुत करीब है।

हम अन्य अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर एक अलग प्रस्ताव पर विचार करेंगे, इस लिए हम इस संदर्भ में इस अवसर पर ज्यादा कहना नहीं चाहते।

अन्त में देश की दो बड़ी समस्याओं के बारे में अपनी चिन्ता व्यक्त करना चाहूंगा जिन्हें सत्तारूढ़ दल अपने क्षुद्र स्वार्थों के कारण हल करना नहीं चाहता। पंजाब की समस्या सत्तारूढ़ दल की ही कारस्तानी है। उसने ही 1980 के चुनावों में आदिवासियों एवं असामाजिक तत्त्वों से सहायता ली थी जो आज पंजाब को बर्बरता का क्षेत्र बनाये हुए हैं। अकाली दल वालों ने यह भी आरोप लगाया है कि खालिस्तान की मांग का सूत्रपात कांग्रेस (इ) के स्थानीय दफ्तर से हुआ था लेकिन आज तक इसका अधिकृत रूप से खण्डन नहीं हुआ है। अभी हाल ही में पंजाब समस्या के समाधान के लिए त्रि-पक्षीय वार्त्ता हुई लेकिन उसी दौरान वहां की स्थिति और खराब हो गयी। हिन्दू सुरक्षा समिति के अध्यक्ष श्री पवन कुमार शर्मा को सरकार ने राष्ट्रीय सुरक्षा कानून के अन्तर्गत गिरफ्तार कर लिया और उनकी रिहाई की ऐसी शर्तें रखी जिन पर आसानी से विश्वास नहीं किया जा सकता। एक शर्त यह कि वह पटियाला सदैव के लिए छोड़ दें, दूसरी यह कि हिन्दू सुरक्षा समिति भंग कर दी जाये, तीसरी यह कि महाशिवरात्रि 29 जनवरी को न मनायी जाये और चौथी यह कि प्रभात फेरी बन्द हो जाये। इसके बाद "बन्द" का आह्वान हुआ और प्रतिरोध के कारण स्थिति गंभीर हुई और वार्त्ता स्थगित कर देनी पड़ी। बाद में पुलिस तथा स्वर्ण मंदिर के अन्दर रहने वालों के बीच पांच घंटे तक गोलियां चलीं। अब अकालियों ने कहा है कि स्थगित वार्ता जो चार-पाँच दिनों के बाद, फिर शुरू होने वाली थी, वह नहीं होगी। इसलिए राजनीतिक गतिरोध रहेगा और यही हिंसा एवं बर्बरता का दौर जारी रहेगा जैसा कि पानीपत और हरियाणा के कुछ अन्य स्थानों में हुआ है। हमको हरियाणा में जो कुछ हुआ है उसके पीछे भी पंजाब की तरह से सत्तारूढ़ दल का हाथ दिखाई देता है, पंजाब में राष्ट्रपति शासन और हरियाणा में अपनी ही सरकार होते हुए सत्तारूढ़ दल परिस्थिति पर काबू नहीं पा रहा है और जनता त्राहि-त्राहि कर रही है। हमने इसीलिए केन्द्रीय सरकार से कहा है कि वह या तो सख्ती से शासन करे या इस्तीफा दे। आखिर अराजकता का राज पंजाब में कब तक रहेगा और

अतिवादी एवं असामाजिक तत्वों की नरसंहार की लीला कब तक चलेगी ! लोगों की आम धारणा है कि वहां कि गड़बड़ियों में सत्तारूढ़ दल का निहित स्वार्थ है और वह साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण पर तुली हुई है ।

मैंने शुरू से इन प्रवृत्तियों का विरोध किया और बदले में कड़ीं धमकियां पायीं । हम गांधीजी की परम्परा में पले हैं और उन्हीं के सिद्धांतों पर चलने के लिए संकल्पबद्ध हैं । हमारे मतभेद कितने भी गहरे हों, इस अहिंसा तथा शान्ति के मार्ग को नहीं छोड़ सकते । हममें उन धमकियों के कारण कोई दुर्भाव या कटुता नहीं आयी है और हम शान्तिपूर्वक अपनी बातें कहते ही जायेंगे जो हम पंजाब के समाज के लिए तथा देशहित में ठीक समझते हैं ।

असम की स्थिति में भी कोई सुधार नहीं हुआ है और चाहे सरकार की तरफ से जो भी प्रयत्न किये जायें वहां की राज्य सरकार को, जो एक खूनी, बर्बर, गैर-कानूनी एवं असंवैधानिक चुनाव की औलाद है, लोग वैध तथा कानूनी नहीं मानेंगे । सरकार किस प्रकार संवैधानिक दायित्वों को सम्पादित करने में अक्षम है यह इसी से जाहिर हो जाता है कि वह 1971 की मतदाता-सूची के आधार पर उसके पुर्ननिरीक्षण करने में चुनाव आयोग को योगदान देने में असमर्थ है । ऐसी सरकार के कायम रहने का क्या औचित्य है । इस पर संविधान-वेत्ताओं को गंभीरता से विचार करना चाहिए । हम इस पर भी जोर देना चाहते हैं कि जब तक असम के व्यक्तित्व की रक्षा नहीं होगी, जब तक असमियों को विश्वास नहीं होगा कि उनकी भाषा, संस्कृति एवं परम्परा अक्षुण्ण रहेगी तब तक असम की स्थिति विस्फोटक रहेगी । आज की सतही शान्ति से यह नहीं मान लेना चाहिए कि स्थिति काबू में हो गयी है । बल्कि मेरा अनुमान है कि सरकार की क्षुद्र-दलीय भावना के कारण पहले की अपेक्षा आज स्थिति ज्यादा संगीन एवं विस्फोटक हो गई है ।

देश की यह तस्वीर अत्यन्त दुखद है । लोकदल तथा राष्ट्रीय लोकतांत्रिक मोर्चे को इसको बदलने के लिए दृढ़ संकल्प करना है । हमारा यह अधिवेशन अपने निर्णयों से इस संकल्प को मूर्तरूप देगा, ऐसा मेरा विश्वास है ।

जय हिन्द !